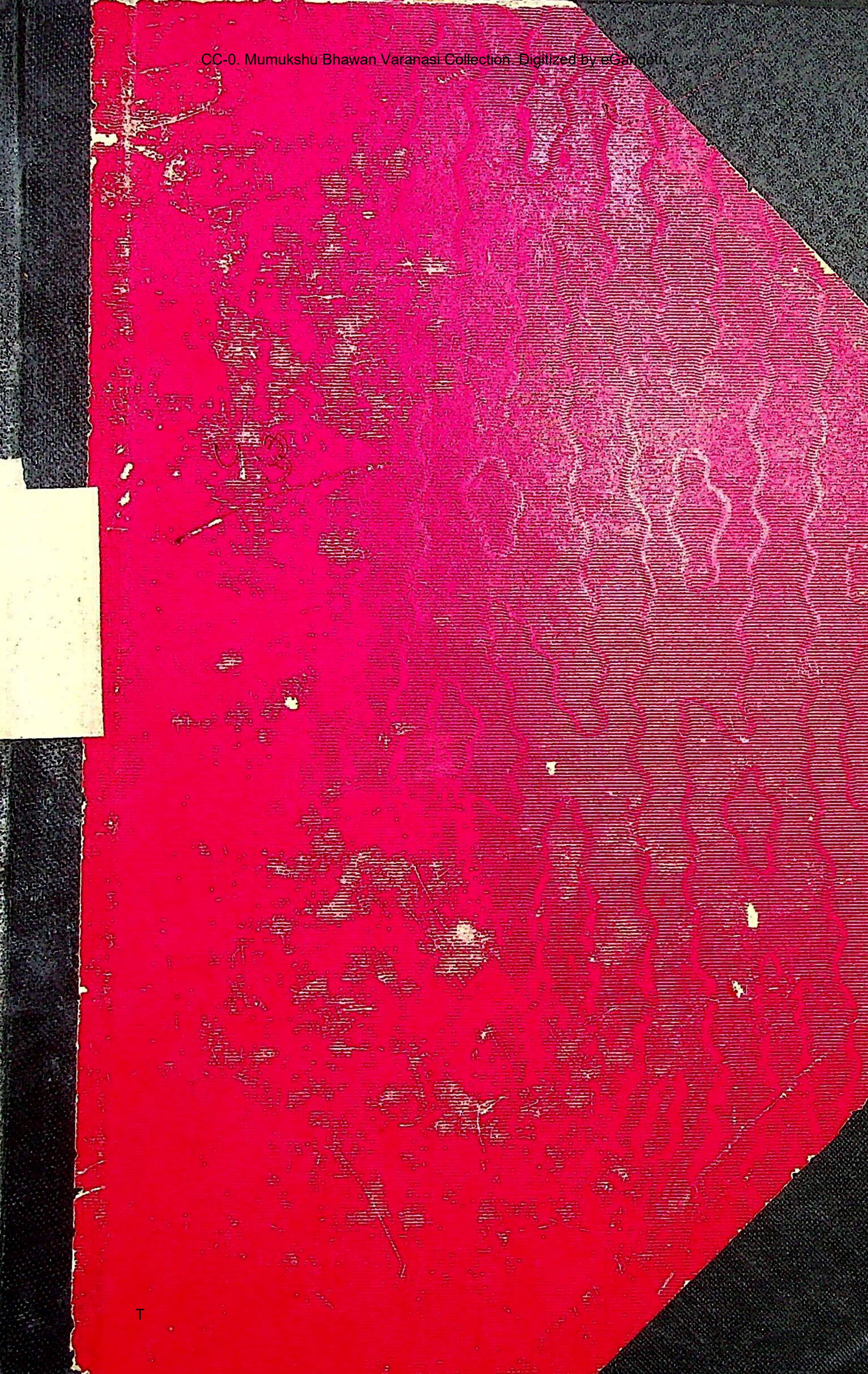




श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ

तृतीय खण्ड

जिसमें

मृदुभाव सहित

सप्तम, अष्टम, नवम स्कंध

की कथा वर्णित है

रचयिता

श्री पं० माधवराम "व्यास"

प्रकाशक

आयुर्वेदाचार्य पं० रामचन्द्र अवस्थी वैद्यशास्त्री

धर्म शा० आ०

श्रीरामकृष्ण औषधालय, तथा विद्यालय

इटावाबाजार, कानपुर ।

प्रथमावृत्ति १००० प्रति | सं० १९८४ वि० | मूल्य प्रति पु० २)

विश्वम्भरनाथ टण्डन के प्रबन्ध से ईस्टर्न प्रेस कानपुर में मुद्रित



श्रीगणेशायनमः



अथ सप्तम स्कंध सूचीपत्र

अथ अष्टम स्कंध का सूचीपत्र

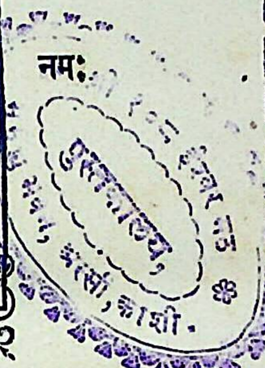
अथ नवम स्कंध सूचीपत्र।

T

इति सूचीपत्र समाप्त

T

श्रीरामाय  नमः



फतेहपुर निवासी श्रीमान् लाला वेणीरामजी के पौत्र श्रीमान् लाला मुखरामजी के पुत्र श्रीमान् लाला मूंगराजजी की धर्मपत्नी श्री भिहानी नगर निवासी अग्रवाल वंशोत्पन्न श्रीमान् लाला वेगराजजी के पुत्र श्रीमान् लाला हरद्वारीमलजीकी कन्या श्रीमान् लाला वद्रीदासजी की वहन

श्रीमती पन्नीबाई

ने

श्रीरामचन्द्रजी के पदकमल में पूर्ण प्रीति हेतु

सप्तम स्कन्ध तथा उपाङ्ग बांटने में धन से सहायता दी

श्रीमतीजी के भाई लाला वद्रीदासजी संत-द्विज-सेवी तथा उदार प्रकृति हैं।
श्रीआनन्देश्वरजी के मन्दिर में संगमरमर का फर्श, धर्मशाला, विचित्र घाट आप के यश को वढ़ा रहे हैं।
घाट पर भजन करनेवालों की आप के द्वारा अन्नसेवा होती है।
आपही की उत्तेजना से श्रीमतीजी ने सहायता प्रदान की है।

मरचेंट प्रेस,—कानपुर।

* श्रीगणेशायनमः *





श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्य निधौ।
सप्तम् स्कँधे प्रथमोऽध्यायः॥

श्लो०—तत्रतु प्रथमेऽध्याये हिरण्यकशिपोः सुते।
विष्ण भक्त विरोधस्तु विप्रशापज्ञ ईर्यते॥१॥

दो०—भक्त पक्ष कर असुर हनि, नृसिंह पद शिरनाय।
पहिले में वर्णन करैं, भक्त चरित हरषाय॥

रा०उ०-जीवों के सम प्रिय सुहृद हरी, किमि इन्द्र हेत दैत्यन मारैं।१।
नहिं हरि की प्रीति देवतों से, दैत्यों से नाहिं बैर धारैं॥२॥
कल्यान रूप निर्गुण हरि हैं, गुण धारे केवल माया से।
संदेह असुर क्यों हरि मारैं, सब दूर करो मुनि दाया से॥३॥

श्रीशु-उ०अच्छा पूंछा हरि चरितभूप हरि महात्म सुनि भक्ती आवै४
मुनि नारदादि हरिगुन गावैं, कहते हम हरि पद शिरनावैं।५।
निर्गुण अज मायापर तिनमें, माया से यह सब देखिपरैं।६।
माया के गुण सतरज तम हैं, नहिं हरि में घट बढ़ कबहु धरैं।७।

दो०—सतगुन बढ़े देवमुनि, रजसे असुर प्रधान।
यक्षराक्षस तमहि से, होत सदा बलवान॥८॥

छं०—वह आदि ज्योति सबथल प्रकाश, तनमें हैं लख आवत नाहीं।
आत्मा को आतम में मथन किये, ज्ञानी जन ही पावत नाहीं॥६॥

T

हरि सृष्टि रचैं की इच्छा धरि, अपने में रजो गुण धारत हैं।
पालन हित सत्वगुनहु धारैं, अपने तन धरि औतारत हैं ॥१०॥
गति कालसे विधि ह्वै सृष्टि करैं, ह्व हरि सात्विक बनि प्रति पालैं।
सुर प्रिय असुरहु जैतमोयुक्त, धरि रूप अनेकन प्रभु घालैं ॥११॥
पूंछा नृप धर्म युधिष्ठिर जब नारद ने उन्हें सुनाया है।
शिशुपाल की ज्योती हरितन मिल, लखकेनृप विस्मय पाया है।१२

दो०—राजसूय शुभ यज्ञमें, प्रश्न युधिष्ठिर कीन ॥ १३ ॥
सुनहिं सकल मुनि वृन्द तहं नारद उत्तर दीन ॥१४॥

छं०यु-उ०नहिं भक्तलहैं यह अचरजहै, शिशुपाल कृष्णसे गतिपाई १५
सब को जानैकी इच्छा है, करि निंदा बेन नरक जाई ॥ १६॥
शिशुपालने हरिको गालीदीं, दुर्बुद्ध दंत बक्रहु तैसे। १७।
नहिं जीभ गिरी नहिं नर्कगये, हरि ब्रह्म मिलगये यह कैसे ॥१८॥
दुष्प्राप विष्नु तनमें प्रविशे, सबके देखत अचरज भारी। १९।
ज्यों दीर्घायु से हो चंचल, मनभूमैं देहु संशय टारी ॥२०॥

शु०उ०—नारद सुनि बैन युधिष्ठिरके ह्वै प्रसन्न कहते कथा सुनो।
कहने का मतलब ठीक ठीक, अपने हिय में बहुबार गुनो ॥ २१ ॥

ना०उ० दो०—निंदा स्तुति लखैको, हरि माया तन कीन।
हे राजन अज्ञान से, दुख सुख मानुष लीन ॥२२॥

छं०—हिंसा कटु बचन कढै मुखसे, मैं मेरा धारि जीव मारैं। २३।
इसमें वंधि मूढ जीव मारहिं, इंद्रीजित ज्ञानी समधारैं ॥ २४ ॥
तिससे भय बैर काम प्रीती, जिस तिस बिधि पद मन हरिमें लगै।२५
नहिं भक्तिसे तैसी मति थिरहो, जस बैरसे भगवत माहिंपगै ॥२६॥

डरिकै भृङ्गी होजाय कीट, त्यों क्रोध से विष्णु रूप पावै ।२७।
इस भाँति कृष्ण से बैर किये, शिशुपाल भाय दोउ तरिजावैं॥२८॥
भय काम वैर सनेह करिके, हरिमें मन धरि वहु जीव तरे ।२६।
शिशुपालादिक करि बैर, गोपिका काम कंस भयसे उबरे ॥ ३०॥

दो०—ध्यान हीन नृप बेनथा, याते नरक सिधाव ।
चहिये कौनहु भाँति से, मन हरि पदहि लगाव ॥३१॥

छं०—मौसी के बेटा दंत वक्र शिशुपाल, युधिष्ठर हैं तेरे ।
हरि पार्षद आये जन्म लिया, बैकुंठ से बिप्र शाप प्रेरे ॥ ३२॥

यु०उ०-किसभांति जन्महरि भक्तोंका, दिलमें श्रद्धानहिं आवै है ।३३
तन हीन विष्नु पार्षद तनलैं, तुम विन मुनिको समझावै है ॥३४॥

ना०उ०-सनकादिक बिधिके पुत्र गये, बैकुंठ सदासब थलबिचरैं ३५
हैं वृद्ध उमर पाँचही बर्ष, नंगे लखि पार्षद रोक करैं ॥३६॥
मुनि दिया शाप ह्यां से निकलो, रजतमो गुणी हरिपद न लहै।
आसुरी योनि राक्षस होवौ, हरि भक्त बने दिल क्रोध दहै ॥३७॥
सुनि शाप दया हरि ने कोनी, लड़ि तीन जन्म लौं हरि पावैं।३८।
हिरनाकश्यप औ हिरएयाक्ष, दिति दैत्य पुत्र दो उपजावैं॥ ३६ ॥

दो०—नृसिंह जी हिरनाकशिपु, मारा अद्भुत रूप ।
हिरएयाक्ष महि लावते, धरि बाराह सरूप ॥ ४० ॥

छं०—प्रहलाद पुत्र के मारन हित, नाना प्रकार से दंड दिये । ४१ ।
समदर्शीशांत बिष्नु रक्षहिं, नहिं मारि सके खुद मृत्यु लिये ॥४२॥
रावण औ कुंभकर्ण दोऊ, केशनीमातु से दुखदाई । ४३ ।

मुनि मारकंड कहैं रामायण, तिनके गति दाता रघुराई ॥४४॥
सोई मौसीके पुत्र शापसे छुटि, हरि चक्रसे गति पाई । ४५ ।
करि बैर विष्णुमय मन करिके, पार्षद बनिगे हरि पुरजाई ॥४६॥

दो॰ यु॰ उ॰—हरि जन सुत में वैर पितु, कीन कहैं समुझाय।
प्रभुमय जसप्रहलादभे, मुनिसब कहियें गाय।४७।

भजन—हरी इक मनकी लगन निहार ।
वैर प्रीति कारण नहिं देखत, मनरुख लखैं बिचार ॥
करै दिखाव भक्ति बहुतेरी, समझत ताहिं बिगार ।
वैरहु करै रात दिन सुमरै, हिय में मारन धार ॥
लै अवतार तासु हित भगवत, मारि करैं उद्धार ।
माधवराम दयाल दया धरि, करैं निकामहि पार ॥

इति श्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ सप्तमस्कंधे प्रथमोऽध्याय

॥ श्रीगणेशायनमः ॥

श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ सप्तम स्कंधे द्वितीयोऽध्यायः ॥

श्लोक—द्वितीये विष्णुरोषेण लोकं विप्लाव्य दानवैः ।
तद्धतभातृपुत्रादीनितिहासै रसांत्वयत् ॥१॥

दो॰—विष्णु रोष करि असुर हनि, दानव दिये भगाय ।
समझावै सुत मातु वह, दूसर यह अध्याय ॥

छं॰ना॰उ॰-बाराहनेहिरण्याक्षमारा, तबहिरणकशिपुनेदुःखलिया।१
करि कोप होठ को चाभि, भयो हग लाल गगन जो भस्म किया।।२

भौं हैं टेढ़ी लखि जाय न मुख, लै त्रिशूल सबसे बचन कहै ।।३।।
शतबाहु नमुचि हय ग्रीव पाक, सुनिलो तुमसे हम कहा चहैं ।।४।।
शकुनादिक बिप्रा चित्तिसबहीं, सुनि बचन हिये धरि यत्नकरो ।।५।।
भाई मरवाया देवों ने, हरि सम बशि करिकै विषम भरो ।।६।।
भाया बनचर ह्वै स्वभाव तजि, भजतेको भजै थिरमति नाहीं ।।७।।
हनि शूल मारि हरि रक्तहिं से, करौं भाय तृप्त मैं रण माहीं ।।८।।

दो०—कपटी हरि मरि जाय जो, सब सुर होवैं नाश ।
मूल कटे तरु नाश हो, यह दृढ़ राखौ आश ।।९।।

छं०-बिप्रन के तपबल दानयज्ञ, जल्दी जाकर सब नाशकरौ ।।१०।।
विष्णू की जड़ द्विज यज्ञ धर्म, सुर पितृ श्राद्ध मख भाग हरौ ।।११।।
हो ज़हां विप्र गौ वेद क्रिया, वर्णाश्रम धर्म देश जारौ ।।१२।।
स्वामीकी आज्ञा शीशधारि, करि लिया प्रजा बध निरि धारौ ।।१३।।
पुर ग्राम खेर खर्वट गिरि बन, उप बन घर खेत जलाते हैं ।।१४।।
गोपुर पुल खोदि जीविका हरि, कोई पादप कटवाते हैं ।।१५।।
यों किया उपद्रव दैत्य वृंद, सुर भगे छिपे पृथ्वी तलमें ।।१६।।
भाईकी क्रियाकरि हिरणाकशिपु, घरमें समझावै हलचलमें ।।१७।।

दो०—शकुनी शम्बर धृष्ट वृक, काल नाभ संताप ।
महा नाभ उत्कच सबहिं, धीरज देवै आप ।।१८।।

छं०-है रुषा भानु तिनि की माता, निजमा दिति समीप बैठारे ।
समयानुसार समझावै हित, वानी धीरज धरि उचारे ।।१९।।
हिर०-उ०-हे भाई की बहू पुत्र, मत धीर भाइ का सोचकरो ।
रण सन्मुख बीरों का मरना, यश दायक है संतोष धरो ।।२०।।

T

निज कर्म भागसे जीवमिलैं, फिर अलग होंय जिमि राहगीर ॥२१॥
आत्मा है शुद्ध सर्व व्यापी, निज रूप धरै गुणसे भव पीर ॥२२॥
जिमि नाव चलै तरु चल दीखै, बालक भूमि घर घूमै कहते ॥२३॥
यों गुणसे मन सुख दुख तैसे, है जीव शुद्ध तहु दुख लहते ॥२४॥
नहिं कुछ तहं सब कुछ करै भाव, भागहिं से योग बियोग लहै ॥२५॥
उत्पत्ति नाश शोकहु चिंता, अज्ञान ज्ञान कर्महिं से कहै ॥२६॥

दो०—मृतक बंधु गण यमहु को, यामें शुभ संवाद ।
कहत एक इतिहास हम, सुनतै मिटै विषाद ॥२७॥

छं०-नृप सुयज्ञ रणमें रिपुसे मरे, घर वाले दुखित तिन्हैं घेरे ॥२८॥
फट गया कवच खुल गये बाल, शर विधे अंग हिय तेहि केर ॥२९॥
पकड़े हैं क्रोध से होठ परे, ज्यों मलिन कमल मुख भुजा कटे ॥३०॥
रानी नृपकी गति देखि दुखी, रोवैं हिय पीटै प्रजहु डटे ॥३१॥
पति चरण गहे रोवैं रानी कज्जल मिल आंसू धार बहै ॥
नहिं देह ख्याल खुलबाल बिकल वहदशा दुःखकी कौनकहै ॥३२॥
निर्दय ब्रह्माने करि वियोग, नृप देश पाल हरि दुःख दिया ॥३३॥
तुम बिन हम कैसे जियैं नारि, संग चलैं जहां पति गमन किया ॥३४॥

दो०—मृत पति गहि रोवै त्रिया, नहिं समझैं भै सांझ ॥३५॥
बालक बनि यम रुदन सुनि, रोवहिं तिनके मांझ ॥३६॥

छं०-य०-उ०-पूं छेसे कहैं यहरंजहमैं, तुम बड़ी मोह फसियों रोवो ॥
जहं से आया तहं गया जीव, निज कर्म साथ मनसे टोवो ॥३७॥
पितु मातु छुटै,हैं हमैं धन्य, हे अबला हम नहिं सोच करैं ॥
नहिं जीव सिंह कोइ खाय हमैं, हरि गर्भ में रक्षत धीर धरैं ॥३८॥

मग गिरी वस्तु मिल भाग से फिर, घर धरी भाग बिन नहिं पावै ॥
बनमें अनाथ को रक्षहिं हरि, नहिं रक्षित हरि घर मर जावै ॥३९॥
सब जीव कर्म करते जैसे, वह समय पाय तस फल देवे ॥
माया में स्थित आत्मा यह, नहिं बंधै कहीं यह गुनि लेवे ॥४०॥

दो०—यह नर तन है मोह से, ज्यों गृह सबको होय ॥४१॥
बुल्ला घट भूषण सदृश, नाशै पल में सोय ॥४२॥

छं०-ज्यों अग्नि काठ से अलग देह, में बायु पृथक सो देखि परै ॥
सम अकाश सबमें एकहिसा, त्यों परमात्मा हिय माहिं धरै ॥४३॥
जेहि रोवो तन सौवै सुयज्ञ, आत्मा साची नहिं दिख लावै ॥४४॥
उसही के तेज से सुनै चलै, तनसे न्यारा श्रुति मुनि गावै ॥४५॥
निज तेज से इन्द्री तन चेतन, अभिमान से तन मय हो जावै ॥४६॥
जब तक तनमय तबहीं लौ कर्म, तिनसे दुखमाया फंसि पावै ॥४७॥
झूठा अभिमान से अर्थ लखै, सोवत में झूठे स्वप्न तकै ॥४८॥
नहिंनित्यअनित्य विचारकरै, निजस्वभावउलटाकरिनसकै ॥४९॥

दो०—रह्यो बहेलिया बनहिं में, बन पक्षिन को काल ।
लालच में फंसि जाय खग, बड़ा बिछाया जाल ॥५०॥

छं०-जोड़ा कुलिंग पक्षीकालखि, लालचदेंमादी आयफंसी ॥५१॥
यह दशा देखिनर रुदन करै, करि मोह दुखी मति मोहगंसी ॥५२॥
हे निर्दय दैव वियोग किया, मैदीन नारि बिन क्या जीना ॥५३॥
हे देव मुझे भी ले जावो, क्या उमर से है अब तिय हीना ॥५४॥
विन पंख के बालक कैसे जियें, माता को परखे हत भागी ॥५५॥

T

यह देखि वहलिया वार मार, वह मरा गिरा महि शर लागी ।।५६।।
नहिं आत्म गती सब लखैं आप, रोवो सौ वर्ष न पति आवै ।।५७।।

हि-रु-सुनिबालबचनसबबिस्मितभे,लखिआत्मागतिधीरजलावैं।५८।
यह कहि यम अंतर ध्यान भये, घरवालों ने नृप क्रिया करी ।।५६।।
इससे मत सोचो आत्मा यह, आपन बिरान नहिं ज्ञान धरी ।।६०।।

ना०उ०-दो०—माता सुतकी बात सुनि, बहू पुत्र भे धीर।
तत्व समुझि मन थिर भयो, गई मोह की पीर ।।६१।।

भजन-मोह महिमा अति ही बलवान।
कवि पंडित सुर मुनि ज्ञानी जन, हरत सबै को ज्ञान ।।
आत्मा अलग देह से नित है, फंसो लह्यो बंधान।
कीन मोह बनमें इक पक्षी, मरो खायकै बान ।।
माधो राम श्याम भजलो नित, मोह हरैं भगवान।

।। इति श्री० भा० भा० सप्तम स्कंधे द्वितीयोऽध्यायः ।।

* श्रीगणेशायनमः *

श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्य निधौ।
सप्तम् स्कंधे तृतीयोऽध्यायः ।।

।। श्लो०—तृतीये तस्य तपसा तप्तं वीक्ष्य जगद्विधिः।
आगत्य विस्मितस्तेन संस्तुतश्च वरानदात् ।।१।।

दो०—तपसे तीनहु लोक तपि, लखि विधि कीन बिचार।
तिसरे में वर दान दै, गये लोक करतार ।।

छं,नाउ करि हिरणकशिपु अपनेको अजर, औअमर जगतमेंराजचहै
गिरि मंदरमें तप ठान दिया, नभदृष्टि अँगूठा महिमें रहै ॥२॥
ज्यों प्रलय सूर्य की किरन जटा, तब सुर अपना थल पावै हैं ॥३॥
कुछ ही दिनमें शिरसे अग्नी, निकली तय लोक तपावै हैं ॥४॥
नदिसिंधुक्षोभसबमहीहिलै, दशदिशिमें ग्रहसब ज्वलितभये ॥५॥
तपि उठे देव विधि लोक गये, विनवौं दुख अपने नये नये ॥६॥
दैत्येन्द्र के तपसे रहि न सकैं, होंलोक नाश प्रभु शांत करो ॥७॥
तप करने में संकल्प कीन, नहिं सुने आप क्या चितमें धरो ॥८॥

दो०--तप बल योग समाधि कर, ब्रह्मा जग रचि दीन।
सबसे ऊपर जाय कै, आपहि आसन लीन ॥९॥

छं०-हैं नित्यकाल आत्मातपिकै, आत्मामें तेज बढ़ावैंगे ॥१०॥
विधि की रचना सब उलटी करि, क्या इन सबसे दिखलावैंगे ॥११॥
यह हठ करि उसने तप ठाना, जो ह चित गुनौ सो आप करो ॥१२॥
जग क्षेम हेत द्विज गो रक्षा, सुर बिजय हेत हिय आप धरो ॥१३॥
सुनि देवों से मुनि संग लिये, जहं दैत्य तपै तहं विधि आये ॥१४॥
तन खाय गई चीटी माटा, जमि घास फूस नहिं लखि पाये ॥१५॥
तपसे सब लोक तपावै वह, बादल में छिपे रबि सबै दहे।
हंसिहंसचढ़े विधि विस्मयलहि, लखिकैतिहसे अस बचनकहे ॥१६॥

ब्र०उ०दो०-उठो दैत्य पति सिद्धि तप, बरलो हम बरदीन॥ १७॥
प्राण अस्थि महं तन खायो, तब धीरज लखि लीन ॥१८॥

छं०-नहिं किया करै तप अस कोई, सुरकेशत वर्षरहे बिनजल॥१९॥
बश किया हमें तुमने तपसे, मुनि दुर्लभ तप ठाना निश्चल ॥२०॥

सब बर पूरण कर देहुं तुम्हें, जो जो मन में होवें तेरे।
हम देवों का दर्शन न विफल, लहैं सुभाग से दर्शन मेरे ॥२१॥

ना-उ०-यहकहिकरविधिनेजललेकर,जोदिव्यप्रबलछिड़काउसपर२२
तुर्तहिं तन सबल स्वर्ण द्युतसा, ज्योंअग्निबांससे कटाअसुर ॥२३॥
देखा ब्रह्मा को हंस चढ़े, मन हर्ष भूमि पर नमन किया ॥२४॥
गद् २ सुहर्षसे हांथ जोड़ि, दर्शन करि बिनय प्रबाह लिया ॥२५॥

हि०-क०-उ०-दो०-अंधकार कल्पांत में, करि निज तेज प्रकाश।
जग कर्ता प्रभु कौन सो, पूरण कीजै आश ॥२६॥

छं०-धरि तीन रूप उत्पति पालन, जग नाशकरौ सतरज तमसे।२७।
विज्ञान ज्ञान मूरति है नमो, मन प्राण लिये तन उत्तम से ॥२८॥
चर अचर जीवके मालिक हो, हो प्राण मुख्य अरु प्रजा पती।
चितके चित इन्द्रिन में मन हो, पति पंच तत्व हरते बिपती ॥२९॥
सब यज्ञ तुम्हीं हयमेधादिक, तन बेद त्रयी धरि आते हैं।
सब आत्माओं के अंतर हू, बाहर रहि तिन्है जिवाते हैं ॥३०॥
तुम काल रूप छन वर्ष मास, सबही की आयू हरते हो।
कूटस्थ आत्मा परमेश्वर, सब जीव में आत्मा धरते हो ॥३१॥

दो०-जीव चराचर जगत सब, तुमसे बाहर नाहिं।
त्रिगुण रूप ब्रह्मांड जग, विद्या सब हिय माहिं ॥३२॥

छं०-स्थूल रूप यह आप का है, मन इन्द्री प्राण भोग करते।
पर पुरुष पुराण आत्मा हो, परमेष्ठी पद थिर ह्वै धरते ॥३३॥
हे अनंत जगमें रहो व्याप्त, हे नमो सुचेतन शक्ति धरे ॥३४॥
बरदान देत जो आप मुझे, तब सृष्टि रची से हम न मरें ॥३५॥

बाहर भीतर जिंदा मुर्दा, नर पशु महि अकाश में न मरौं ॥३६॥
सुर असुर चराचर जीव, सबै, नहिं मारैं स्वामी पनहु धरौं ॥३७॥

दो०—लोक पाल की रिद्धि सब, मिलैं होंय नहिं छीन।
नहिं प्रताप कबहूं घटै, होउं न पर आधीन ॥

भजन-कठिन तप हिरनाकश्यप कीन।
देवन के सौ वर्ष तप्यो वह, निर्जल व्रत सो लीन ॥
निकर तेज देवता विकल भे, मनसों बहुत मलीन।
ब्रह्मा सुनि बाहन चढ़ि आये, मन इच्छित बरदीन ॥
माधवराम देखलो प्यारे सब कर तब आधीन।

इति श्रीमद्भागवते भाषा सरसकाव्यनिधौ सप्तमस्कंधे तृतीयोऽध्याय

॥ श्रीगणेशायनमः ॥

श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ सप्तम स्कंधे चतुर्थोऽध्यायः ॥

श्लोक—चतुर्थे तु वरांल्लब्ध्वा विजित्याखिल लोकपान्।
विष्णुद्वेषेण तान्सर्वान् दैत्येन्द्रः समपीडयत् ॥१॥

दो०—चौथे में बर पायकै, लिये लोक पति जीति।
विष्णु बैर से सुरन की, कीनी बड़ी फजीति ॥

छं०-ना-उ०-इस भांति हिरणकश्यप वरकी, ब्रह्मा जीसे याचना करी।
तपसे प्रसन्न दुर्लभ सबहैं, बर देने हित निजि बुद्धि धरी ॥१॥

ब्रह्मो०-हे तात यदपि यह दुर्लभ बर, तौभा सब हों कह देते हैं ॥२॥
सुन कर उसने बहु अस्तुति की, विधि घरकी रस्ता लेते हैं ॥३॥

बरपाय स्वर्ण तन चला असुर, हरि बैर किया भाई को सुमिरि ॥४॥
सब दिशा लोक लोकप जीते, नर गरुड़ सुरासुर पति किन्नर ॥५॥
मनु पितर सिद्ध चारण पिशाच, यक्षहु राक्षस सब भूत पती ॥६॥
सब बिश्वजीत औ लोकपाल, स्थान छीन दीनी बिपती ॥७॥

दो०—देव बगीचा इन्द्रपुर, इन्द्र भवन करि बास ।
त्रिलोक लक्ष्मी बश किये, दैत्यन देत सुपास ॥८॥

छं०-मरकत महि मूंगा की सीढ़ी, खंभा वैडूर्य फटिक रचना ॥९॥
मणि मय वितानहैं सुखद सेज, नहिं होय वस्तु बांकी कुछना ।१०।
अप्सरा नृत्य करती जहं पर थल रतन जड़ित में मुंह निरखै ॥११॥
बसि इन्द्रभवन जगजयी असुर, शासनकर सुरपद नमित लखै ।१२।
मदमत्त लाल दृग आसन थिर, सब लोक पती आ शिर नावैं ।
लापते बिष्णु हर इला वृतहिं, ब्रह्मा गुरु तीनहिं बचि जावैं ॥१३॥
स्थान छीन लिये देवों के, गंधर्व नारदादिक गावैं ।
मुनि स्तुति विद्या धरहु करै, अप्सरा सिद्ध सेवा लावैं ॥१४॥

दो०—वर्णाश्रम कृत यज्ञ बहु, लेत सबहिं को भाग ॥१५॥
बिन बोये महि अन्नदे, गगन बिचित्र त्रिभाग ॥१६॥

छं०-गिरिखान रतनकी आप देत, दधिदूधदही घृत मधुमृदुजल ।१७।
सब थलमें सब विधिके पादप, हर समय देहिं नित मीठे फल ॥१८॥
इस भांति जीति जग सुख भोगै; अजितेन्द्री नहिं संतोष धरै ॥१९॥
मद मत्त शास्त्र बिधि त्याग दई, द्विज शाप यही विधि पूर करै ।२०।
उससे घबड़ाकर देव मुनी, नहिं और देखि हरि शरण गये ॥२१॥
प्रत्यक्षन लखिसो दिशा नमहिं, जहं हरि २ भक्तहु बसत भये ॥२२॥

जित आत्मा थिरमति नींद तजे, बायू खाये सुर बिनय करैं ॥२३॥
भै गगन गिरा विनती सुनिकै, भय हरन शब्द सब ठौर भरै ॥२४॥

दो०—देव भय तजौ होय शुभ, मम दर्शन हित कारि ॥२५॥
असुर दुशत्मापन लख्यो, करिहौं शांति विचारि ॥२६॥

छं०-जब देव वेद गौ विप्र साधु, हरि धर्म बैर करि मरै जचै ॥२७॥
निज शांत पुत्र प्रहलाद दंड, दे वै तब मारौं नाहिं बचै ॥२८॥

ना०-उ०-यह सुनिसुर सबैप्रणाम करैं, घबराहट गैखल मरोगुनै ।२६।
सुत चारि तासु प्रहलाद छोट गुण में महान गुनि संत भनै ॥३०॥
ब्रह्मराय शील धर सत प्रतिज्ञ, इन्द्रीजित ज्ञानी प्रिय कारी ॥३१॥
नित नवहिं दास सम दीन वछल, सम बयस में भाई पन धारी ।
निज बड़े को ईश्वर सम मानै, नहिं मान रूप विद्यादि धरै ॥३२॥
चित सावधान नहिं शौखचाह, इन्द्री जित शांत काम बिचरै ।३३।

दो०—सब गुण उत्तम आ बसे, प्रहलादहिं के माहिं ।
जस हरि में तस भक्त में, कबि नहिं वर्णि सकाहिं ।३४।

छं०-जिसकी गाथा ते बहु गावैं, हैं शत्रु कहूं क्या औरन की ।३५।
सबगुण निवास हरि जन ऐसे, जिसकीगिनती शिर मौरनकी ।३६।
हरिपूजहिंके नित खेल करैं, जग लखै न जड़ सम प्रभु में मन ।३७।
खाते पीते चलते फिरते, नहिं होश जिसे कर हरि सुमिरन ॥३८॥
प्रभु चिंता में कहिं रुदन करै, कहुं हंसै खुशी है यश गावै ॥३६॥
हरि भाव युक्त तन्मय ह्वै कर, तजि लाज नाचि कहुं चिल्लावै ।४०।
तजि विषय मगन मन चुप बैठे, नहिं सांस लेहिं दोउ बंद नैन ।४१।
सत संग किये हरि भक्तिपाय, तजिकुसंग समतालही चैन ।४२।

T

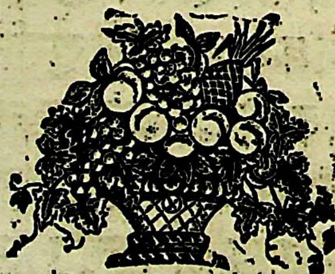
दो०—परम भागवत भाग धर, पुत्र जासु प्रहलाद ।
हिरण्यकश्यप दंड दै, कीन्हों महा विषाद ॥४३॥

छं०-यु०-उ०-हे देव ऋषी नारद तुमसे, यह चरित सुनै की इच्छा है।
जो पिता पुत्रसों पाप कियो, क्यों नहिं दीनी शुभ शिक्षा है ॥४४॥
पितु होंय पुत्र वत्सल सब के, जो सुत कुछ उलटा कर्म करैं ।
शिक्षा के हेत धमकाते हैं, नहिं मारन के हित क्रोध धरैं ॥४५॥
पितृ गुरु मानैं जे देव तुल्य, बस हीं में रहैं आज्ञा कारी ।
यह संशय मेरे चितमें है, मुनि दूर करो हम बलि हारी ॥

दो०—पिता पुत्र का बैर अस, जामें पितु मर जाय ।
मुनि वर जानौ सब चरित, हमैं कहौ समझाय ॥४६॥

भजन-भक्त की महिमा सब गुन खानि ।
शांतदांत इन्द्रीजित सीधे, नहिं राखैं मनमान ॥
तस प्रहलाद भक्त सुत नृपके, हृदय भक्ति युत ज्ञान ।
नाचै गावैं बढ़ै प्रेम हिय, तृण सम लखै जहान ॥
कबहु भाव भरि उलटी बातैं, कहिलें मौन विधान ।
सबको लखै भाइ सम अपना, हियमें नाहिं गुमान ॥
माधवराम भक्त अस हरिके, सदा करैं गुन गान ॥

॥ इति श्री० भा० भा० सप्तम स्कंधे चतुर्थोऽध्यायः ॥



* श्रीगणेशायनमः *

श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्य निधौ ।
सप्तम् स्कंधे पंचमोऽध्यायः ॥

श्लो०–पंचमे गुरुतोऽधीतं त्यक्त्वा विष्णुस्तुतौ रतम् ।
घातयन् द्विपसर्पाद्यै· सुतं दैत्यो नचाशकत् ॥१॥

दो०–गुरू पढ़ायो त्याग करि, हरि स्तुति मन लीन ।
पंचये में बहु दंड तेहि, हिरण्यकश्यप दीन ॥

छं०-ना०-उ० हैं दैत्य पुरोहित शुक्राचार्य, हैं शंडामर्क पुत्रतिनके ।१।
प्रहलाद औरहू दैत्य पुत्र, पढ़ बिद्या पास जांय जिनके ॥२॥
जो गुरू पढ़ावैं सुनै पढ़ैं, मनसे सब झूंठी मानै हैं ॥३॥
इकबार दैत्य पति गोदी लै, प्रहलाद से पढ़ना जानै हैं ॥४॥

प्र०-उ०-जे सदा बिकल मतितनु धारी, पितुअंधकूप गृहगिरब तजैं।
हमरे मत से बन जाय शीघ्र,हरि हिय धरि हरिको नित्य भजैं ॥५॥

ना०-उ०-सुनि शत्रु पक्ष के पुत्रबचन, देखो रिपु बालक मति फोरैं ।६।
गुरु सावधान ह्वै शिक्षा दो, छिपि हरि पक्षी न पुत्र तोरैं ॥७॥

दो०–लै आये प्रहलाद को, गुरु निज शाला माहिं ।
साम दाम बहु युक्ति से, पूंछत हैं तिन पाहिं ॥८॥

छं०-प्रहलाद सत्य कहो झूंठ नहीं, तुम बालक किसने मति फेरी ।९।
दूसरेने की या आपहि से, हम सुनै कहो न करो देरी ॥१०॥

प्र०-उ०-जिसकी माया से निज पर भ्रम, मोहित बुद्धी वाले मानै ।

है नमस्कार परमेश्वर को, गुरुऔर कछू हम नहिं जानै ॥११॥
मैं और मोरही यह नर है, पशु बुद्धिन की मति भेद करै।
जब होय दया नारायण की, तबहीं अज्ञान हिये से टरै ॥१२॥
आत्मा में निज पर मंद बुद्धि, वाले ही निरूपण करते हैं।
ब्रह्मादिक माया में मोहे, मति भेद सोइ प्रभु धरते हैं ॥१३॥

दो०—चुंबक संग लोहा भ्रमै, गुरु जी लेहु बिचार।
हरि इच्छा से बुद्धि मम, करै भ्रमित करतार ॥१४॥

छं-ना-उ०-यहकहिप्रहलादमौनधारी, गुनिकैगुरुनेबड़कोपकिया १५
लावो तो बेंत मैं करौं ठीक, चंदन बन कांटा जन्म लिया ॥१६॥
हरि नाशैं असुर मूल नितहीं, तिनहूं की मूल यह पुत्र भया ॥१७॥
डर वावै बहुत उपाय कीन, प्रहलाद पढ़ावैं पाठ नया ॥१८॥
गुरु समझे अब कुछ ठीक भया, माता से पुत्रको सजवाया।
सतकार हो मेरा यह गुनिकै, झट लाय पिता को दिख लाया ॥१९॥

दो०—सुत प्रणाम कीनो पितहिं, गोदी लीन उठाय।
मस्तक सूंघा प्यार करि, मनमें अति सुख पाय ॥२०॥

छं-हि०रु०-हे भूप युधिष्ठिर वह पूंछै, क्या पढ़ा पुत्र दो हमें सुनाय २१
हो चिरंजीव धीरज से पढ़ो, सुनिकै हमार मन अति हरषाय ॥२२॥

प्र०-उ०-सुननाकहना सुमिरनसेवा, अर्चन बंदनहरिकी नितही।
लै दास सखा को भाव हिये, करि आत्म समर्पण ताहि सही ॥२३॥
यह नवधा भक्ती हरिकी है, हम यही पढ़ा चहिये करना ॥२४॥
सुनि पुत्रवचन पितुक्रोध किया, गुरुसुतसे कहैयहक्या पढ़ना ॥२५॥
क्या इसे पढ़ाया शत्रु पक्ष, जो असार मुझे निरादर कर ॥२६॥

कपटी असाधु तुमसे हैं बहुत, पापी के रोग ज्यों हो तन पर ॥२७॥

गु०-पु०-उ०-दो०-सुतहिं पढ़ाया हम नहीं, औरहु सीखन दीन।
मति यहकी स्वाभावकी, हमपर क्रोध न कीन ।२८

छं०-ना०-उ०-गुरु पुत्र कहैं डरकर ऐसे, सुनि डांटि पुत्रसे पिता कहै।
गुरसे नहि पाई यह विद्या, किसने मति फेरी सुना चहैं ॥२६॥

प्र०-उ०-आपहिसे औरहु के सिखये, जोबुद्धि कृष्णपद नहिंलाये।
नहिं इन्द्री जित वे नर्क जाहिं, चर्वित चर्व न मरि मरि जाये ।३०
सच्चा हितकारी हरि न गुनै, हैं दुष्ट चित्त तन अभिमानी।
माया की डोर में बधैं मूढ़, चल अंधहि अंध गहे पानी ॥३१॥
तबलौं मति हरि पद नाहिं लगै, जबलौं अनर्थ में अर्थ गुनै।
संतों की पद रज नहिं सेई, तब लगि विषयों हित शीश धुनै ।३२

दो०—पितहिं कह्यो प्रहलाद अस, सुनतै गुरसा लाय।
क्रोध अंध फेका सुतहिं, पर्‍यो मही पर जाय ॥३३॥

छं०-करि लाल नैन भरि क्रोध कहैं, मारो इसको मत देर करो ॥३४॥
है रिपु मेरा सुत ह्वै जन्मा, यह हरि से वै है शत्रु खरो ॥३५॥
हरिही का भला इससे होगा, यह बच्चा प्रेम न पितु लेवे ॥३६॥
पर पुत्र करै हित ज्यों औषध, निज पुत्र रोग सम दुख देवे।
काटै सो अंग जहं रोग होय, बांकी सुखसे जीवन पावै ॥३७॥
सब उपाय करि मारो इसको, सुत बना शत्रु नहिं बचि जावै ।३८।
लै त्रिशूल आज्ञा पाय असुर, बड़ दंत बाल तन कारे हैं ॥३६॥
गर्जहिं मारौ काटौ कहिकै, बैठे प्रहलादहिं मारे हैं ॥४०॥

दो०—परब्रह्म भगवान में, लीन चित्त प्रहलाद ।
मार पीट कीन्हीं बहुत, लह्यो न तनक विषाद ॥४१॥

छं०-लखि बिफल यत्न शंका कीनी, मारन के हित बहु यत्न करै ४२
कुच लावै दिग्गजसे न मरै फिर, पुरश्चरण की बिधिहु धरै ॥
माया बंधन विषदे लंघन, जल वायु वर्फ से दुख दीने ॥४३॥
पर्वत से गिरायो नहीं मरा, तब तो मनमें संशय लीने ॥४४
कटु कहा बहुत मारा इसको, निज तेज से बचिके हरिहिं भजै॥४५॥
ज्यों श्वान पुच्छ नहिं हो सीधी, तैसे यह हरि को नाहिं तजै ॥४६॥
यह कोई देवता है निर्भय, क्या अमर इसी से मौत मिलै ॥४७॥
चिंतामें बिकल लखि शंडा मर्क समझाते जिसमें नहिं दहलै ॥४८॥

दो०—लिये जीति सब लोक पति, रहैं सदा आधीन ।
बालक के गुण दोष पै, कस अस चिंता कोन ॥४९॥

छं०-इसे बांध के राखौ फासों से, डरके कहिं भाग नहीं जावै ।
आयू सत संग से बुद्धि बढ़ै, गुरु शुक्राचार्य तबलौं आवै ।५०
अच्छा गुरु पुत्रों से कहता, राजों के धर्म उपदेश करो ॥५१॥
वह धर्म अर्थ उपदेश करैं, प्रहलाद से कहते चित में धरो।५२
संसारी शिक्षा गुरु से पाय, नहिं तिल भर चितमें लाते हैं।५३
यजमान कार्य में गुरु जावैं, तब बालक सबी बुलाते हैं ॥५४॥
प्रहलाद बुलाय कहैं हंसिकै, मृदु बानी से समझाते हैं ॥५५॥
निर्मल बुद्धी सब बाल वृन्द, खेलब तजि चित्त लगाते हैं।५६

दो०—बालक बैठे धाय के, प्रहलादहिं ढिग आय ।
समझावहिं दाया धरे, सुनै सबै चित लाय ॥५७॥

भजन-सत्य का तेज है भारी, आत्म बल को बढ़ावै हैं।
जबरदस्ती करै कोई, कभी नहिं पार पावै है ॥५८॥
समझ लीजै सचाई से, बढ़ै नित आत्मा का बल।
ये छल बल दल की तरकीबैं, धुआंसी उड़ती जावै हैं ॥१॥
गही प्रहलाद सचाई, सहारा एक ईश्वर का।
असुर दल मार के हारे, न तिल भर चोंट आवै हैं ।२।
निबल कम उम्र लघु बालक, बुद्धि में है बड़ा सबसे।
सहारा राम का लेकर, विजय डंका बजावै है ॥
युधिष्ठिर हर तरह कमज़ोर, कमलापति गहे कर हैं।
बीरबर मार सब रनमें, राज गद्दी दिलावै हैं।
भजन में ये असर प्यारे, आज़मालो ज़रा करके ॥
इसी से नित्य माधवराम, हरिगुण गान गावै है।

इति श्रीमद्भागवते भाषा सरसकाव्यनिधौ सप्तमस्कंधे पंचमोऽध्यायः

॥ श्रीगणेशायनमः ॥

श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ सप्तम स्कंधे षष्टोऽध्यायः ॥

श्लोक-षष्टे गुरौ गृहव्यग्रे प्रह्लादो दैत्य बालकात्।
अनुकंप्य परं तत्वं नारदोक्तमुपादिशत् ॥१॥

दो०-गुरु लागे गृह काज में, सिखवैं सुत प्रहलाद।
छठयें में वर्णन करैं, नृप नारद संबाद ॥

प्र०-उ०-लड़िकाई से करै बिष्णु धर्म, सो बुद्धिमान फल नाहि चहैं
यह दुर्लभ देह मनुज पाई, क्षण भंग तहूं गति देति अहैं ॥१॥

हरि पद सेवा सबसे उत्तम, हरिही आत्मा के प्रियकारी ॥२॥
सबको सुख मिलता बिन चाहे, ज्यों दुःख पावते बड़ भारी ॥३॥
तिसमें नहिं मिहनत करै कभी, जिसमें सब उमर बृथा जावै ।
सबसे बढ़िके यह बहु हानी, गोबिंद चरण भी नहिं पावै ॥४॥
जगमें पड़ि सुख जिससे होवै, तनु छुटै न जबलौं यतन करै ।
सौ वर्ष आयु मानुष की है, आधी निद्रा में पूर परै ॥५॥

दो०—मूठ बालपन में गई, वर्ष वीष लो मान ॥६॥
बीस बुढ़ापा में गुजर, शिथिल भई सब शान ॥७॥

छं०-जहं बीस जवानी काम मोह, घर में फंसि ममता में जोरै ।८।
अजितेंद्री घर में फंसो जीव, नहिं बल जो अपने को छोरै ॥९॥
धन तृष्णा प्राण दै मोल लेत, भय बड़े तहूं नहिं त्यागै हैं ।
राजा औ चोर घरके गाहक, धन छीने को नित लागै हैं ॥१०॥
कैसे प्रिय नारी छूटि सकै, हंसि बोलति देखनि मनहारी ।
लघु बालक कल बल बचन कहैं, मानै मनमें अति सुखकारी ।११।
सुत कन्या मातु पिता भाई, गृह सेवक पशु धन आदि लहै ।१२।
नहिं तृप्त चाह बढ़ि मिलें बिषय, बहुगुनै न हियै विराग गहै ।१३।

दो०—कुटुम्ब पोषत वयसगै, कियो नहित मतवार ।
तापित तीनहु तापसे, आत्मा लहै न सार ॥१४॥

छं० पर धनहारी के दोष कहैं, पर धन आपहु नित हरते हैं ।
अजितेन्द्री नहिं कामना शांति, मरि नर्क मिलै नहिं डरते हैं ।१५।
नर पालि कुटुंब न गति पावैं, निज पर से भिन्न मति तममें पड़े ।१६।
यह जीव न आत्मा छोरि सकै, नारी के बंदर मद जकड़े ॥१७॥

हे बालक दैत्यहु संग तजो, लो मुक्ति हरीपद कंज गहो ।१८।
प्रभु प्रसन्न हों नहिं मिहनत है, अपने समान सबही को चहो ।१६।
गुणकी समता चितमें लाये, आत्मा परमात्मा हो जावै ॥२०॥
ब्यापक बिकल्पना रहित अलख, धरि रूप देखने में आवै॥२१॥

दो०—केवल अनुभव रूप हरि, निज ऐश्वर्य छिपाय ।
सृष्टी माहिं सरूप धरि, माया मयी दिखाय ॥२२॥

छं०-तजि असुर भाव दाया धारो, हरि प्रसन्न हों मित्रता लहे ।२३।
प्रभु प्रसन्न तो कुछ दुर्लभ नहिं, धर्मार्थ काम गति जन न चहे ।२४।
धर्मार्थ काम आत्महु विद्या, कर्महू कांड दम नीति सकल ।
हरि भजै जीव तबहीं सचहै, विन प्रभु के होगा महा बिकल ।२५।
नारायण नारद को दीन्हा, यह दुर्लभ ज्ञान सुनो प्यारे ।
एकांतिक पद रज जे सेवैं, ते भक्त यही दिलमें धारे ॥२६॥
विज्ञान सहित यह ज्ञान भक्ति, नारद से हमने पाया है ।
यह सुनके दैत्य पुत्र सबने अपने, चित संशय लाया है ॥२७॥

दो०—यह गुरु तजि नहिं और गुरु, हम तुम पाये कोय ।२८।
संत संग कैसे मिला, कहिये धीरज होय ॥२६॥

भजन-करैं प्रहलाद सुतन उपदेश ।
भजो राम अबहीं से प्यारे, सुन हमार संदेश ॥
बालक खेलि युवा युवती में, फिर बूढ़े हों केश ।
माया जाल फांस में फंसिके, पावत दुःख हमेश ॥
काम क्रोध मद मोह लोभ रिपु, मिलै न इनसे पेश ।
सुख भोगै तबहूं नित दुखिया, सत सुख हिये नलेश ॥

माधवराम सत्यसुख गतिलो, हिये धरो अवधेश ।

इति श्री० भा० भा० सप्तमस्कंधे सरसकाव्यनिधौ षष्टोऽध्यायः ॥

* श्रीगणेशायनमः *

श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्य निधौ ।
सप्तम् स्कंधे सप्तमोऽध्यायः ॥

श्लो०-सप्तमे मातृ गर्भस्थे स्वस्मिन्नारदभाषितम् ।
प्रह्लादो वर्णयामास शिष्यप्रत्ययसिद्धये ॥१॥

दो०—सतयें में प्रहलाद सब, गर्भ कथा उपदेश ।
सबहिं बालगन से कह्यो, भक्ती लई रमेश ॥

छं० नारद उ०-इसभांति दैत्यकेलड़कोंने, प्रहलादसेप्रश्नकियाजबहीं
हंस रहे तिन्हैं प्रहलाद कहैं, मुनि कथन सुमिरि दिलमें तबहीं ।१।

प्रहलाद उ०-तप करैं पिता मंदर गिरिपै, देवता लड़े को आये हैं ।२।
लघु चींटी मिलि खाजांय सांप, पापी को पाप त्यों गाये हैं ।३।
सुर प्रवल युद्ध करि दैत्यों से, रण से सब असुर भगाये हैं ।४।
धन पुत्र नारि घरबार त्यागि, भागे निज प्राण बचाये हैं ।५।
सुर जीति दैत्य गृह लूटि रहे, सुर पति ने हमारी मा पकड़ी ।६।
रोवै कां पै भय खाय डरै, नारद मारग में लखी खड़ी ।७।

दो०—सुर पतिसे कहने लगे, छोड़ि देहु परनारि ।
मत ले जावो याहि तुम, लेवो हिये बिचारि ॥८॥

छं० इन्द्र उ०-हे मुनिजी इसके गर्भ अहै, जब इसके पुत्र जन्म हो वै ।

सुतमार के इसको छोड़ेंगे, पैदा होने के दिन जोवै ।९।
नारद उ०-निर्दोष महाहरिभक्तपुत्र, इसकेहो मुनिवर कहतभये।१०।
सुनिमानिबचन परदच्छिणकर, सुरपति दलले निज भवनगये ।११।
रच्छा कीनी तबलौं नारद, मम पिता न जबलौं घर आये। १२।
धीरज दै निर्भय करि राखा, उपदेश बिबिधि बिधि समझाये ।१३।
धनि सती धर्म करि मुनि सेवा, सुखसे सुत पैदा हो जिसमें ।१४।
मुनि धर्म तत्व उपदेश किया, सिख जाय पुत्र जो है इसमें ।१५।

दो०—समय बीतगो मातु तिय, स्वभाव से गै भूल ।
मम हिय में सब याद रह, मुनि हम पर अनुकूल ।१६।

छं०-जो मानो हमसे तुम होगे, श्रद्धा से मति निर्मल आवै ।
स्त्री बालक सुनि संत वचन, हियमें हरि की भक्ती पावै ।१७।
ले जन्म मरण तक षट भावहु, तनके हैं आत्मा के नाहीं ।
ज्यों तरु जामें बढ़ि फूलि करैं, त्यों काल गती है सब पाहीं ।१८।
है नित्य आत्मा शुद्ध एक, च्छेत्रज्ञ नाश बिन क्रिया रहित ।
निज दृष्टा ब्यापक संग हीन, नहिं छिपा किसीसे रूप सहित ।१९।
यह बारह लच्छण आत्मा के, गुनि मैं मम तनसे मोह तजैं ।२०।
ज्यों सोन शुद्ध हो ताये से, मिल योग से ईश्वर हियसे भजै।

दो०—सबहिं च्छेत्र तनमें सदा, एकहि ब्रह्म निवास ।
स्वर्ण खानि में स्वर्ण ज्यों, मिलै युक्ति से पास ।२१।

छं०-हैं आठ प्रकृतिगुण तीनविकारहु, सोलहमेंरह पुरुषमिला ।२२।
चलअचल देहदो प्रकारकी, नहिंयहनहिं यहकरि निश्चयला ।२३।

अन्वय व्यतिरेक मिलाहै अलग, निर्मलमनसे करलेहु बिचार ।२४।
बुद्धिवृत्तिस्वप्नजागृत सुषुप्ति, साची आत्मा लखहो भवपार ।२५।
त्रिगुणात्म बुद्धि से आत्म लखो, ज्यों बायु गंधसे मिली रहै ।२६।
गुण कर्म बंधसे जगत मिलै, ज्ञान से स्वप्न समान अहै ।२७।
यह हजार यत्नों में सुयत्न, भगवत पदमें दृढ़ प्रीति करै ।२८।
त्रिगुणात्म कर्म का बीज हरण, उपराम जगत बुधि माहिं धरै ।२९।

दो०—गुरु सेवा हरि अर्पि सब, साधु भक्त कर संग ।
हिय से प्रभु आराधिकै, चढ़ाय ले सच रंग ।३०।

छं०-हरिकथामें श्रद्धा गुणगानहु, हरिपदहु ध्यान हरिदर्शकरै ।३१।
प्रभु सबमें है कर नित विचार, बनि परै तौन सतकार धरै ।३२।
हरि भक्तिसे ६ शत्रू जीतै, तब बासु देवमें प्रीति लहै ।३३।
प्रभु गुण सुनि लीला निरखि, प्रेमसे गदगद ह्वै दृग आंसु बहै ।३४।
कबहूं रोवै नाचै ज्यों मत्त, हंसि चिल्लावैं नमि प्रभु ध्यावै ।
हरि नारायण कहि श्वांसलेय, तजिलाज मगनह्वै गुण गावै ।३५।
तब छूटि जाय सब बंधन से, हरि भाव से सबै भाव टूटै ।
ज्यों भुना बीज फिर नाहिं जमै, करि भक्तिपाय हरिभव छूटै ।३६।

दो०—खल आत्मा शोधकअहै, ईश्वर में सत भाव ।
मिलै ब्रह्म सुख बुध कहैं, सब हिय हरिहि मनाव ।३७।

छं०-क्या मिहनत है हरि भजने में, आकाश तुल्य व्यापक सबमें ।
निज आत्मा सच्चा मित्र वही, कुछ सार नहीं जग करतब में ।३८।
धन गृहपशु तियसुत महीआदि, छनभंग देह को क्या सुखदें ।३९।
यह भांति स्वर्ग सब लोक नाश, हैं चहियै हरिकी भक्ती लें ।४०।

जिस लिये मनुज ह्यां कर्म करैं, फल उसका उलटा पाता है।४१।
सुख मिलै दुःख छूटै चहते, तहं बारबार दुख आता है।४२।
जिस हेतु कामना चहै पुरुष, छनमें शरीर छुट जाता है।४३।
सुत नारि खजाना महल आदि, में नाहक मोह बढ़ाता है।४४।
हैं तुच्छ देह के संग नाशैं, है अनर्थ अर्थ सम देखि परै।४५।
हे बालकगन क्या देह धरे, बंधन के हेतु कुकर्म करै।४६।

दो०—करै देह से कर्म नर, आत्मा के संग देह।
कर्महि से तन फिर मिलै, अज्ञानी कर नेह ॥४७॥

छं०-धर्मार्थ कामसिधहों जिससे, उसपरमेश्वर का भजनकरो।४८।
सबकी आत्मा हरि ईश्वर है, सो जीव कर्म से दिलमें धरो।४९।
सुर असुर मनुज गंधर्व यक्ष, भजि मुकंद पद सुखपाते हैं।५०।
सुरपन द्विजपन मुनि पनसे, सुनो नहिंप्रभु प्रसन्न हो जाते हैं।५१।
तप दान यज्ञ व्रत से नहिं खुश, भक्ती से खुश सब ठगहाई।५२।
ईश्वर में भक्ती करौ शुद्ध, निज सम जग देखो मनलाई।५३।
दैत्यहु राक्षस अरु दैत्य शूद्र, स्त्री बनबासी खग मृग बहु।
हरि भजिकै हरि पाये झटसे, उपदेश बालगन हियमें गहु।५४।

दो०—परम लाभ यह जगत में, तन धरि लेहु बिचार।
अचल भक्ति गोबिंद में, हरि मय जगत निहार।५५।

भजन-भक्ति हरिकी यह तनमें सार।
धन कुटुम्ब पशु महल अटारी, बादिगयो परिवार ॥
बंधन रूप जीवके जानौ, अधिक दुःख दातार।
बालक पनसे हरि भजनों सत, उचित हिये लेधार ॥

फिर पीछे नहिं चित्त लगतहै, गृह बंधन को द्वार ।
कुल धन गुनसे हरि प्रसन्न नहिं, बालक लेहु बिचार ॥
माधवराम अबहिं से चेतहु, हियधर नंद कुमार ।

इतिश्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौसप्तमस्कंधे सप्तमोऽध्याय:

॥ श्रीगणेशायनमः ॥

श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ सप्तम स्कंधे अष्टमोऽध्यायः ॥

श्लो०-अष्टमेऽतिरुषासूतुं निघ्नन्दैत्यो हतः स्वयम् ।
आविर्भूय नृसिंहेन सच ब्रह्मादिभिःस्तुतः ॥१॥

दो०-सुत मारत आपहि मरयो, नृसिंह जीके हाथ ।
अठयें में वर्णन करैं, बिनती बिधि सुर साथ ॥

छं०ना०ऊ०-प्रहलादसीखसुनिदैत्यबाल,गुरुशिक्षातजिहरिभक्तिगहो१
आये गुरु लखि प्रहलाद सबहिं, डरि भागे नृपसों दशा कही ।२।
सुनि सुत अन्याय कोप करिकै, कंपि गये गात सुत बध चाहा ।३।
प्रहलादैं गहि कटु बचन कहे, तिरछे चितवै हत उत्साहा ।४।
लखि प्रणाम करते कर जोरे, ज्यों सांप बमक कर बचन कहे ।५।
दुर्नीति मंद कुल भेद कारि, मानै न बचन अब मरन चहै ।६।
क्रोधी मुझसे त्रय लोक कंपै, तू ज़रा नहीं भय मानै है ।
आज्ञा मेरी सब शीश धरैं, तू उलटी करनी ठानै है ।७।

प्रहलाद उ० दो०-हम तुम सारे जगतके, हरि हैं बल दातार।
जीव चराचर विधि सहित, बश कीने करतार।८।

छं०-वह ईश्वर काल प्रबल सबसे, सबही को बल देने वाला।
जग रचि नाशै निज शक्ती से, विधि रुद्र विष्णु ह्वै प्रति पाला।९।
पितु असुर भाव तजि देहु आप, सब मित्र अहैं कोइ शत्रु नहीं।
इक शत्रु आपका आपहि है, हरि पूजन है मन शुद्ध सही।१०।
षट् शत्रु न जीते दिशि जयकी, नाहक गुमान मनमें धारे।
सम चित्तसाधु के शत्रु नहीं, निज मोह शत्रु क्यों नहिं मारे।११।

हि०क०रु०प्रत्यच्छ मृत्यु बशयों बकता, मरनेवालोंके यही वचन।१२।
मुझसे मालिक कोइ और अहै, दिखलाव उसे करुशीघ्र यतन।१३।

दो०—बकत मूढ़ तव शीश मैं, काटौं लगै न बार।
आय बचावै तोहिं हरि, जो तेरो रखवार।१४।

छं०-इसभांति सुतहिं बहुकटुकहिके, लैखड्गउछलि खंभहिमारा।१५।
भाशब्द घोर विस्मित सुर विधि, ब्रह्मांड फटिगयो जनु सारा।१६।
सुत बधकारी सुनि बिकट शब्द, नहिं कुछ देखा सब असुर डरे।१७।
निज भक्त वचन सत करने को, जग ब्याप्त नृसिंह रूप निकरे।१८।
स्तंभसे निकसे नर न सिंह, अद्भुत नरसिंह रूप धारे।१९।
भय दायक रूप लाल लोचन, जमुहात सटा निज फटकारे।२०।
दाढ़ै कराल लप लप हो जीभ, भौं हैं भयदायक कान खड़े।
गिरि कंदर सम मुख नासा है, इक एक अंग विकराल बड़े।२१।

दो०—छुवै देह आकाश जनु, हृदय दीर्घ बिकरार।
शत भुज नख आयुध धरे, मनहु खड्ग की धार।२२।

छं०-लखतै सब दानव दैत्य भगे, सोचै वह क्या यह मारैगा।२३।
झट गदा हाथ लै जाय भिड़ा, ज्यों गज केहरि लल कारैगा।२४।
नहिं अचरज जिसने तमकोहरा, झट गदा नृसिंह देह मारी।२५।
ज्यों गरुड़ सर्प को त्यों पकड़ा, चट फाड़के निकला बलकारी।२६।
घबराये सुर जो छिपे लखैं, क्या मरै न इनसे शंक करी।
उसने तरवार ढाल करसे, कर क्रोध संभल कर झट पकरी।२७।
पैतरे बदलते उसे देख, करि अट्टहास नरसिंह खड़े।
मद अंध फिरै वह तर ऊपर, ज्यों सर्प मूस को हरि पकड़े।२८।

दो०-निकरन की युक्ती करै, बैठे हरि गहि द्वार।
गरुड़ सर्प ज़्यों खेलमें, डारचो उदर बिदार।२९॥

छं०-मुख कराल लोचन नृसिंह के, गल फड़ चाटैं तन भयदाई।
नख रुधिर भरे गले आंत माल, गजमारि सिंह शोभा पाई।३०।
झट मृतक त्यागि नरसिंह देव, लै शास्त्र असुर जे लड़ा चहैं।
नख शस्त्रहि से मारने लगे, गिरि भगे न संमुख कोई रहैं।३१।
बालों से बादल झुंड भगैं; दृग ज्योति से ग्रहके तेज नशे।
हैं चुभित सिंधु सुनि गर्जन को, दिग्गज चिल्लाये थलसे खसे।३२।
गल सटासे गगन बिमान भगैं, पग पड़तै महि हिल सुर मोहैं।
हिलते है बेगसे गिरि भारी, तन तेजसे दश दिशि नहिं सोहैं।३३।

दो०-नृप गद्दी पर राजहीं, नृसिंह रूप कराल।
निकट न कोऊ जा सकै, सेवा हित ततकाल।३४।

छं०-सुनि हिरण्य कश्यप बध हरिसे, सुरनारि हिये हर्षित भारी।
रणमे खलको चट मरण देखि, हरिपै पुष्पन वर्षा कारी।३५।

आये अकाश पर बिमान बहु, गंधर्व दंदुभी धुनि लाये।
करती हैं अप्सरा नृत्य बिबिधि, हर्षित यश बिमल गान गाये।३६।
शिव ब्रह्मादिक सुर सिद्ध मुनी, बिद्याधर नागादिक आये।३७।
मनु प्रजापती चारणहु यक्ष, बेताल किं पुरुष सब धाये।३८।
हरि पार्षद कुमुदादिक हरिकी, कर जोरे दूरसे बिनय करैं।
सिंहासन पर नरसिंह देव बैठे हैं, अद्भुत तेज धरैं ।।३६।।

ब्रह्मोवाच०-दो०-नमो अनंत बिचित्र बल, जगरचि पालन हार।
पवित्र कृत लीला करै, संहारहु करतार ।।४०।।

छं०रुद्रउ०-युगअंतकोपकासमयअहै, लघुअसुरकोपकरिकेमारा।
हे भक्त वछल सुतरक्ष तासु, है शरण कीजिये निस्तारा।४१।

इन्द्र उ०-हैंआपकेभाग दिलाय दिया, आपहि तोहमारे हृदय बसे।
पदसे इन मुक्ति आपसे लें, जग सुखमें मोहित काल ग्रसे।४२।

ऋषय ऊ०-आपही हमारे तपहो तेज, जिससे यह जग रच देते हो।
हे शरण पाल रक्षा तनलै, जनकी रक्षा कर लेते हो।४३।

पितर ऊ०-पुत्रों सेदीगई श्राद्धमाहिं, तिलजलपिंडादिकसबसमान्।
प्रभु पेट फाड़कर निकाल कर, दे दिया हमैं झट रक्षा ठान।४४।

सिद्धा ऊ०-दो०-योग सिद्धि गति सबै हरि मूढ़ कीन अभिमान।
रणमें मारि अभय दिया, नमो तुम्है भगवान ।।४५।।

छं०-विद्याधराऊचु-बलसेअभिमानीमहामूढ़, हमरीविद्यासबछीनलई।
पशु तुल्य नाश करि रणमें ताहि, माया नृसिंह गति ताहि दई।४६।

नागा ऊचु०-जिस पापीने शिर रत्नहरे, नारी रत्नहु सब हरण किये।
हे नमो! फारि छाती तिहकी, नरसिंह हमें आनंद दिये ।४७।

मनव ऊचु०-हम मनु है तव आज्ञा कारी, इस दुष्टने धर्म पंथ तोड़े।
खल मारि धर्मकी रक्षा की, हो आज्ञा धारें कर जोड़े ।४८।

प्रजापतयऊचु०-तुम्हरेजाये हमप्रजापती, सब प्रजा की रचनाकरते हैं
बाधक का फारि उदर आप, मंगल कारी तन धरते हैं ।४९।

गंधर्वा ऊचु०-दो०-गायक नर्तक आपके, हमें शक्ति दातार ।
पहुंचि गयो इस दशा महं, कुपथ गहे दुख भार ।५०।

छं०-चारणाऊचु०-गतिदायकचरणशरणहरिके, सोईहियमेंहमधारे हैं
जगमें भयदायक मूढ़ असुर, को मारि हमें उद्धारे हैं ।५१।

यक्षा ऊचु०-हम अनुचर प्रभुके इस खलने, हमसे पालकी ढुवाई है।
परिताप देखि अपने जनका, चट मारि के करी सफाई है-।५२।

किंपुरुषाऊचुः-होमहापुरुषकिंपुरुषहैंहम, बीचहिकुपुरुषयहआयगया
धिक्कार साधु जन जाहि देहिं, मारा प्रभुने यह भला भया ।५३।

वैतालिका ऊचुः-गुणगाय सभामेंप्रभु तुम्हार, सबसे इनाम हम लेते हैं
बाधक खल भया भले मारा, हम प्रभुहिं बधाई देते हैं ।५४।

किन्नरा ऊचुः-हम किन्नर आपके सेवकहैं, हमसे बिगार यहनितलेवे।
आपहीने यह दुखदूर किया, हरिके बिन अभय कौन देवे ।५५।

विष्णुपार्षदाऊचुः-दो०-जगसुखदायकशरणप्रद, अद्भुत लखोसरूप।
विप्र शाप उद्धार हित, मारि कियो अनु रूप ।५६।

भजन—सदा जनके रक्षक भगवान।
हठकै पुत्र नाम हरि लीनो, ठाने मृत्यु विधान॥
एक चली नहिं हारि मानिकै, हिये माहिं अकुलान।
गुरु शिक्षा तजि बालकगनको, सिखयो भक्ति विधान॥
सुनि तरवार लई मारन को, नृसिंह जी प्रगटान।
मारि ताहि सिंहासन राजैं, विधि सुर विनती ठान॥
माधवराम प्रसन्न होय हरि, करैं बिमल यश गान।

इति श्री० भा० भा० सरसकाव्यनिधौ सप्तमस्कंधे अष्टोऽध्यायः॥

* श्रीगणेशायनमः *

श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्य निधौ।
सप्तम् स्कंधे नवमोऽध्यायः॥

श्लो०-नवये ब्रह्मणा भीत्या चोदितोऽसुर बालकः।
कोपं प्रशयन्नस्तौन्नृसिंह मतिभीषणम्॥१॥

दो०—विधि प्रेरित प्रहलाद जी, नृसिंह बिनती ठान।
नवयें में वर्णन करैं, कोप शांति हिय आन॥

छं०नारदऊ०-यहविधिसुरसबहीकरीबिनयनरसिंहकोपकमकरिनसकैं।१
देवों ने लक्ष्मी को भेजा, नहिं पास गईं दूरहि से तकैं।२।
विधिने प्रहलादहि को भेजा, पितु पर कोपित करौ कोप शमन।३।
हां करि प्रहलाद निकट जाकर, कर जोरि चरणमें कियो नमन।४।
निज चरणों में प्रणाम करते, लखि दया हृदय में भरिआई।
झट उठाय शिर पर हाथ धरा, भय भीतों को जो सुखदायी।५।

कर परसत ही हुआ हृदय बिमल, गतपाय आत्म दर्शन पाये।
धरि हिये चरण रोमांच खड़े, नेत्रों में आंसू बह आये।६।

दो०—सावधान मन थिर किया, गद् गद् बैन उचारि।
हृदय नैन हरिमें दिये, बिनवैं बिनती धारि।।७।।

छंप्र०विधिसुरसुनिगणकरिएकबुद्धि, जिन प्रभुकीबिनतीसकैंनकरि।
मैं दैत्य जाति बालक लघुमति, क्या कहूं सामने मनचित धरि।८।
धन जन तप रूप प्रभाव बुद्धि, बल तेज श्रुती आदिक जितने।
भक्ती से गज पर प्रसन्न हरि, नहिं हर्ष हेत साधन तितने।६।
द्विज बारा लक्षण से प्रयुक्त, हरि बिमुख से भक्त श्वपच अच्छा।
मनबाणी अर्पित प्रभु प्रसन्न, तारैं कुल हिय न मान इच्छा।१०।
निज लाभ पूर्ण नहिं मान चहौ, हो दयालु हिय दाया धारे।
जोजो जन हरिमें मान धरै, प्रतिबिंब तुल्य निज अनुसारे।११।

दो०—तजि शंका जस बुद्धि मम, प्रभु की बिनती ठान।
नीच जाति माया फंसो, हों पवित्र जिय जान।१२।

छं०-आज्ञा कारी विधि आदि डरैं, ये भक्त अहैं हम नाहिं हरे।
जग सुखके हेत लीला करिके, अवतार अनेकन आप धरे।१३।
मरि गया दैत्य करो कोप शांति, मरे वीछी सांपजन खुश चहिये।
पावैं निवृत्ति इस रूपसे जग, निर्भय हित हिय सुमिरन रहिये।१४।
तब मुख जिह्वा दृग दाढ़ों से, आतों की माल लखि कान बाल।
दिग्गज विदीर्णकारी नखसे, नहिं तिलभर डरलागै यहि काल।१५।
संसार चक्र से हम डरते, जन वत्सल कर्म वश जहां पड़े।
हैं चरण शरण कब प्रसन्न ह्वै, अपनाय लेहु जन दीन खड़े।१६।

दो०-प्रिय अप्रिय जन्महु मरण, सबयोनिहु में वास।
दुख औषध तहुं दुख सहैं, दीजै भक्ति सुपास ॥१७॥

छं०-प्रिय सुहृद देवता हरि गाथा, विधि गावैं सोई गाय तरैं।
संसार जाल से छूटि जाय, जन परम हंस को संग करैं।१८।
पितु मातु न रक्षक बालक के, रोगी की न औषध मृत्यु हरै।
नहिं डूबत को रखि सकै नाव, पद शरण गहे से पूर परै।१६।
जिसमें जिहते जिससे जिहको, बिधि पितर आदि करि करवाते।
सब भाव आप से पृथक नहीं, आपहिं के रूप से सब आते।२०।
तब कालसे प्रेरित माया रचि, जग कर्म मयी हैं वेद रचै।
सोलह विकार युत मन भोगै, हरि बिन न तरै नर वृथा पचै।२१।

दो०-निज आत्मा गुण जीतिकै, रचि पालन नहिं मान।
ऊष दंड सम पिसि रह्यो, लेहु शरण भगवान ॥२२॥

छं०-बय विभव लखीं हम सबकी श्री, जिस हेत जीव पच मरते हैं।
इक पलमें मम पितु को मारा, जिससे सब कंपते डरते हैं।२३।
विधिहू की उमर सुख नाहिं चहौं, तनुधारी सुख की कौन कहै।
तब कालरूप से नाशमान, दीजै इक हरि जन संग चहै।२४
बरदान श्रवण सुख तृष्णा रूप, यह तुच्छ देह रोगों का घर।
विषयों से काम अग्नि सीचै, नहिं विराग लें पंडित हर बर।२५।
कहं दैत्य वंश में जन्म पाय, हे प्रभू कहां यह तब दाया।
विधि रुद्र रमादिक नहिं पाये, जस मम शिर कीनी कर छाया।२६।

दो०-जग सम मति नहिं आपकी, जगदात्मा प्रिय मीत।
कल्पवृक्ष सम फल न दै, हितकर परम पुनीत ॥२७॥

T

छं०-करि चाह चाह पै भवमें पड़े, करि देहु दया अब तुम्हें भजौं।
अपनाय कै नारद सीख दई, किमि हरिजन सेवा नाथ तजौं।२८।
मम रक्षा पितु वध दोउ कर्म, मुनि वाक्य सत्य प्रभुने कीनी।
जिस समय खड्ग लै शिर काटौं, ऐसी कटु बानी कहि दीनी।२९।
जग आदि अंत मध्यहु में बसो, हैं आप एक नहिं और कोय।
माया से जग रचि विविधि भांति, तिसके भीतर तव बास होय।३०।
तुमसे हैं पृथक् सत असत जगत, येही सब झूठी माया है।
जग जन्म मरण रक्षा तीनो, ह्यां वृक्ष वीज सम गाया है।३१।

दो०-सब जग लय करि आपमें, सोवत अनुभव माहिं।
योग नीद तुरिया गती, लही न गुण तुम पाहिं।३२।

छं०-निज काल शक्ति से प्रकृति रूप, धरि अनंत शय्या पर सोये।
तजि समाधि नाभि कमल निकस्यो, ब्रह्मांडसबै कबिजनजोये।३३।
तिसमें ब्रह्मा जी प्रगट भये, चहुं फेर लखैं कुछ नहिं देखा।
जलमें प्रवेश करि ढूंढ़ थके, निज उतपति का न लह्यो लेखा।३४।
थिर कमल पै तप तप वचन सुना, आत्मा शोधा तप घोर किया।
निज नाथ आप झट प्रगट भये, ह्वै प्रसन्न ब्रह्मा दर्श लिया।३५।
मुख सहस चरण शिर नयन कान, तनमें सुन्दर आभूषण हैं।
लखिकै ब्रह्मा अति हर्ष लह्यो, मायामय तन नहिं दूषण हैं।३६।

दो०-हयग्रीव तन धारि हरि, मधुकैटभ बलवान।
मारि बेद लावत भये, प्रियतनु धरि भगवान।।३७।।

छं०-ऐसे नर मत्स्यदेव तनुधरि, जग रचि पालौ दुष्टहु मारौ।
युग युग में धर्म की रक्षा करि, सत रूप अनेकन तुम धारौ।३८।

मन दुष्ट चपल नहिं सुनै कथा, करि भजन हर्ष छन नहिं लावै।
भय शोक काम से बिकल रहै, किमि भजौ तुम्हैं इत उत धावै।३६।
इक तरफ जीभ खींचै स्वामी, कहुं कान भोग इन्द्री न सुखी।
नाकहू दृष्टि इक एक तरफ, जिमि बहु तिय वाला पति है दुखी।४०
निज कर्म से भवमें पड़ा जीव, बहु जन्म मरण भय आदि लहै।
आपस में वैर कर महा दुखी, है मूढ़ पालिये शरण गहै।४१।

दो०—जगत गुरू मिहनत नहीं, तारन में निज भक्त।
आर्तबंधु दाया करो, हरि हरि जन पद रक्त ॥४२॥

छं०-वैतरनी दुख से डरैं न हम, गुण अमृत सिंधुमें मगन रहैं।
जे बिमुख लगे इन्द्री सुखमें, उन मूढ़ जनों पर शोक गहै।४३।
सुर मुनि तजि काम मौन बिचरैं, बनमें पर स्वारथ मन धारे।
इनको तजि भवसे तरन एक, तजि शरण भूमें जगमें सारे।४४।
है गृहस्थ सुख दद्रू समान, खुजलाये सुख पुनि दुख होवै।
जे मूढ़ भोगि नहिं तृप्ति लहैं, ह्वै धीर तृप्त सत सुख जोवै।४५।
ब्रत मौन धर्म तप जप समाधि, मुक्ती उपाय निश्चय सब हैं।
अजितेन्द्री बेंचि बिषय लेवैं, दंभी की निष्फल कर तब हैं।४६।

दो०—सत अरु असत रूप दोउ, अंकुर बीज समान।
काष्ट में ब्यापक अग्नि ज्यों, निरखहिं तुम्हैं सुजान।४७।

छं०-जल मही अग्नि आकाश वायु, हिय इन्द्री प्राण रूप ब्यापक।
हौ निर्गुण सगुण सरूप दोउ, रचिके संसारी संस्थापक।४८।
गुण गुणी पंच तत्वहु इन्द्री, मन देवहु तुम्हैं न जानि सकैं।
यह नाशमान हैं धीर पुरुष, इक बिचार से सुख पाय तकैं।४९।

T

है नमो बचन स्तुति में लगैं, मन चरण कथा में कान लगैं।
बिन आपकी सेवा किये प्रभू, किम भांति से हियमें प्रेम जगैं।५०।

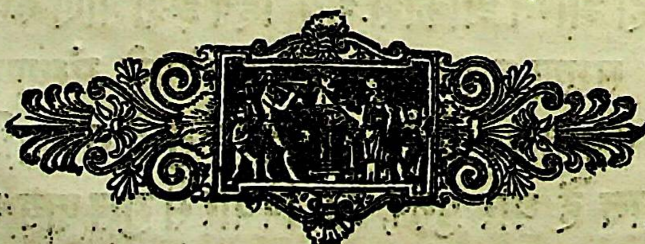
दो०-नारदउवाच-स्तुति कीनी भक्ति से, विष्णु भक्त प्रहलाद।
हर्षित भये नृसिंह हरि, बोले हिय अह्लाद।५१।

श्रीभगवानुवा०-प्रहलादप्रसन्नहैंहम तुमपर, मनइच्छितबरहमसेलेवो।५२
दर्शन ही मेरा दुर्लभ है, लहि दर्श फेरि नहिं भव सेवो।५३।
जो धीर साधु इस जगमें हैं, सब भांतिसे हमें प्रसन्न करैं।
हैं महा भाग कल्याण चहैं, लहि मुझे सबै आनंद भरैं।५४।

दो०-प्रहलादहिं लालच दियो, मांगि लेहु बरदान।
अचल भक्त भगवान से, बरनहिं चहै सुजान॥५५॥

भजन-सत्य हरि भक्त न लें बरदान॥
की बिनती प्रहलाद विष्णु की, प्रसन्न हैं भगवान।
बर लेवो मुखसे हंसि बोलैं, मनमें करि अनुमान॥
करिकै भजन जौन बर मांगै, सो रुजगारी जान।
मिहनत करी मंजूरी लीनी, नहिं सत भक्त सुजान॥
सांचा सोइ बचन मन तनसे, स्वामी सेवा ठान।
माधवराम न तिलभर इच्छा, हरिके हाथ विकान॥

इतिश्रीमद्भागवते भाषासरसकाव्यनिधौ सप्तमस्कंधेनवमोऽध्याय:



॥ श्रीगणेशायनमः ॥

श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ सप्तम स्कंधे दशमोऽध्यायः ॥

श्लो०—इशमेत्वनुगृह्यामुं भक्तमंतर्हितेहरौ ।
प्रसंगाद्ब्रह्मिणा रुद्रे कृतोऽनुग्रह ईर्यते ॥१॥

दो०—दाया करि प्रहलाद पै, हरिभे अंतर ध्यान ।
दशयें में बर्णन करैं, चरित रुद्र भगवान ॥

छं०-नारदउ०-बरदानभक्ति केबाधकहैं,प्रहलादहृदयअनुमानकिया
हंसिकै हरिसे यों बचन कहै, दृढ़ भक्ति प्रेम मन ठान लिया ।१।

प्रहलादउ०-विषयों में फंसे मुझको प्रभुजी, बरदानकालोभनहींदीजै
जग संग से डरि आया हूं शरण, गति भक्ति चहौं अपना कीजै ।२।
करते हो भक्त परीक्षा प्रभु, जग बीज भोग प्रेरणा करी ।३।
जग गुरु दायामय कस कहते, जन चहै न बर करैं वैश्य हरी ।४।
स्वामी को सेइ बरदान चहै, वह नहिं सेवक मज़दूर अहै ।
सेवक का न सच्चा बह स्वामी, सेवकाई में बरदेन चहै ।५।

दो०—हम अकाम तव भक्त प्रभु, स्वामी आप अचाह ।
नृप नौकर सम काज नहिं, चुकती हो तन ख्वाह ।६।

छं०-बरदान देंय की इच्छा हो, हिय चाह नहो दीजै बरदान ।७।
मन प्राण धर्म धृति मति ह्रीश्री, सब काम भये से नाशमान ।८।
ज़िस समै कामना नर त्यागै, उस समय नरायण हो जावै ।९।

भगवान नृसिंह नमो प्रभुको, परमात्म ब्रह्म हम गुण गावैं ।१०।

नृसिंहउ०-तवतुल्यअनन्यभक्त जे हैं, ह्यांह्यांकीचाहहियनहिंराखैं ११
तौ भी मन्वंतर राज करौ, ह्वै दैत्य पती हम अस भाखैं ।
ह्वै एक चित्त मम कथा सुनौ, मैं सबमें बसौं पूजि नितही ।१२।
तजि कर्म भोगसे पुण्य भजन से, पाप काल से देह सही ।

दो०—कीर्ति रहै त्रैलोक्य महं, मुक्त मिलौ हम काहिं ॥१३॥
हमें तुम्हें यश गाय नर, बंधन से छुट जाहिं ॥१४॥

छं-प्र०उ०-बरदानी आपसे बर मांगौ, निंदा पितु कीनी बिन जाने ।१५
जग गुरू समभ्क कर भाई रिपु, तुव जन गुनि,मम मारन ठाने ।१६।
जन वत्सल अंग संग तव लहिं, पितु पवित्र हों नहिं नर्क परें ।
अपराध आप संग दुस्तर करि, नहिं किसी पुण्य से पाप हरें ।१७

श्रीभ०-इक ईस पितृ लै पिता तरे, जहं तुमसे जन्में कुल पावन ।१८।
मम भक्त शांत समदर्शी जहं, पापिहु जन हरि के मन भावन ।१९।
सर्वात्मा लखि नहिं जीव बधैं, सबमें हरि देखैं चाह तजे ।२०।
तब संग रहैं ते भक्त होंय, तुम श्रेष्ट सबों में मोहिं भजे ।२१।

दो०—पिता प्रेत कारज करो, तरै छुयों मम अंग ॥२२॥
पितु गद्दी स्वीकार करि, पालि भजौ करि संग ॥२३॥

छं० ना०ऊ०-प्रह्लादपिताकोक्रियाकरी, फिरविप्रोंनेनृपतिलक किया।२४
लखि प्रसन्न ब्रह्मा नृसिंह कहं, बिनती कर कोमल बचन लिया ।२५।

ब्रह्मोवाच-हे देव २ जग नायक हरि, भल कीन असुर पापी मारा ।२६।
मम सृष्टि से मरि न सकै बरलै, अति बली धर्म सब संहारा ।२७।

भलकीन भक्त सुत यह इसका, मरने से प्रभु कीनी रक्षा ।२८।
इहरूप ध्यान से मृत्यू भय, छूटै सबको है शुभ जिक्षा ।२६।

नृसिं०उ-जेस्वभावसेअतिदुष्टअसुर, तिनकोअसवरविधिनहिंदीजै ।
हैं प्रथम जहर से भरे सर्प, तिन्हैं प्याय दूध क्या फल लीजै ।३०।

नारद उ०-दो०-कहि विधिमे नरसिंह हरि, झटभे अंतर ध्यान ।
पूजा कीनी प्रथम ही, जन रक्षक भगवान ॥३१॥

छं०-विधि रुद्रसबै भगवतकी कला, प्रहलाद पूजिनमि बिनयकरी ।
गुरु शुक्राचार्य द्विजवृन्द सहित, दैतिलक असुर पति मौरधरी ।३३
सुर करैं प्रशंसा अशीश दै, विधि सहित आपने लोक गये ।
छूटा संकट सुरमुनि सबका, घर घर में मंगल चार भये ।३५।
हरि पार्षद दिति सुत ह्वै के मरे, उद्धार शाप सों पाये हैं ।३५।
पुनि रावण कुंभकर्ण जन्मे, तहं रामहिं तिन्है नशाये हैं ।३६।
लगि रामबाण रणमें तन तजि, हरिही में मन करि जन्म धरे ।३७
शिशुपाल दंत वक्रहु अबह्वै, तुम्हरे देखत भव सिंधु तरे ।३८

दो०—पाप पूर्व कृत वैर करि, हरिसों छूटे आप ।
कीट भृंग सम लाय चित, छूटे सकल संताप ॥३६॥

छं०-तजि भेदभावकरि दृढ़भक्ती, शिशुपालादिक हरिरूपलि
हरि की समता शिशपाललही, नृप वर्णन सारा चरित किया ।४१।
ब्रह्मण्य देव श्री कृष्ण चरित, बध आदि दैत्य दानव नायक ।४२।
प्रहलाद भक्त को शुभ चरित्र, भक्ती विराग ज्ञानहु दायक ।४३।
जग पालक का गुणकर्म गान, सुखदायक सबहिं कालनाशैं ।४४।

भक्तों का धमकहि हरिमिलते, अध्यात्म ज्ञान हर भवफासें।४५।
हरि चरित जौन जन कहै सन, कर्मों के बंध से छुट जावें।४६।
बध दैत्य नृसिंह चरित जनका, सुनिकहि निर्भय पदवी पावें।४७।

दो०—भाग्यमान तुम धर्म नृप, मिलें सबै मुनि आय।
बसें कृष्ण परमात्मा, जहं नर रूप बनाय ॥४८॥

छं०जो ब्रह्म महात्मा जन ढूढ़ें, मुक्ती दायक अनुभव सुखसम।
मामा का पुत्र प्रिय सुहृदसोइ, गुरु आत्मा पूजनीय हर दम।४६।
शिव ब्रह्मादिक नहिं मनसे लखैं, गहि मौन यतन बहु धारे हैं।
भक्तों का मालिक प्रसन्न हो, हम उसके सदा सहारे हैं।५०।
सोई हरि रुद्र सहाय करी, मय दानव त्रिपुर बनाया है।
युक्ती से विधि वछरा हरिगौ, बनिकै सब नाश कराया है।५१।

राजोवाच-दो०-त्रिपुर नाश किमि भयो मुनि, चरितकहौ समभाय
जगदीश्वर श्रीकृष्ण को, दीजै सुयश सुनाय ॥५२॥

छं-नारदउ०-जबअसुरसुरोंसेहारगये, मायाबीमयकीशरणगये।५३।
रच त्रिपुर स्वर्ण चांदीलोहा, मय समान युत तिन्है देत भये।५४।
उसमें चढ़ि लोक लोक पालहु, लखि पूर्व बैर सब जीत लिये।५५।
सब लोक पाल शिव शरण गये, प्रभु त्राहि २ बहु बिनय किये।५६।
मत डरो अभयदै शिवजी तिन्हैं, शर धनु चढ़ाय छोड़न लागे।५७।
रबि किरन यथाचले अग्नि वान, नहिं आवैं त्रिपुर दृष्टि आगे।५८।
जे मरैं असुर मय तिन्है लेय, झट अमृत कूप छोड़ै ज्यावै।५९।
रस पीवत ही बलवान होंय, बल तेज अग्नि तनमें आवै।६०।

दो०—शिव संकल्प न पूर हो, विष्णू रच्यो उपाय ॥६१॥
बछरा विधि हरि गौ बने, पियो अमृत तहं जाय ॥६२॥

छं०-नहिं रोकें असुर भये मोहित, लखि पीछे मम यह कहते हैं।६३।
लखि शोक युक्त गति देव कही, सुर असुर न मेटा चहते हैं।६४।
निजपर प्रारब्ध न पलटि सकै, हरि ने शिव को बलवान किया।६५।
तप धर्म मयी रथ वेद अश्व, ध्वज सूत ज्ञान वैराग लिया।६६।
रथ चढ़ि शिव छोड़े तीव्र बान, अभिजित मुहूत जब आय गया।६७।
शंकर जी त्रिपुर भस्म कीना, दुदुंभी शब्द आकाश भया।६८।
सुर सिद्ध पितर जय जय कहते, अप्सरा पुष्प बर्षें नाचैं।६९॥
ब्रह्मादिक स्तुति करैं शंभु, झट त्रिपुर जारि निज पुर राचैं।७०।

दो०—हरि माया पति के चरित, गाये बहुत अपार।
कहैं काह नृप कहिं सुनै, होहिं अधम भव पार ॥७१॥

भजन-हरी की महिमा अपरंपार ॥
मारि दैत्य जन अपन बचायो, बने बिकट रखवार।
दै बरदान सुखी करि दीनो, दीन पिता अधिकार॥
त्रिपुरासुर अति प्रवल रह्यो, सब गये देवता हार।
हरि सहाय से एक पलक में, शंकर कीनो छार॥
सब विचार हिय निर्णय करिकै, कीन यहै निरधार।
माधवराम श्याम गुण गाये, है भव से उद्धार॥

इति श्री० भा० भा० सरसकाव्यनिधौ सप्तमस्कंधे दशमोऽध्यायः

* श्रीगणेशायनमः *

श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्य निधौ ।
सप्तम् स्कंधे एका दशोऽध्यायः ॥

श्लो०—एकादशे नृणां धर्माः साधारण्येन वर्णिताः ।
विशेषेण चवर्णानां मुख्यामुख्या श्चयोषिताम् ॥१॥

दो०—दश तक ज्ञान भक्ति कहि, कर्मयोग अब पांच ।
ग्यारह में सब धर्म शुभ, वर्णन करते सांच ॥

छं-श्रीशु-उ०-हरिचरितसाधुसंमतसुनिकै, करिहर्षयुधिष्ठिरप्रश्नकरैं।
विधि सुत नारद प्रसन्न हियह्वै, हरि चरित कथन मन माहिं धरैं।१।

यु०-उ० मुनिधर्मसनातन सुनाचहैं, वर्णाश्रम जिससेहरिमिलते।२
विधि पुत्रों में तुम ब्रह्मचर्य ब्रतधारी, तपसे नहिं हिलते ।३।
हरि तत्पर द्विज लखैं गुप्त धर्म, जे साधु शांत तुम सम औरहु।
हैं दयावान हिय अति कोमल, हरिको निरखै हैं सब ठौरहु।४।

नारद उ०-नारायण पद करि नमस्कार, हम गुप्त सनातन धर्म कहैं।
जो नारायण के मुखसे सुने, करि कर्म धर्म जग सुखी चहैं।५।
हरि दक्षसुता में जन्म लिया, जग हित बदरीबन तप ठानै ।६।
धर्म ही मूल सुर मय हरि हैं, तरि आत्मा जो धर्महि जानै ।७।
सत दया शौच तप तितेक्षा, शम दम ब्रह्मचर्य त्याग स्वाध्याय।८।
संतोष अहिंसा सरल भाव, समदृक सेवा उपरति लाय ।
जग सुखसे उलटी इच्छा रख, गहि मौन आत्म निर्णय करना।६।
जीवों के अन्नादिक विभाग, तहं देव आत्म बुद्धी धरना ।१०।

हरि कथा श्रवण सुमिरन कीर्तन, जन सेवा पूजा नमस्कार।११।
आत्मा अर्पण सखा दास भाव, नर धर्म सधारण तीस प्रकार।१२।

दो०—हरि प्रसन्न द्विज धर्म यह, यज्ञ पठन अरु दान।
अविछिन्न संस्कार सब, आश्रम वर्ण प्रधान ॥१३॥

छं०-द्विज कर्म यजन अध्यनय आदि, षट कर्म प्रतिग्रह नहिं लेना।
क्षत्री कर[1] लेवै बिप्र छोड़ि, चहिये द्विज रक्षा कर देना।१४।
कृषि आदि वैश्य की वृत्ति कही, द्विज मान शूद्र सेवा करते।१५।
जीविका बिप्र की कृषि[2] निकृष्ट, बिन मांगे मिलै गुज़र धरले।
नित मांगि अन्न खावै न धरै, शिल उंछौ खेत वजार अन्न ॥
ब्राह्मण की जीविका चारि अहैं, आखिरी श्रेष्ठ द्विज करैं धन्य।१६
नहिं नीच ऊंचि जीवका करै, आपति में नृप करै दान न ले।१७
ऋतअमृतप्रमृतमृतसत्यानृत, करिकै द्विजनृप श्ववृत्तितजदे।१८

दो०—शील उंछ ऋत वृत्ति है, अमृत मांग बिन पाव।
नित्य याचना वृत्ति मृत, खेती प्रमृत कहाव ॥१६॥

छं०-सत्यानृत वृत्ति वणिज जानौ, श्ववृत्ति नीच सेवा कहिये।
द्विज क्षत्री याहि अवशि त्यागैं, द्विज वेदमयी नृप सुर रहिये।२०
शम दम तप शौच क्षांति सरलौ, संतोष ज्ञान सत दया भाव।
आत्मा अर्पण हरिमें नितही, यह ब्राह्मण लक्षण वेद गाव।२१।
शूरता वीरता तेज त्याग, धृति क्षमा आत्म जय चित आनै।
ब्रह्मण्य प्रजा रक्षा प्रसन्न, क्षत्री के लक्षण पहिंचानै।२२।

१ महसूल २ खेती

गुरु देव हरी में द्विज भक्ती, द्विज क्षत्रि शूद्र पोषण करना।
आस्तिकउद्यमअतिनिपुणहोय, यहवैश्यकेलक्षणचितधरना।२३

दो०—नमन साफ सेवा करैं, माया कपट न लाव।
हवन मंत्र बिन शूद्र को, गो द्विज रक्षा गाव ॥२४॥

छं०-तिय सेवा करि पति ब्रत धारैं, पति कुटुम्ब के अनुकूल रहैं।२५।
गृह साफ लीपना आदि करैं, शृंगार युक्त तन शुद्ध लहैं।२६।
ह्वै नम्र जीति इन्द्री सेवैं पति, सत्य बचन कहि समय से मिल।२७।
संतोष धर्म प्रिय सत्य वाहै, तजि लालच सावधान निश्चल।२८।
जो विष्णु तुल्य पति को सेवैं, हरि लक्ष्मी ह्वै हरि लोक रहैं।२९।
संकर जाती अंत्यज है सात, चोरी औ पाप तजि वृत्तिकहैं।
धोबी चमार नट औ बेड़िया, मल्लाह मेद भिल्लहु ये सात।
पुल्कस चंडाल मतंग आदि, अंते वसायि कहलावैं जात।३०।

दो०—युग युग धर्म स्वभाव युत, हित कर ह्यां ह्वां गाव।
श्रेष्ट चहै पर धर्म तजि, नीच स्वधर्म मनाव ॥३१॥

छं०-निज स्वभाव की जीविका करै, जाती के कर्म करि सुख पावै
तजि कर्म जीविका स्वभाव के, ह्वै विगुण जीवको दुख छावै।३२
निज कर्म किये निर्गुण होवै, हो बीज विफल बहु बार बये।
नहिं जन्म होय जगमें नरका, बये बीज न दें अंकुरहु नये।३३।
इस भांति काम में फंसो चित्त, बहु काम भोगि विराग लेवै।
बहु घृत डारे हो अग्नि शांति, जग सुखमें निज मन नहि देवै।३४

१ ऋतु काल

दो०—लक्षण और वर्ण के, और ठौर दिखराहिं।
समता तुल्यपना कहै, प्रतक्ष में सोनाहिं ॥३५॥

भजन-सनातन धर्म की महिमा, शास्त्र वेदों में गाई है ॥
गहै जो धर्म यह सच्चा, मुक्ति अपनी बनाई है।
चार वर्णों के चौवारे, बिप्र क्षत्री वैश्य शूद्र हु ॥
कर्म अपने करें सबही, दिलसे मिल्लत सवाई है ॥१॥
यज्ञ करना वेद पढ़ना, पढ़ाना दान ले देना।
विप्र संतोष तप धारैं, तभी द्विज की भलाई है॥२॥
करै रक्षा सदा क्षत्री, प्रजा से भूमि कर लेवे।
विप्र मानै शूरता धर, करै रणमें लड़ाई है ॥३॥
वश्य रुजगार गो पालै, करै पोषण वर्ण तीनौं।
दास वनि शूद्र सेवा करि, सुगति माधव से पाई है ॥४॥

इतिश्रीमद्भागवतेभाषासरसकाव्यनिधौसप्तमस्कंधेएकादशोऽध्याय

॥ श्रीगणेशायनमः ॥

श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ सप्तम स्कंधे द्वादशोऽध्यायः ॥

श्लो०—द्वादशे वर्ण्यते धर्मो ब्रह्मचारि बनस्थयोः।
चतुर्णामाश्रमणांच साधारण्येन कश्चन ॥१॥

दो०—वनस्थ ब्रह्मचर्य को, धर्म बारहें माहिं।
चारों आश्रम धर्म हूं, थोरे महं कहि जाहिं ॥

छं०ना०उ०-लै ब्रह्मचर्य गुरुपास बसै, बनिदास सुहृद गुरुहितधारी।१
गुरुअग्नि सूर्य दोउ काल सेइ, गायत्री जप संध्या कारी।२।
गुरु आज्ञा शिर धरि बेद पढ़ै, पहले पीछे दंडौत करै।३।
मेखला चर्म मृग दंड आदि, यज्ञोपवीत कुश आदि धरै।४।
प्रात हू सांझ भिक्षा लावै, गुरु कहै खाय नहिं ब्रत धारै।
लघु भोजन शील जितेन्द्री रह, नारी से न लावै ब्यवहारै।६।
नारी की कथा बतकही तजै, इन्द्री हैं प्रवल मन हरि लेवैं।७।
अंजन मंजन केशहु सुधार, तियसे नहिं आपहु तन सेवैं।८।

दो०—नारी अग्नि समान है, घृत घट नरको जान।
कन्या से नहिं अलग मिलु, युक्ति यहै हिय आन।९।

छं०-जब तक आभास जगतजचकर, आत्मास्वतंत्र नहिं होईश्वर।
तबतक स्त्री से बचा रहै, हो भोग बुद्धि रह द्वैत से डर।१०।
ऋतु गामी गृहस्थ निज तियमें, यति को संयम करना चहिये।११
अंजन मंजन मधु तेल माल, भूषण तन नहिं धरना चहिये।१२।
गुरु पास बास करि पढ़ि विद्या, भर पूर जहां तक बनि आवै।१३।
गुरुदक्षिना दे होवै गृहस्थ, या नैष्ठिक ब्रत धर वन जावै।१४।
अग्निहु गुरु आत्मा सब जगमें, ईश्वर प्रवेश औ अलग लखै।१५
ब्रह्मचारी वानप्रस्थ यती, लहि ज्ञान ब्रह्ममें मिलि न झखै।१६

दो०—वानप्रस्थ नियम सुनो, करि जावैं ऋषि लोक ।।१७।।
जोता कच्चा फल न ले, पक्का ले तजि शोक ।।१८।।

छं०-बनही की वस्तु से हवन करै, लहि नया अन्नतजि दे पुरान।१९
झोपड़ी कंदरा माहिं बस, सहि शीत घाम वर्षा सुख मान।२०।

नखरोम केश शिर जटा धरै, मृग चर्म दंड आदिक सामान ।२१।
बारह आठौ दो चार एक, वर्षहिं ब्रत ले नहिं हो हैरान ।२२।
नहिं होंय क्रिया तनरोग वृद्ध, अनशन ब्रत धरि ब्रह्महि ध्यावै ।२३
तजि संग अग्नि हियमें धरिकै, ममतातजि ब्रह्महि मिलि जावै ।२४
तन छिद्र अकाश में बायु स्वांस, जलमे रुधिरादिक सबमें सब ।२५
बानी अग्नी में इन्द्र मे कर, विधि में इन्द्री हरिमें कर तब ।२६।

दो०—गुद इन्द्री धरि मृत्यु में, दिशि में कानहु धार ।
स्पर्श वायु में धारकै, योगी हो भवपार ॥२७॥

छं०-रबिमें धरि नेत्र बरुण जिव्हा, पृथ्वी में घ्रान[1] इन्द्री धरिकै २८
मन चंद्र में विधिमें बुद्धि धरै, हंकार रुद्र अर्पण करिकै ।
चित निर्विकार ब्रह्महि में धरै, क्रमसे सब तत्वहु लय लीजै ।२९।
महि जलमें अग्नि में जल अग्नी, बायू आकाश लीन कीजै ।
आकाश अहं में महत में वह, फिर महतत्व प्रकृती में धर ॥
प्रकृतीहु ब्रह्म में लय करके, हो योगी ब्रह्मरूप हर बर ।३०।

दो०—अक्षर आत्मा चित लखै, ब्रह्म अंत में शेष ।
काष्ठ जरे पर अग्नि ज्यों, धारै रूप विशेष ॥३१॥

भजन-नियम सब आश्रम करत बखान ॥
ब्रह्मचारी गुरु अग्नीसे वै, भिक्षा ब्रत ले ठान ।
गुरु दक्षिना दै गृहस्थ होवै, ऋतु गामी न गुमान ॥
वानप्रस्थ शक्ति भर,रहिकै, ले संन्यास विधान ।
पंचतत्व लय करि क्रम २ से, पद लेवे निर्वान ॥

१ नाक

माधवराम भक्त नित चाहैं, भक्ति करैं गुनगान ।
इतिश्रीमद्भागवतेभाषासरसकाव्यनिधौसप्तमस्कंधेद्वादशोऽध्यायः

श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्य निधौ । सप्तम् स्कंधे त्रयोदशोऽध्यायः ॥

श्लो०—त्रयोदशे यतेर्धर्मः साधकस्योच्यतेमहान् ।
अवधूनेतिहासेन सिद्धावस्थाच वर्ण्यते ॥१॥

दो०—तेरह में यति धर्म कहि, साधक हेतु सुपास ।
सिद्धावस्था कहत हैं, अवधूतहु इतिहास ॥

छं॰ना-उ०-संन्यासधारितनमात्रसंग,बसिग्रामएकनिशिमहिबिचरै ।१
कौपीन दंड संन्यास चिन्ह, बिन बिपत्ति न कुछ तन माहिं धरै ।२
इकला बिचरै नहिं संग कोय, जग मीत शांत नारायण पर ।३।
आत्मा में जग हरिमें आत्मा, सत परब्रह्म आत्मा में धर ।४
लखि आत्म तुरीय माहिं थिर हो, माया मय बंध मोक्ष जानै ।५।
नहिं चहै मृत्यु नहिं बहु जीवन, दोनों में काल हेतु मानै ।६।
जीविका न कर पढ़ असल शास्त्र, नहिं बिवाद कर कोइ पक्षलेय ।७
बहु ग्रन्थ पढ़ै नहिं शिष्य करै, नहिं ब्याख्यान में चित्त देय ।८

दो०—आश्रम है यति के नहीं, जब चित शांती आव ।
धारै चिन्ह चहै तजै, परमहंस गति पाव ॥६॥

छं०-नहिंप्रगटचिन्ह बालकसमरह,पंडित गूंगासम आत्मलखै।१०
प्रहलाद भक्त मुनि अजगर को, धारि हिय फिर न झखै ।११

कावेरी तट गिरि पर पौढ़े हैं, तेज छिपा धूरी से तन ।१२।
महि फिरैं तत्व जानिवे हेत, संग मंत्री लै प्रहलाद सुजन।१३।
वर्णाश्रम चिन्ह न करतबसे, हैं संत न कोइ पहिंचान सकै।१४।
करि पूजन नमस्कार शिरसों, पूंछते विचित्र स्वरूप तकै।१५।
तन धरे थूल ज्यों भोगी का, हों भोग धनीके बनिजंसधन ।
तन भोगी का मोटा होवै, किमि थूल होय तपसी निरधन ।१६

दो०—उद्यम तजि महि सोवते, पास नहीं धन भोग ।
भोग रहित किमि थूल तन, कहो विप्र सब योग ।१७।

छं०-कबि दक्ष चतुरतव सुघरकथा, लखिलोककर्म कुछनहिंकहते
देखते समझते मौन गहे, मुनि शिक्षा हम सुनना चहते।१८

ना०-उ०-प्रहलाद दैत्य पति जबऐसे, प्रियसत्यबचन अजगर सेकहे
ह्वै प्रसन्न हंसिकै बोलि चले, यद्यपि पहले मुनि मौन रहे।।१९।

ब्राह्मण उ०-हो भक्त श्रेष्ठ प्रहलाद सुनौ, सुप्रवृत्तिनृवृत्तिसुनाते हैं।
देचाह प्रवृति जन्म जगमें, उपराम से निरवृति पाते हैं ।२०।
जिसके हियमें भगवान बसैं, भक्ती से नाश करैं अज्ञान ।
हो हृदय माहिं हरि छबि प्रकाश, ज्यों तम नाशैं सूरज भगवान।२१

दो०-कहत प्रश्न तव बुद्धि भरि, तुम भक्तन शरताज ।२२।
तृष्णा से जग जन्म लै, कीन्हे बहु विधि काज ।२३।

छं०-भूमि हरि इच्छासे नर तन मिल, है स्वर्गनर्कमुक्तिहुका द्वार २४
लखि कर्म गृहस्थी सुख न लहै, दुख देखि निवृत्ती लीनी धार ।२५
सब इच्छा तजि लखि आतम सुखी, मन कल्पित भोग देखि सोवैं २६

आत्मा का इसी में स्वारथतजि, नरघोर जगत दुख लहि रोवैं।२७।
काई में छिपा जलतनमें आत्म, मृग मूढ़ मनुज मृग जलधावैं।२८
प्रारब्ध के बश तन भोग अहैं, सबवृथा क्रिया सुखहित लावैं। २६।
अध्यात्म ज्ञान से दुख छूटैं, क्या अर्थ काम इस बिनकरि हैं। ३०।
हैं धनी दुखी लालच के बश, तजि नींद भूख दुख में परि हैं। ३१।

दो०—चोर नृपति रिपु स्वजन से, याचक से भय दून ॥
निज पर से दिनराति भय, धन नितसोखत खून ॥३२॥

छं०-भय शोक मोह क्रोधादिक हैं, पुनि मृत्यु मनुजधनचाहतजै॥
संतोष विराग हेतु दो गुरु, मधु मक्खी सर्प से सीख सजै ॥ ३४ ॥
सबसे विराग मधु मक्खी दे, मधु धन जोरैं औरहि हरले ॥३५॥
बिनचहे भागसे भोजनमिल, सिख अजगर से नहिं व्रतकरले। ३६
कहं बहुत थोर कहु स्वादु रूख, रसवाला कहीं निरस भोजन। ३७।
बिन मान कभी श्रद्धासे मिलै, मिलता है रातमें कबहूं दिन। ३८।
कहुं बस्त्र रेशमी चीरबकल, प्रारब्ध पै हमने सब छोड़ा॥ ३९॥
कहुं पलंग कहूं मही पै पड़े, इस झगड़े से मनको मोड़ा ॥४०॥

दो०—न्हाय कभी चंदन लगैं, माला बसन शृंगार।
हाथी हय रथ पै चढ़े, पैदर कहूं उघार ॥४१॥

छं०-नहिं किसीकी निंदा स्तुतिकर, भलचहैं आत्माहरिमेंलिये।४२।
कल्पना हवन की मनमें सब, मनचित मेंचित आत्मा दिये।४३।
वेचाह आत्म थिर लै विराग, सुखमय आत्मा से रहते हैं॥४४॥
मम चरित लोकशास्त्रहुसेअलग, तुमभक्त समझ हम कहते हैं ४५

दो० नारद उ०-परमहंस शुभ धर्म सुनि, मगन हृदय प्रहलाद ॥
पूजि बिदा ह्वै गृह गये, छोड़े सकल बिषाद ॥४६॥

॥ भजन ॥

सन्यास धर्म जिन लियो धार। तिनके चहिये निर्मल बिचार ॥
तजि तर्कबाद चेला मूंडव। एकांत बास रह निर्विकार ॥
नहिं लेश दिखाव शरीर मांहिं। प्रारब्ध भोग पर है अधार ॥
इच्छा त्यागे संतोष धरे। राखहिं नतिलौभर अहंकार ॥
चितशांत दृष्टि समताआई। सब द्वैत वृत्ति करि दीनछार ॥
आधवराम होत हैं परमहंस। भ्रम जाल पलक में भयेपार ॥

इति श्री० भा० भा० सरसकाव्यनिधौसप्तमस्कंधे त्रयोदशोऽध्याय:



श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ सप्तम स्कंधे चतुर्दशोऽध्यायः ॥

श्लो०-चतुर्दशे गृहस्थस्य परमोधर्म ईर्यते ।
देशकालादिभेदेन पुनःश्रेयो बिशेषकृत् ॥

दो०-परम धर्म बर्णन करै, जासों हो कल्यान।
गृहस्थ आश्रम के रहैं, चौदह माहिं बखान ॥

छं०युधि०उ०किसभांतिगृहस्थयहै पदवी,मुनिवरपावैदतलादीजै।
गृहमांहिं फस्यो ममतुल्य मूढ़, उद्धार हेत युक्ती कीजै ॥१॥
नारद उ० गृहमेंरहिकर्मगृहस्थकरै, करि हरिअर्पण मुनिजनसेवैं।
हरि कथा सुनै श्रद्धा से नित, संग शांत भक्त हरिजन लेवै ॥३॥
सत संग से सुत तिय संग तजै, सब स्वप्न तुल्य छुटि हैं छोडै ॥४॥
मतलब भर गृह तन से है काज, ऊपर रहि हिय से मन मोडै ॥५॥
पितु मातु जाति सुत भाय मित्र, जो कहैं करै ममता त्यागे ॥६॥
महि स्वर्ग सकल सुख हरिनेरचे, प्रारब्ध भोग आवै आगे ।७।

दो०—भरै पेट सो अपनधन, अधिक गुनै सो चोर ।
दंड पाइहै नर्क दुख, लेहिं औरही छोर ॥ ८ ॥

छं० मृग कपि खर माखी सर्प कीट, सुतसम जानै नहिं भेद धरै ।९।
गृह सुख नहिं चित देकै भोगै, लहि देशकाल निर्वाहकरै ॥१०॥
चंडाल श्वान को देयभाग, तियकरै कर्म करि सकै न आप ॥११॥
तजि प्राण पितागुरु को मारै, अजितेन्द्री तियजित करता पाप १२
कृमि बिष्टा भस्म देह संज्ञा, क्या प्रीति नारि की गगन मढै ॥१३॥
मखशेष से अपना जीवनकर, तजि सबसे स्वत्व मुनिगती बढै।१४
ऋषि देवपितृ अरु अतिथि पूजि, निजवृत्ति से धनला हरिपूजै ।१५
सब यज्ञ की संपति बिधि से मख, करि अग्निष्टोम हजूर हूजै ॥१६॥

दो०—तसहरि खांयन अग्नि मुख, जस द्विज मुख से खांय ।
करैं तृप्त द्विजको सदा, पूर काम ह्वै जांय ॥१७॥

छं०-पितृ श्राद्ध भाद्र महिनामें करै, सब कुटुंब की धन खर्च करै ।१६
उत्रायन ब्यती पात मावस, शशि सूर्य ग्रहण द्वादशी धरै ॥२०॥
अख तीज शुक्ल नौमी कातिक, अष्टिका चार श्रवणौ पायै ॥२१॥
पुनि शुक्ल सप्तमी माघ मास, शशि पूर्ण मासराका गायै ।
शशि न्यून अनुमती पूर्णमासि, युत मास नखत में पिंडदान ।२२।
अनुराधा श्रवण तीन उत्रा, एकादशि जन्म नक्षत्र वखान ।२३।
यह काल पवित्र श्रेय करहैं, ह्यासु कर्म करि नहिं नाशैफल ।
स्नान होम जप ब्रत पूजन, सुर मुनि सुदान अति होय सुफल २५

दो०--तिय सुत संसकार लखि, जन्म मृतक सब कर्म ।
यथा शक्ति धन खर्च करि, साधै सब यहधर्म ॥२६॥

छं-अब हितकारी सबदेश सुनौ, वहपवित्र थलजहं सु पात्र मिल २७
हरि रूप सुपात्र विप्र कहियै, फिर अधिक और तप विद्यादिल २८
हरिके सरूप जहांपधरे हों, गंगादिक पुण्य नदी आई ॥२९॥
पुष्कर कुरुक्षेत्र गया प्रयाग, पुलहाश्रम तीर्थ भूमि गाई ॥३०॥
नैमिष प्रभास सेतहूं बंध, काशी मथुरा अरु मातृ गया ॥३१॥
नारायण सर नंदा सीता, गिरि मलय महेंद्र पवित्र भया ॥३२॥
यह पवित्र हरि के रूप यहां, फल सहस गुना शुभ कर्म किये ॥३३॥
हरि मय हिय जिह को सो सुपात्र, जगमें हरि देखै चित्तदिये ।३४।

दो०-देव ऋषी मुनि ब्रह्मसुत, आदिक जौन प्रधान ।
पात्र सबहिं मे एक हरि, पूजन हित हिय मान ॥३५॥

छं०-ब्रह्मांड जीवसे परि पूरण, हरि मयसों सब शास्त्र कहैं ।
हरि के पूजे सब जगत तृप्त, जड़ सींचे तरुसब हरे रहैं ॥३६॥

सुर नर पशु कीट रचो जग सब, सबही में आप बिराजि रहे ।३७।
है सुपात्र ज्ञानी हरि आत्मा, जगमें हरि निरखै ज्ञान लहै ।।३८।।
विस्मृती देखि त्रेतादिक में, कबि हरि मूरति थापन कारी ।३९।
फल लहैं मूर्ति पूजन करके, जन द्रोही पूजि न फल धारी ।४०।

दो०—सब में बिप्र सुपात्र है, धरि तप तुष्टी बेद ।।४१।।
हिय धरि कृष्ण चरण रज, हरै जगत के खेद ।।४२।।

भजन—गृही सब आश्रम मांहि प्रधान ।।
करै कर्म निज वर्णाश्रम के, कर अर्पण भगवान ।
श्राद्धादिक तीर्थाटन जावै, देहि बिबिधि विधि दान ।।
दान पात्रमें सबसे बढ़िकै, संतोषी द्विज जान ।
भजै कृष्ण हरि मय जग देखै, तुल्य मान अपमान ।।
माधवराम स्वप्न सम जग लखि, करै नित्य गुन गान ।

।। श्रीमद् भागवतेभाषासरसकाव्यनिधौ सप्तमस्कंधेचतुर्दशोऽध्यायः ।।

।। श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ सप्तम स्कंधे पंचदशोऽध्यायः ।।

श्लो०-ततः पंचदशे सर्ववर्णाश्रमनिवंधनम् ।
सारतः संग्रहेणाथ वर्ण्यते मोक्ष लक्षणम् ।।

दो०—वर्णाश्रम का सार सब, लक्षण मोक्ष बखान ।
पंद्रह मे वर्णन करें, थोरहि में सब ज्ञान ।।

ना-उ-द्विजकर्मनिष्ठकोउतपोनिष्ठ,कोउज्ञानयोगनिष्ठहुस्वाध्याय१
ज्ञानही निष्ठ को देय देव, सुरभाग औरहू को मन लाय ।२।
विश्वे देवों के दो ब्राह्मण पितृ हेत, निमंत्रित बिप्र तीन ।
एकही एक दो तरफा हों, विस्तार श्राद्ध में नाहि लीन ॥३॥
श्रद्धा वस्तू शुभ देशकाल, विस्तार में पात्र उचित न मिलैं ॥४॥
हरि अर्पित देश काल श्रद्धा, दे सुपात्रमें फल अक्षत फलैं ॥५॥
सुर पितृ भूत आत्माहु स्वजन, सब हरि मय लखि भोजनशुभदे ६।
नहिं मांस श्राद्धमें कलियुग में, हिंसा तजि खीर पिंड हितले ॥७॥

दो०—परम धर्म जे चहत नर, यह सम धर्म न आन ।
मन बानी तन दंडदै, संयम विधिसे ठान ॥८॥

छं०-ज्ञानी तजि कर्ममयी मखको, आत्मज्ञानाग्नि मन हवन करै ।९
डरते हैं द्रव्यमय यज्ञों से, निर्दयी जीव हनि धर्म धरै ॥१०॥
मुनि अन्नहि से संतोषी ह्वै, नित अतिसुर पितृ धर्म साधै ।११।
पर धर्म विधर्म आभास धर्म, उपमा छल धर्म न आराधै ।
यह अधर्म शाखा धर्म तुल्य, गुनि अधर्म धर्मात्माहुतजै ॥१२॥
बाधक स्वधर्म से विधर्म है, पर धर्म और धर्महि न भजै ।
उपमान धर्म पाखंड गुनौ, छल धर्म शब्दका अर्थ पलट ।१३।
इच्छा से करै आभास धर्म, करो निज २ वर्ण धर्म झट पट ।१४

दो०—धर्म तीर्थ हित चहै नहिं, नर निर्धन धन आप ।
अजगर सम संतोष धरि, चाह तजै छुट ताप ॥१५॥

छं०-संतुष्ट चाह बिन आत्म राम सुखपावै, कामी लोभी नहिं ।१६
संतोषी को सुख दशौ दिशा, कांटे न लगै पद जूता गहि ।१७।

जस तस जलसे संतोष धरै, चहि विषय श्वान सम हो जावैं ।१८।
घट फूटे जल बहता जैसे, नहिं ज्ञान कभी थिरता पावै ।
तप विद्या तेज यश ब्राह्मण का, संतोष बिना हो जांय छीन।१६
हो भूख प्यास से, काम नाश हो क्रोध नाश जब हिंसा कीन ।
नहिं लोभ का अंत कभी पावै, चहै दशौ दिशा सुख भोग करै ।२०
पंडित बहुज्ञ संशय छेदक, पति सभा तोष बिन नरक परै ।२१।
संकल्प त्यागि कामहु जीतै, तजि काम क्रोध से जय जोड़ै।
तजि चाह लोभ से जय पावै, तत्वहु बिचारमे भय छोड़ै ।२२।

दो०—शोक मोह जय ज्ञानसे, दंभहि जय सत सेय ।
तनसुख तजि हिंसा जितै, मौन विघ्न जय देय ॥२३॥

छं० मन वश करि प्रारब्धहि जीतै, करि दया जीव के दुख भागै ।
आत्मा विकार करि योग तजै, सत भोजन से निद्रा त्यागै ।२४
सत गुण से जीतै रजतम गुण, शांती से सत गुरु भक्ति से सब ।२५
सत ज्ञान दायि गुरुको नर गुनि, गज ह्नान तुल्य हो सब करतब ।२६
प्रत्यच्छ हरी गुरु साच्छात, अज्ञानी तिन्है मनुज मानै ॥२७॥
छशत्रु अंत तक नियम यमहु, नहिं जीते वृथा योग ठानै ॥२८॥
रुजगार न योग सत्य साधै, त्यों यज्ञ कूप आदिकहैं वृथा ॥२६॥
तजि संग त्याग लै चित जीतै, एकांत भीख भोजन ले वृथा ॥३०॥

दो०-थल पवित्र सम आसन, थिर ह्वै दृढ़ता धार ।
सरल अंग ॐकार जप, करै योग निरधार ॥३१॥

छं०-पूरक कुंभक रेचक धरिकै, नामाग्र लखै करि प्राणायाम ॥३२॥

मन रोकै जीतै फिरै न दे,धीरे से जबलौं तजै न काम ॥३३॥
करियितनजीतिचितकुछ दिनमें, विनकाष्ठअग्निसमशांतहोय ३४
चितशांत कामना रहित, ब्रह्मसुख पावै थिर ह्वै लेय टोय ॥३५॥
गृहत्यागिसाधुह्वै नारि तजी, तियभोगी श्वानछर्दि खावै ॥३६॥
तननाशमान आत्मा न लखै, लहिं बोधमूढ़ गृहफसि जावै ॥३७॥
जो क्रिया त्याग दे गृहस्थ ह्वै, ब्रह्मचारी ब्रह्मचर्य त्यागै।
ह्वै बाणप्रस्थ ग्रामहि सेव, संन्यासी इन्द्री सुख मांगै ॥३८॥

दो०-आश्रम निंद कहैं मही, धरे बिंडबन रूप।
माया मोहित तिन्है लखि, त्यागै नर्क निरूप ॥

छं०-जबचितशुधह्वै आत्मादेखा, किसहेतुमूढतनपालनकर ॥४०
रथ शरीर इन्द्री घोड़े हैं, मन वागडोर हिय भीतर धर।
है विषय यात्रा मार्ग खोट, सारथी बुद्धि है बंधन चित ॥४१॥
दशप्राण आंक धर्महु अधर्म, है पहियै जीवरथी लखहित।
धनु ॐकार शर शुद्धि जीव, परमात्मा लक्ष्य सदा निरखै ॥
जगजालछोड़मिलजायब्रह्म,दुखसिंधुजगतपड़िफिरन भखै ॥४२॥
भय मदहुलोभ प्रीती बैरहु, शोकहू मोह अपमानमान ॥४३॥
माया हिंसा मत्सर ईर्षा, रजप्रमाद भूखप्यास रजजान ॥४४॥

दो०-जब लौं देह स्ववश अहै, हरि गुरुपद नितसेय।
ज्ञान खड्ग लै जीति जग, स्वराजलै तजि देय ॥४५॥

छं०-इन्द्री घोड़े मतवारे हैं, कहिं विषय कुपथ नहिं लै जावैं।
कामादि शत्रु धन धर्म लूटि, भवसिंधु नर्क दुखमें नावैं ॥४६॥

निरवृत्तिप्रवृत्ति कर्म दोहैं, बंधन प्रवृत्ति दे निवृत्ति मुक्ति ॥४७॥
यज्ञादि कामना सहित सबै, पशुहिंसा युत सब हैं प्रवृत्ति ॥४८॥
सुर मन्दिर मखकूपा दिरचन, अग्नी होत्रादिक प्रवृत्तिकह ॥४९॥
धूमांत क्रिया दक्षिणहु अयन, शशिमावसबंधन मारगरह ॥५०॥
बनिअग्नि बीर्य पितृयान जन्म, लै लै पुनि मरते जाते हैं ॥५१॥
लै गर्भसे मशान तक करतब, ज्ञानाग्नि हवन बुधलाते हैं ॥५२॥

दो०—इन्द्री मन में हवन करि, मन विकार बुधि माहिं।
बुधि आत्मा में लीन करि, सो ॐकार समाहि ॥५३॥

छं०—ॐकार विंदु में नाद में बिंद, दिन सूर्य शुक्ल पखगति दाई।
लय विश्व तैजसो प्राज्ञ तीन, आतम तुरीयलखि सुखपाई ॥५४॥
यहदेवयानतनतजि न जन्म, थिरचितआत्मालहिभवन परै ॥५५॥
यह पितृयान अरु देवयान, गुनिशात्र दृष्टि नहिं मोह धरै ॥५६॥
बाहर भीतर आदिहू अन्त, ज्ञानहू ज्ञेय है स्वयं प्रकाश ॥५७॥
वस्तू से वाधित अभास है; इन्द्री वश ह्वै सतज्ञान नाश ॥५८॥
नहिं पंचतत्व छायातहं पर, सब विकार झूंठे निश्चय नित ॥५९॥
धातूमात्रादिक झूंठे सब, अंगी सत है नहिं कुछ संयुत ॥६०॥

दो०—भ्रम तब लौ है असत महं, समता सत में आव।
जागत सोवत स्वप्न भ्रम, रूप लखे मिटि जाव ॥६१॥

छं०—क्रियाद्वैतभावद्वैत द्रष्य, द्वैतहु तीनहु अनुभवसे नाश ॥६२
कारज कारण पट तंतु तुल्य, नहिं विकल्पभावा द्वैत प्रकाश ॥६३॥
जन मनवच क्रिया ब्रह्म अर्पण, सबकर्म क्रिया अद्वैत कहैं ॥६४॥

तनतियापुत्र सबतन धारी, लख ब्रह्मसो द्रव्याद्वैत अहैं ॥६५॥
जिसको जो कर्म निषेध कहा, तजिबिपति स्वप्नमेंनाहिं करै ॥६६॥
वेदोक्त कर्मकरि गृहस्थसत, नृप घरही में निज मुक्ति धरै ॥६७॥
ज्यों आप युधिष्ठिर हरिपद गहि, दुस्तर विपत्ति चट पार गये।
सब जीति यज्ञ कीनी तुमने, श्रीकृष्ण सहायक नित्य भये।६८॥

दो०—उपवर्हन गंधर्व हम, प्रथम काल के माहिं।
रूपमधुर मोहैं तिया, लंपट पन अधिकाहिं॥

छं०—गंधर्वअप्सराबृन्दसंग,विधिसभामाहिंमिलिगानलिया॥७१
नारी में मोहित हम गावैं, अपराध देखि विधिशाप दिया॥७२॥
हो शूद्र भयेदासी सुत हम, सतसंत सेय विधि पुत्र भये॥७३॥
कहा गृही धर्म पापहु मोचन, करि यती तुल्य गति पाय गये॥७४॥
तुम धन्य गृहस्थ युधिष्ठिर नृप, जिनके घर ब्रह्मकृष्ण रहते॥७५॥
गतिप्रद हरिब्रह्म संत ढूढै, प्रिय सुहृद गुरु भाई कहते॥७६॥
ब्रह्मादिक रूप न वर्णि सकै, भक्ती से खुश हरिहो हमपर॥७७॥
श्री०शु०उ० नारदसेसुनिनृपहर्षितह्वै,पूजतेप्रेमअतिहीहियधर ७८

दो०—हरि अर्जुन से पूंछि मुनि, गे पूजित हरषाय॥७९॥
नृप विस्मित हरि ब्रह्मलखि, कही सृष्टि हम गाय॥८०॥

भजन—गृही आश्रम सबका आधार।
ब्रह्मचारी सन्यासी सबही, पावत तहां अधार।
प्रेत पितर मुनि देव विश्नुशिव, सबको पूजन हार॥
जीव जन्तु पलि सकैं यहीं से, सबै धर्म निस्तार।

छोड़ि झूंठ हिंसा निंदा पर, बुरे कर्म व्यभिचार ॥
नरनारी निज कर्म धर्म करि, लेवैं जन्म सुधार ।
माधवराम गायगुन छलतजि, भवसे ह्वैं जा पार ॥

इति श्री० भा० भा० सप्तमस्कंधे पंचदशोऽध्यायः समाप्तः ।



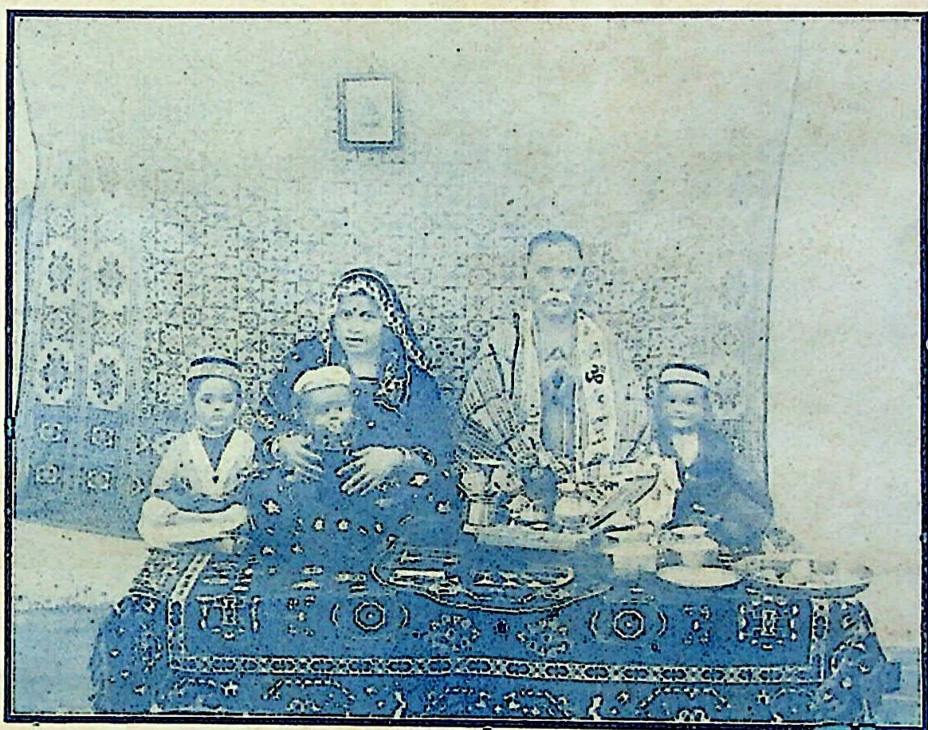


॥ इति सप्तम स्कंधः समाप्तः ॥

श्रीमान् लाला भवानीप्रसादजी के पौत्र श्रीमान् लाला शिवनारायणजी के पुत्र

श्रीमान् लाला रामगोपालजी खत्री (सेठ)

रईस, कानपुर।



आप सच्चरित्र, एकपत्नीव्रत, उदार तथा भगवत्प्रेमी हैं। आपकी धर्मपत्नी पतिव्रता, सती तथा आपका पूर्ण अनुकरण करनेवाली हैं। इसी कारण ग्रन्थकर्ता ने संसारी पुरुषों की उपमा के लिये अनुरोध करके इस प्रकार का सपत्नीक चित्र दिया।

आप के शिवसेवक तथा शिवशरन नामक दो चिरंजीव हैं।

आप तन मन धन से सहायक हैं।

मरचेंट प्रेस, कानपुर।



T



॥ अष्टमस्कंधः प्रारम्भः ॥

श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ अष्टम स्कंधे प्रथमोऽध्यायः ॥

श्लो०—तत्र तु प्रथमे स्वायंभुवः स्वारोचिषस्तथा ।
उत्तमरतामश्वेति चतुर्मनुनिरूपणम् ॥१॥

दो०—चौबिश शुभ अध्याय में, आठौं स्कंध बखान ।
तहां प्रथम अध्याय महँ, चारमनू सुबिधान ॥

छं०रा०उ०—स्वायंभूमनुकावंशसुना, अबऔरमनूचरित्रकहिये ।१।
जहँजहँ प्रगटे हरि किये कर्म, कवि कहैं सुनैं को चित चहिये ॥२॥
जिस मन्वन्तर में जौन चरित्र, हरि किया करेंगे अब करते ।
जग भावन चरित्र सुनै के हित, मुनिबर, हियमें श्रद्धा धरते ॥३॥
ऋषिरुवाच—इसकल्पमेंषटमनुबीतिगये, स्वायंभू प्रथममनू गाये।४।
आकूती देव हुती बेटी, उपदेश धर्म हित हरि जाये ॥५॥
सब कपिल चरित्र कहा हमने, भगवान यज्ञ का चरित कहैं ॥६॥
स्वायंभूमनु रानी के सहित, बनजाय तपस्या करत अहैं ॥७॥
दो०—एक पैर से वर्ष शत, पुरी सुनंदा माहिं ।
खड़े घोर तप करि रहे, ऐसे बचन कहाहिं ॥८॥

मनुरु उ०-जोसकलविश्वचेतनकारी, जिसकोनहिंविश्वप्रकाशकरै
जग नहिं जानै वह जग जानै, जग सोवै वह जागना धरै ॥९॥

ईश्वर से सब जग चेतन है, जितनी जग वस्तु प्रभू की गुनौ।
जो ईश्वर दे सो करौ भोग, मत लेहु किसी की वचन सुनौ ॥१०॥
वह देखै जिसको लख न आंख, जगबास शुभांग भजौताही ॥११॥
नहिंआदि मध्य अंतहु जिसका, निज पर वाहर न मध्य जाही ।१२।
जिससे हैं जग के आदि अंत, जिससे जग सत्य दिखावै है।
जग देह जासु अज स्वयं ज्योति, माया से जग उपजावै है ॥१३॥
दो०—आगे मुनि कर्महि करै, मुक्ति प्राप्ति के हेत।
परमेश्वरहु कर्म करि, अकर्मपन गहि लेत ॥१४॥
छं०-करि क्रिया नहीं ईश्वर फँसता, परिपूर्णकाम भजिभक्त तरैं।१५।
हंकार हीन वेचाह पूर्ण, मारग शिक्षक की शरण परैं॥१६॥
श्री० उ०-चितसावधानह्वै मंत्रजपै, लखिभक्षणहितधायें हैंअसुर १७
भगवान यज्ञ लखि देव संग, लै मारि तिन्हैं पाल्यो सुरपुर ॥१८॥
स्वारोचिष मनु दूसरे अहैं, सुत सुमत सुषेण हैं रोचिषमान ॥१९॥
तुषितादिक सुररोचन हैं इन्द्र, मुनि ऊर्जस्तंभादिक पहिचान ।२०।
ऋषिवेद शिरातुषिता पत्नी, बिभ नारायण अवतार लिया ॥२१॥
अष्ठाशी सहस मुनि ब्रह्मचर्य, ब्रत धारणको उपदेश किया ॥२२॥
प्रियब्रत सुतउत्तम तीसर मनु—स्टंजय पवनादिक जिनके सुत ।२३।
सुतवशिष्ठके प्रमदादिकमुनि, भद्रादिकसुर सुरपतिसतजित ।२४।
दो०—धर्म की नारी सूनृता, सत्यसेन भगवान ॥२५॥
प्रगटियक्षराक्षस कुजन, हनिकोनो कल्यान ॥२६॥
छं०—उतमके भाईमनु चौथे, तामस जिनके सुत ख्याती नर ॥२७॥
सत्यकहरि वीरादिक सुरहैं, मुनिधामादिक त्रिशिषहु[1] ईश्वर ॥२८॥

१ इन्द्र

सुरविधृति पुत्र वैधृत आदिक, जिन नष्ट बेद धारण कीने ॥२६॥
हरिमेधामुनि हरिणी नारी, प्रगटे हरिगज मुक्तिहु लीने ॥३०॥
राजोवाच—मुनिबर सुननेकी इच्छाहै, कैसे गजराज छुड़ायाहै ।३१
यह कथा पुण्य मंगलकारी, भगवतयश जिसमें गाया है ॥३२॥
सूत उ० दो०-नृपति परीक्षित शुकसुनहि, कथा प्रश्न जब कीन।
सब मुनि श्रोता जहां हैं, कथन प्रेम से लीन ॥३३॥

भजन—विविधि मनुमुनि, सुरहरि अवतार ।
विधिके दिनमें चौदह मनुहों, तिनके सुत हक़दार ॥
इन्द्रा मुनीश्वर न्यारे न्यारे, विविधि रूप हरिधार ।
स्वायंभू मनु प्रथम दूसरे, स्वारोचिष निरधार ॥
तीसर उत्तम चौथे तामस, लीला बहुत प्रकार ।
माधवराम गजेंद्र छुड़ायो, ग्रह हनिभक्त उबार ॥

इति श्रीमद् भागवतेभाषासरसकाव्यनिधौअष्टम स्कंधेप्रथमोऽध्यायः



श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ अष्टम स्कंधे द्वितीयोऽध्यायः ॥

श्लोक—द्वितीये तु गजेन्द्रस्य गजीभिः क्रीडतो जले ।
दैवाद्ग्राह गृहीतस्य हरिस्मृतिरुदीर्यते ॥

दो०—हथिनी संगले सिंधु में, कर क्रीडा गजराज ।
द्वितीय में ग्रह ग्रस्यो जब, सुमिरे हरिशिरताज ॥

छं०-शु-उ० दससहसऊंचगिरि त्रिकूटहै, तहंचीरसिंधुहैचहुं फेरे।१।
लोहा चांदी सोने के शिखर, है तीन उच्च नेरे नेरे ॥२॥
सब धातु रत्न द्रु तलतागुम्ल, झरनाके शब्द बहु सुन पड़ते ॥३॥
लहरों से सिंचत चहूं फेर, थल हरी मणीमय छबि धरते ॥४॥
सिध चारण विद्याधर आदिक, अप्सरा संग लै क्रीडाकर ॥५॥
सिंहहु गर्जहिं इकओर जोर, इकओर गानहो मधुर स्वर ॥६॥
वनपशु विचरैं बहु भांति जहां, पच्छी तरुवर विचित्र बोलैं ॥७॥
लहरों मे बालू अधिक विमल, विहरैं सुरनारि पवन डोलैं ॥८॥

दो०—वरुण देव का तहां है, वाग नाम ऋतुमान।
विविधि कंदरा जहँ सुभग, क्रीडा के स्थान ॥९॥

छं०—फलपुष्प दिव्यजहांसोहिरहे, मंदारपारिजातहु अशोक।१०।
तरु आम सुपारी त्रिया लहैं, नारियल हरैं शोभा सुरलोक ॥११॥
जहां ताल तमाल टेसू चंदन, अर्जुन मधूकवट हैं पाकर ॥१२॥
अमला बहेड़ रंभा जामुन, अमली मन हरती लहरा कर ॥१३॥
नींबूं कैथा तरु बेल आदि, जल माहिं कमल बहु फूलि रहे ॥१४॥
कल्हार कुमुद शतपत्र विविध,, गुंजरहि भौरगन झूलिरहे ॥१५॥
सारस बक हंस चक्र वाकहु, जल कुकुट मधुर स्वरहु बोलैं ॥१६॥
मछरी बहु कच्छय जलके जीव, आनंद सहित जलमें डोलैं ॥१७॥

दो०—कुंद कोरैया पुष्प बहु, खिले नाग पुन्नाग।
जाही जुही सुरंग जहं, फूले पुष्प विभाग ॥१८॥

छं०-मल्लिका माधवीकी आली, सो हैं वहुभांति तहां तरुवर।
मुनिमनमोहैं वनशोभालखि,तजिध्यानमगनमननिहारकार।१९।

इकबार उसी बनका बासी, गजराज संग हथिनी लैके।
तरुलता बांस तोड़त मोरत, चल भया न्हान हित मन देके ॥२०॥
जिसके मदकी सुगंध पाकर, गज व्याघ्रसिंह भग जाते हैं।
मृग गैड़ा आदि जीव सबही, भागते पास नहिं आते हैं ॥२१॥
वृकबराह बानर छोट जीव, निर्भय ह्वै उससे चरते हैं ॥२२॥
वह तपित घामसे मदबहता, कंपती महिंभूमर बिचरते हैं ॥२३॥

दो०—कमल सुगंधित बायु वह, सूंघत भागो जाय।
यूथ संग प्यासा अधिक, जल तट पहुंचा आय ॥२४॥

छं०-जलकमल सुगंधित न्हा पीकर, भर सूंडमें जलस्नान करै ।२५।
हथिनी बच्चों संग खेल करै, जलमें माया बस सुक्खधरै ॥२६॥
झटग्राह आय तेहिभाग बिबश, पगपकरि खैंचता बलभारी ॥२७॥
हथिनी चिल्लावैं देखि बिकल, गज छुड़ा सकैं नहिं सब हारीं ॥२८॥
गजग्राहको लड़ते सहस वर्ष, वीते सुर विस्मय मानै हैं ॥२९॥
बलहीन हुआ गज बहुत लड़ा, बसग्राह आपने जानै हैं ॥३०॥
बेबश गज संकटमें पड़के, निजमोच न लखि यह सुरति लहै ॥३१॥
नहिं हथिनी कुटुम छुड़ा सकते, हरिपरमपरायण शरण गहै ॥३२॥

दो०—काल चण्डसे ईश जो, शरणागतहिं उबार।
तिह प्रभु की मैं शरण लूं, मृत्यु जात जहं हार ॥३३॥

भजन—जगत यह दुखही को भंडार।
तिय धन सुतसे पलक चैन नहिं, दुख दायक परवार ॥
सुखहित कोटि उपाय करै नित, दुखलहि बारंबार।

ज्यों गजमत्त घाम में तपिकै, जलमें करत बिहार ॥
आयअचानक ग्राहग्रस्यो पग, लड़तलड़त गयो हार।
हारे हथिनी पुत्र खैंचि कै, तब गज करै विचार ॥
माधवराम चरण अब गहिहौं, होंय मोर रखवार।

इति श्री० भा० भा० सरसकाव्यनिधौ अष्टमस्कंधे द्वितीयोऽध्यायः



श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ अष्टम स्कंधे तृतीयोऽध्यायः ॥

श्लो०—तृतीये तु गजेन्द्रेण स्तुतो हरिरुपेत्यतम् ।
समुद्दधार तं ग्राहाद्ग्राहं देवलशापतः ॥१॥

दो०—गज अस्तुति सुनि आय हरि, गजको लीन उबारि ।
तृतीय में निज चक्र से, नक्र वक्र दियो फारि ॥

छं०शु-उ०-निश्चयमतिसेमनथिर करि गज, हरिपरमजापप्रारंभकिया ।
उस जन्ममें जोहिय भजनकिया, करियाद वही अभ्यास लिया ।१।
गजेंद्र उ०-उसभगवतको है नमस्कार, जिससे यहजग चैतन्य अहै।
पर आदि बीज जो ईश पुरुष, ध्यावैं तिसको हिय ध्यान लहै ॥२॥
जिसमें जिससे जो जिस करके, पर स्वयंभु की हम शरण गहे ॥३॥
निज माया से जग प्रगटि कहीं, छिपता है कहीं पर प्रगट रहे।
जहँ बुद्धि लोप है आत्म मूल्य, वह साची हमरी रचा कर ॥४॥
सब लोककाल से नाश होंय, तम गहन पार निज प्रकाशधर ॥५॥

दो०—जासु पार सुर नहिं लहैं, और को पावै पार ।
नट करतब लख आव नहिं, सो हरि हो रखवार ॥६॥

छं०—पद मंगल देखन को जिसके, मुनि साधु जगततजिवनजावैं ।
जग मित्र बने करैं ब्रह्मचर्य, हों गति हमार जेहिं नित ध्यावैं ॥७॥
जिसका नहिं जन्म कर्म औगुन, गुन नाम रूप कबहूं न धरै ।
तन माया से धरि रचिपाले, कालानुसार संहार करै ॥८॥
बहुरूप अरूप अनंत शक्ति, पर पुरुषको सदा प्रणाम अहै ॥९॥
आत्मा प्रकाश साक्षी मनबच, से परे बिचित्र सरूप लहै ॥१०॥
निष्कर्म सतो गुनसे मिलते, नमोमुक्तिनाथ सुखमुक्ति धरे ॥११॥
गुणधारी मूढ़ सुशांत मूढ़, नमोनिर्विशेष सम ज्ञान हरे ॥१२॥

दो०—साक्षी मूल प्रकृति पुरुष, आत्म मूल जग भूप ।
नमो क्षेत्रपति आपको, हरौ दुःख तम कूप ॥१३॥

छं०-सब इन्द्री द्रष्टासत अभास, दै असत करो सतपद प्रणाम ॥१४॥
निष्कारण सब कारण अद्भुत, सब बेदसिंधु मुक्तिहू धाम ॥१५॥
गुण काष्ठ माहिं हरि छिपे अग्नि, गुण क्षोभ प्रगट सरूप धारे ।
निष्कर्म हैं स्वयं प्रकाश हरी, नहि लखै बेद सब विधिहारे ॥१६॥
मुझ से पशु बंधन छोरन में, छूटे पै दया करतार नमो ।
निज अंश से सबही रूप धरे, भगवान चरण बलहार नमो ॥१७॥
तनतिय सुत गृह परिवार फँसे, नर तुम्हैं नाहिं लखपाते हैं ।
गुण संग मुक्त जनके हियमें, वसते हो नमों गुन गाते हैं ॥१८॥
धर्मार्थ काम मुक्ती चहिकै, भजि तुम्हैं शीघ्र सिद्धी पावैं ।
आशिष दैं तनहु अचलकारी, सो ग्राह बंधछोरब लावै ॥१९॥

दो०—जे हरि शरण अनन्य जन, कुछहू चाहत नाहिं ।
अद्भुत मंगल चरित गुन, गाय मगन ह्वै जाहिं ॥२०॥

छं०—परमात्मा अक्षर परब्रह्म, अध्यात्म योग से लख आवैं।
परिपूर्ण अनंत आदि जगके, इन्द्री न लहैं हम गुन गावैं ॥२१॥
ब्रह्मा सुरवेद चराचर जग, हरि कला से नाम रूप जाये ॥२२॥
रविकिरन आगि चिनगारीजयों, तनमन इन्द्रीगुण प्रगटाये ॥२३॥
सुर असर मनुज नारी न कोट, पशु आदि रूप वह कोई नहीं।
गुण कर्मकाल से बाहर है, सत असत रहित सब रूप सही ॥२४॥
जीने की इच्छा नहीं नाथ, बाहिर भीतर तन मुक्ति चहौं।
जो मुक्ति काल से नहिं नाशै, आवरण छुटैं जहं दुःख सहौं ॥२५॥

दो०—विश्वरूप हरि जग रहित, सकल विश्व करतार ।
परमब्रह्म विनवौं नमों, विश्वात्मा धातार ॥२६॥

छं०-सब कर्मयोग से भस्म किये, हियोग भावना धारी हैं।
योगेश नमो है चरण कमल, योगी जन रूप निहारी है ॥२७॥
गहि तीन शक्ति हरि असहबेग, सबमति गुण धारी नमोनमः।
जनपाल अनंत शक्ति प्रभुकी, छबि पै बलिहारी नमोनमः ॥२८॥
नहिं आतम लखौं हंकार युक्त, जिस प्रभुकी शक्तिसे अभिमानी।
हूं शरण अनंत महात्महरी, भगवान आप हैं गुणखानी ॥२९॥
शुक०उ०—ऐसे गजराज विनय ठानी, ब्रह्मादिक रूप गुमानी हैं।
नहिं आये सुरजग व्यापकहरि, प्रगटे जन रक्षा ठानी है ॥३०॥
लखिगजदुखिया सुर विनयकरैं, चढिगरुड़ चक्रलै हरिआये ॥३१॥
हरिगरुड़ चढ़े लखि कमल देय, कहिनमो नरायणसुखछाये ॥३२॥

दो०—कूदि गरुड सों कमल लै, जलमें पैठि निकारि।
ग्राह ग्रसित गज छोरिहरि, नक्र चक्रसे मारि ॥३३॥

भजन—सदाहरि भक्तन राखन हार।
जब जब दीन पुकारत आरत, पड़ै शीश दुख भार॥
तब तब भक्त दुःख हरि टारत, धरिकै रूप अपार।
ग्रहके फंद फंस्यो जलमें गज, लड़िकै पाई हार॥
हथिनी कुटुम्ब सहाय करीबहु, तहूं न पायो न पार।
कोइ न सहायकसत्य देखि निज, प्रभुसों करी पुकार॥
गरुड़ चढे रक्षा हित आये, धार्‌यो हरी अवतार।
नर तन धारि सार यह जगमें, लेहु कृष्ण आधार॥
माधवराम गाय गुनहरि भजु, छूटे जगत बिगार।

इति श्री० भा० भा० अष्टमस्कंधे तृतीयोऽध्यायः समाप्तः।

श्रीमद्भागवते भाषा सरस काब्यनिधौ अष्टम स्कंधे चतुर्थोऽध्यायः॥

श्लो०—चतुर्थे तु तयोर्ग्राहः प्राप गंधर्वतां पुनः।
गजं स्वपार्षदंकृत्वा हरिर्निन्ये निजं पदम् ॥१॥

दो०—ग्राह भयो गंधर्व पुनि, हरि पार्षद गजराज।
चौथे में हरि साथ लै, निजपुर माहिं विराज॥

छं० शुक-उ०-विधिसुरसुनिपुष्प वृष्टि बरसैं,गजमोक्षदेखिअतिहर्षहिये।
गंधर्व गायनाचहि चारण, करि बिनती निरखै चित्त दिये ॥२॥
देवल मुनि शाप से छूटि ग्राह, सुन्दर गंधर्व सरूप लिया।

बनि मगर मुनी का पग पकरा, मुनिशापदेय उद्धार किया ॥३॥
हरिको प्रणाम करि सुयश गाय, गंधर्व आपने धाम गया ॥४॥
परिकर्मा प्रणाम करि प्रभुको, निज किये पापसे मुक्ति भया ॥५॥
अज्ञान वंध से गज छूटा, हरि पर्शि चतुर्भुज रूपगहा ॥६॥
था इन्द्रद्युम्न दक्षिण भूपति, भगवत व्रत धारण कीन महा ॥७॥

दो०—मौन व्रत हरि भजै नृप, जटा शीश तप धार।
पैठि कुलाचल आश्रम, मगन न देह सम्हार ॥८॥

छं०—लै शिष्यअगस्त्य मुनीआये, नृपचुप बैठे लखिकोपकिया ।९॥
द्विज अपमानीज्यों गज बैठा, लहुअंत योनियह शापदिया ॥१०॥
शुक-उ०-दैशापअगस्त्यमुनीश्वरगे, नृपजानाभागभोगमाना ।११
सब ज्ञान हरण गज योनिलही, हरिभजन किये से गुणगाना ।१२
गजको छुड़ाय पार्षद बनाय, सब गुण गावैं हरिपुर लाये ॥१३॥
हरिप्रभाव गजकी मुक्ति कही, सुनि पाप नशैं यश सुखछाये ॥१४॥
उठि प्रात पढ़ै, द्विज पवित्र ह्वै, दुःस्वप्न नाश ह्वै सुख पावै ॥१५॥
सबको सुनाय हरिगजसे कह्यो, हे भूपति तुमसे बतलावै ॥१६॥

श्री भ० उ० दो०—हमैतुम्हैं यह सिंधुगिरि, तरुवर तालतमाल ।१७
शिखर ब्रह्मशिव धामशुभ, श्वेतद्वीप विशाल १८

छं०—कौस्तुभमणि श्रीवनमाल गदा, शंखहूचक्रगरुड़ौसुमिरैं ।१९
विधि नारद शेषकला लक्ष्मी, प्रहलादहि शिवतें भव न परैं ॥२०॥
अवतार कच्छ मच्छहु वराह, शुभकर्म सूर्यशशि अग्नि गुनै ।२१
ॐकार सत्यद्विज धर्मगऊ, शशि कश्यप पत्नी चरित सुनै ॥२२॥

गंगायमुना सरसुती आदि, ध्रुव सप्तऋषीशुभमनुज लोक ॥२३॥
मम रूप सबै यह प्राप्त सुमिरि, तजि पायलहै सुखहै विशोक ।२४।
उठि प्रातकाल गज स्तुति से, जो प्रेम सहित स्तुती करै ।
दुख दूर होंय सुख यश पावै, प्राणांत समय मति विमल धरै ॥२५॥

श्री शुक-उ० दो०-यह कहि शंख बजाय हरि, गरुड़ चढे भगवान ।
गये आपने धाम हरि, सुरमुनि लखि हरषान ।२६।

भजन—हरिजन हरि सुमिरन सुखदाई ।
मन भटकै दिन राति विषय में, पल भर कबहु न कलपाई ॥
सुख मिलिबे की युक्ति कही हरि, सुमिरों हरि हरिजन भाई ।
गज छूट्यो बंधन सों हरि भज, सुख न लहौं प्रभु बिसराई ॥
तियसुत गृह कुटंब में फँसिकै, सबरी वयस बृथा जाई ।
माधवराम चेत कर अब से, बनि जै है हरि गुनगाई ॥

इति श्री० भा० भा० सरसकाव्यनिधौ अष्टम स्कंधे चतुर्थोऽध्यायः



श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ अष्टम स्कंध पंचमोऽध्यायः ॥

श्लो०—पंचमे पंचमं चाथ षष्ठं चाकथयन्मनुम् ।
विप्रशापाच्च निः श्रीकैः कृतां देवैर्हरेः स्तुतिम् ॥

दो०—अमृत कथा पुनि आठ से, कहत नृपहिं मुनि गाय ।
पंचयें मे रेवत मनू, चाक्षुष चरित सुहाय ॥

छं०शुक-उ०-हरिकथापापनाशनि बरनी,गजमोक्षहिरैवतमनूसुनौ
तामसके भाई रैवतमनु, अर्जुन विंध्यादिक पुत्र गुनौ ॥२॥
विभुइंद्र भूतरय आदिक सुर, मुनि ऊर्ध्वबाहु आदिकहु कहे ॥३॥
तिय अहै विकुंठा शुभ्रहु की, वैकुंठनाथ अवतार लहे ॥४॥
लक्ष्मी के हित बैकुंठ रचा, महिरजकन गनिहरि गुन अद्भुत ।५।६।
चक्षुषके सुत चाक्षुक छठये, सुद्युम्न पूरु आदिक हैं सुत ॥७॥
सुर आप्यादिक सुरपति हैं मंत्र, द्रुम बीरकादि मुनिवर गाये।
वैराज से संभूती में अजित, भगवान प्रगटि रक्षा लाये ॥६॥

दो०—मथि समुद्र लीनो अमृत, लाये अद्भुत रूप ॥
कमठ रूप मंदर धरयो, कीने चरित अनूप ॥१०॥

छं०-राजो उ०-मुनिवरजिसभांतिसमुद्रमथा,बनिकमठरूपमंदरधारा
जिस भांति देवता अमृत लहे, हरि चरित्र कहो अद्भुत प्यारा ।१२
हरिचरित आप वर्णन करते, भक्तों के स्वामी रूप धरैं।
बहु तपित चित्त नहिं तृप्ति होय, सुनि चरित नहीं भवकूपपरैं ।१३
सूत-उ०-इसभांतिपरीक्षित प्रश्न किया,हे शौनकसुनिशुकदेवकहैं।
राजा की प्रशंसाकरि हरि के, गुन गावैं हिय आनंद लहैं ॥१४॥
शुक-उ०—रण में देवों ने असुर हने, मरि गिरे बहुत नहिं उठ पाये।
मुनि दुर्वासा ने शाप दिया, सुर सुरपति क्षीण तेज आये ॥१५॥

दो०—मुनि इन्द्र हिमालादि ई, लै गज पर धरि लीन।
मर्दन कीनी खैंचि गज, शाप मुनीश्वर दीन ॥१६॥

छं०-जावैलक्ष्मीसुनिशापसवै,सुरसलाह करिनिश्चयनकिया १७

ब्रह्माकी सभा में सुर पहुंचे, जा अपना हाल बयान किया ॥१८॥
निस्तेज देवतों को देखा, जिस भांति असुर सुखहीन रहैं ॥१६॥
मनथिर कर भगवत सुमिरनकर, हो प्रसन्न उनसे बात कहैं ॥२०॥
हम तुम शिव औ नर कीट पशू, उससे पैदा पद शरण गहैं।
है अंश कला अंशाशहु से, तजिहरि को सुखकिस भांतिलहैं।२१।
नहिं वध्य है रक्षायोग जिसे, नहिं आदर लायक त्याग योग।
तिस पर वह जग रचना पालन, संहार हेत ले तन संयोग ॥२२॥
जग स्थिति पालन का है समय, सब जीवों के हितकारी हैं।
हैं शरण आपकी जगत गुरू, कल्यान करौ बलिहारी हैं ॥२३॥

शुक-उ०-दो०—ब्रह्माजी कहि सुरनसों तिन्हैं संग लै आप।
अजित हरी के शरण गे, जहँ छूटैं संताप ॥२४॥

छं०—लखमें न रूप आवै जिनका, वेदों से महिमा सुनी गई।
ह्वै सावधान सुरबाणी से, ब्रह्मा जी बिनती ठान लई ॥२५॥
ब्र०उ०-सतआदि अनंत विकारहीन, निष्कल हियबासीतर्करहित
मनबाणी कहि न विचार सकैं, है नमो देवबर सबजग हित।२६।
मन प्राणी बुद्धिज्ञाता आत्मा, इन्द्री अरु विषय प्रकाश करै।
विद्या औ अविद्या जहां नहीं, उस अक्षर ब्रह्मकी शरण परै।२७।
हरिचक्र मनोमय इन्द्री प्राण, पन्द्रह आरा माया से फिरैं।
है त्रिगुण नाभि प्रकृती पुट्ठी, आठहु अजआंककी शरण धरैं।२८।

दो०—एक वर्ण तमसे परे, प्रगट अनन्त अपार।
रूप प्रकाशक आत्मजित, धीरभजैं लैं पार ॥२६॥

छं०—नहिंजिसकी मायाकोई तरै, जन मोहितह्वै मतलबनलखैं।

जित आत्मा जन परमात्मा को, सबजीवों में समहै निरखें।३०।
जिसके प्रिय सततनु से सुरसब, बन गये सब जगह हाज़िर है।
मुनिजनहू हरिकीगतिनलखै, किमिअसुरवो सबका नाज़िर है।३१
पृथ्वी है पांव परमेश्वर के, जहँ चार प्रकारकी सृष्टि भई।
हरि स्वतन्त्र हम पर प्रसन्न हो, प्रभु ब्रह्म महान बिभूति मई ।।३२।।
जल ही है वीर्य नारायण का, जिससे सब बढते जीते हैं।
हों प्रसन्न हरि सव विभूति मय, जिसके बिन जगत फजीते हैं।३३।

दो०—स्वांस वायु है चंद्रमन, देवों का आधार।
महा विभूति प्रसन्न हरि, जिससे जग निस्तार ।।३४।।

छं०—मुखअग्नि हवनहों क्रियाकाण्ड,सबहीकोतृप्तिदै पाचनकर।
सब सिंधु मध्य थिर भस्म करै, हो प्रसन्न ईशर विभूति धर।।३५।।
हैं सूर्य नेत्र सुरलोक मार्ग ब्रह्मस्थिति, त्रिबेद मय कहिये।
मुक्ती का द्वार सब बिभूति मय, हरि प्रसन्न सो हम पर रहिये ।।३६।।
हरि प्राण से सबके प्राण अहैं, जिनसे बल ओज आदि उपजैं।
सम्राट रूप वह सब अनुचर, हों प्रसन्न जन पर भक्त भजैं ।।३७।।
जिस हरिके कान से सबै दिशा, हिय से इन्द्री पैदा होवें।
आकाश नाभि से जगतन से, करि दया बिभूति हरी जोवैं ।।३८।।

दो०—बल से सुरपति सहित सुर, विधि उपस्थ हर क्रोध।
विभूति मय हरि प्रसन्न हों, वेद अंग जहं बोध ।।३९।।

छं०—श्री हिय से पितृ छाया से हैं, स्तन से धर्म अधर्म पीठि।
द्यौः शिर से हरि बिभूति मय सो, होकर प्रसन्न करै दया दीठि।४०।
मुखसे हैं बेद द्विज भुजसे चत्रि, बजरण प्रधान जे गाये हैं।

कटि से हैं बैश्य शूद्रहु पद से, सेवा करि हरिमन भाये हैं ॥४१॥
है अधर से लोभहु उपर होठ, से प्रीति सपर्श काम जावै।
यम भौंह से काल कटाक्ष से है, हरि विभूति मय दाया लावै ॥४२॥
सब पंच भूत कालहू कर्म, जिनकी माया रचि देती है।
प्रभु विभूतिमय होवैं प्रसन्न, भक्ती अपना कर लेती है ॥४३॥
स्वाराज लाभ उपशांत रूप, हरिपूर्ण आत्मा नमो नमः।
ज्ञानिहुनहिं जिसको समुझि सकैं, प्रभुहै परमात्मा नमोनमः ।४४।

दो०—दर्शदेहु दर्शकहिं प्रभु, हितकर मृदु मुशकान ॥४५॥
हमसों दुष्कर कर्म जो, पूर करत भगवान ॥४६॥

छं०लघुसुखदुख बहुतकर्मकरि कै,नहिंहरि अर्पणकरिदुख पावैं ४७
हरिअर्पित लघु कर्म हु न बिफल, अर्पणसे हरि प्रिय हो जावैं।४८।
जिमि वृक्षमूल जल से सींचो, सब डाल पात सिंच जाते हैं।
हरि आराधन से निज आत्मा, सारा जग तृप्ती पाते हैं ॥४६॥

दो०—तर्क रहित अंतहु बिना, हरिपद नित्य प्रणाम।
निर्गुण गुणधर सत्वतन, सकल लोक विश्राम ॥५०॥

भजन—सकल दुख हारक, ईश प्रणाम।
सकल कर्मतप योग समाधी, साधो आठौ याम ॥
जापयज्ञ ब्रत तीर्थ अनेकन, और सबै इतमाम।
प्रेम सहित जग जाल छोड़िकै, श्रद्धा से रट नाम ॥
माधवराम पार हों भवसे, पूरण है सब काम।

इति श्री० भा० भा० सरसकाव्यनिधौ अष्टम स्कंधे पंचमोऽध्यायः

श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ अष्टम स्कंधे षष्टोऽध्यायः ॥

श्लो०—षष्ठे पुनः स्तुतिर्विष्णावाविर्भूते सुरैः कृता ।
तन्मंत्राच्चासुरैः साकममृतार्थे महोद्यमः ॥१॥

दो०—प्रगटे हरि संस्तुति करी, षट में दीन सुझाय ।
असुर संग करि मित्रता, लेवो काज बनाय ॥

छं०-शुक-उ०-इसभांतिसुरोंकीसंस्तुतिसुनि, रविसहस्रतेजहरिप्रगटभये
देवों के नैनचक चौधिबंद, नहिंमहि अकाशदिशिलखे गये ॥२॥
शिवब्रह्मा श्याम छबी निरखैं, दृग कमल ललाई युत सोहैं ॥३॥
तनस्वर्ण द्युती पीताबर धर, मुखभौंह सुघर जन मन मोहैं ॥४॥
कुण्डल किरीट करमें अंगद, झांई पड़ रही कपोलों पर ॥५॥
कटि कांची उरमें हार लसैं, बनमाला कौस्तुभ लक्ष्मीधर ॥६॥
पार्षद सब मूर्तिमान संगमें, लखिशिव ब्रह्मा स्तुति ठानी।
सब देव संग प्रणाम करके, हिय निरखि प्रेम मूरति आनी ॥७॥

दो०-ब्रह्मोवाच—हरि काजन्मनाशथिति, नहिंगुणसे गतिपूर ।
लघु से लघु बड़ बड़े से, नमोपूर्ण दुख दूर ॥

छं०—सुखचाही जनों से पूज्यरूप, तंत्रहूबेद बिधिबहु करिके।
यह बिश्वमूर्ति हम लखैं प्रभू, सो है त्रिलोक तनमें धरि कै ॥८॥
तुम आदि अन्त मध्यहु में हौ, रहते स्वतंत्र सबमाहिं सने।
जगके हैं आदि अंत मध्यहु, तुममें ज्यों मृतिका पात्र बने ॥१०॥
निज माया से जग रचि पैठे, बुधमान अगुण तुमको निरखैं ॥११॥

ज्यों गौ में घृत पृथ्वी में अन्न है, अग्नि काठमें चतुर लखें ॥१२॥
हेकमलनाभतुम्हेंलखि प्रतच्छ, जिमिगजजललहि शांतिपाई।१३।
पूरण करिये मनोर्थ सबका, साची जिनके प्रभु बरदाई ॥१४॥

दो०—हम शिव सबसुर प्रजापति, लखें न तुम्हरो भेद।
आप विधाता सबहि के, हरिये हमरो खेद ॥१५॥

छं०-शुक उ०—विनती सुनि सुरकरजोरेलखि,गंभीरगिरासेबोलेहरि।
एकहि ईश्वर करि सकेकाम, हियसिंधु मंथनकोनिश्चयकरि।१७।
भगवानु०-हेशिवब्रह्मासबदेवसुनो, सुनिसुखपावोगेयत्नधरो १८।
जब तक न उदयहो तुम सबका, दानव दैत्यों से मेल करो ॥१६॥
निज स्वार्थ में अरिको मित्र करै, ज्यों वंद सर्प मूसा से कहै।
यह काटि पिटारी माल खाव, काटे पै उसी को खाय गहै ॥२०॥
अम्मृत मिलने का यत्नकरो, जिसे पिये अमर हो जावोगे ॥२१॥
औषधी छोड़ मंदर मथनी, कदनी बासुकि करि पावोगे॥२२॥

दो०—हम सहाय देहैं मथो, सबसुर मिलिके साथ।
असुर दुःख भागी बनै, फल सब तुम्हरे हाथ ॥२३॥

छं०—दैत्यों की हांमें हां करना,शांती से काजसिध रिससे नहीं।२४
नहिं डरना विषसे लोभ क्रोध, नहिं करो वस्तु में चाह सही ॥२५॥
शुक-उ०—पुरुषोत्तम ऐसी शिक्षा दै, सुर देखें अंतर ध्यान भये।२६।
सुरबिधि प्रणामकरि धामगहु चि, पीछेसुर असुर समीपगये ॥२७॥
बिन अस्त्रदेवता निरखि दैत्य, क्रोधित लखि बलिनेरोकदिया।२८।
असुरों से रक्षित बलि बैठे, जय लक्ष्मी जितका निकट लिया।२६।

बुधिमान इन्द्र मृदु बैन कहैं, जिसविधि हरि युक्ती सिखलाई ।२०।
हम दोनों भाई नहक लड़ैं, सुनि बलि शंबरके मनभाई ।।२१।।

दो०—सुर औ असुर मेल करि, अमृत मथन सलाह ।
परम यतन करने लगे, करिकै सच्ची राह ।।

छं०—दोऊ मिलि मंदर गिरि उखारि, गर्जते सिंधुतटलेके चले ।२३।
थकि गये देव तजि अलग भये, बेवश हैं हम सब कहैं भले ।।२४।।
गिरि गिरि के असुरों को कुचला, रहे दैत्य बीचमें कढिनसके ।२५।
पद हाथ टूट थे मधि में दैत्य, हरि प्रगटे जब सब दुखित तके ।२६।
गिरसे कुचले सुर असुर हरी की, अमृत दृष्टि सब पुष्टकिये ।२७।
एकहि कर से गिरि गरुड़ पैधरि, देवता दैत्य हरि संग लिये ।२८।

दो०—समुद्र तट गिरिधरि दियो, गरुड़सहित भगवान ।
बिदा किये आदर सहित, बिष्णु गरुड़ निजयान [1] ।।२९।।

भजन—मेल से पर्वत लेत उखारि ।
कठिन से कठिन काज जगमाहीं, सिद्ध होय मिलिचारि ।।
अलग अहं करि जीव बनै बंधि, मिलिहो ब्रह्मबिचारि ।
जबलग मेल न घर में होवै, दुख दरिद्र भय कारि ।।
माधवराम मेलकरि जगसे, आत्मा लीजै तारि ।

इति श्रीमद् भागवतेभाषासरसकाव्यनिधीअष्टम स्कंधेषष्टोऽध्यायः



1 वाहन

श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ अष्टम स्कंधे सप्तमोऽध्यायः ॥

श्लो०—सप्तमे मथितोद्भूत विषभीत्याखिलैर्जनैः ।
स्तुतः सन्कृपयारुद्रः पपौ विषमितीर्यते ॥१॥

दो०—विष भय से व्याकुल सकल, शिवकी बिनती कीन।
सतवें में दुख देखिकै, रुद्र जहर पी लीन ॥१॥

छं०शुक-उ०-वासुकहि अमृतका लालचदै, लायें गिरिमें बंधनबांधा।
मथनेको श्रीपति अहिमुखगहि, झटसिंधु मथनलै सुरसाधा ॥२॥
यह महापुरुष करतब लखिकै, कहं असुर अमंगलपूंछि न लें।३॥
हम जन्म कर्मसे प्रसिद्ध हैं, गहिमुख अहि पूंछ देवतहि दे ॥४॥
कश्यप सुतदेव असुर गहिकै, अम्मृतहित सिंधुं मथनलागे ॥५॥
बिन अधार पर्वत जलमें डूब, नहिं सधागहा बहुसुर आगे ॥६॥
मन मलीन सबके तेज हीन, पुरुषार्थ भागसे हरा दिया ॥७॥
गणपति पूजाहरि कहिकराय, कच्छपतनुधर गिरिउठालिया ॥८॥

दो०—उठा निरखि गिरि सुरासुर, मथैं खुशी हियमाहिं ।
द्वीप तुल्य हरि पीठ पै, मंदर गिरी लखाहिं ॥९॥

छं०—सुरअसुरभुजों से कंपितगिरि, कच्छपकी पीठि परभ्रमण करै।
है अथाह बल कच्छप हरि के, मृदु खजुलाहट सीमन में धरैं॥१०॥
असुरों में असुर रूप बल दै, उनका बलवीर्य बढाते हैं।
देवतों में दैवी बल बढाय, विष्णु सहाय पहुंचाते हैं ॥११॥
गिरि ऊपर विष्णु बिराजमान, गिरि हाथ से हरी दबाये हैं।

आकाश मे विधि शिवसुरपतिसुर, विष्णू पै पुष्प बरसाये हैं ।१२।
ऊपर नीचे गिरि में सुरमें असुरों में वासुकि में हरि हैं।
पर्वत घूमैं समुद्र मधि में, चोभित जलजीवहु भीतर हैं ॥१३॥

दो०—वासुकि मुखसों बिष कढ़ै, असुर मलिन लगि झार।
बल इल्वल पौलोम सब, गे हैं हिम्मतहार ॥१४॥

छं०—देवता परिश्रम से व्याकुल, हरिप्रेरित घन वर्षैं तिन पर।
शीतल बयार वह देवन पर, ह्वै प्रसन्न मथते हैं चित धर ॥१५॥
सुरअसुरमथैं नहिंकुछनिकला, हरिअजितआपही मथनलगे।१६।
तन श्याम पीतपट क्रीट मुकुट, घुंघुरारी अलकैं प्रेम पगे॥
श्रुति कुंडल लाल नैन करमें, अहिरस्सी पकरे मथन करैं।
जनु द्वितीय गिरिसमसोहि रहे, सुरअसुर मध्य शुभशोभधरैं।१७।
मथतेजब हरिबिषहालाहल, निकलाजलजीवमहाव्याकुल।१८।
सब विकल झारसे बिषकी भगे, लीशरणजाय जहँशंभुविमल।१९।
शिव उमासहित लखि सरमुनि सब, दंडवत करैं स्तुति ठानी।
तप रूप मुक्ति दायक जनके, फलदेत भक्तको बरदानी ॥२०॥

प्रजापतयऊचुः दो०—महादेव भूतात्मशिव, जगभावन भगवान।
विषभयसे रक्षाकरहु, देहु अभय बरदान।२१।

छं०—सबजगके बंधमुक्तीदायक, जनकुशलअर्तिहरपूजहिंहर।२२।
गुण मयीशक्तिसे विधिविष्णू, जगरचि पालत संहारहु कर ॥२३॥
प्रभु परमब्रह्म बहु शक्तीधर, जगदीश्वर आत्मा पहिचानैं ॥२४॥
तुम देव देव जगमय स्वभाव, ऋत सत्यकाल अक्षर मानैं ॥२५॥

मुख अग्नि आत्मा सब सुरहैं, महिचरण कान दिशि बतलाये।
जल जिह्वा गतिहै कालचंड, चरअचर जासुबश में आये ॥२६॥
नभ नाभी बायु स्वांस रबिदृग, जलवीर्य चंद्रमन शिवके अहैं।२।
कुक्षी समुद्र हड्डी पहाड़, औषधीरोम हियधर्म कहैं ॥२८॥

दो०—पंच[1] उपनिषध शिव अहैं, अड़तिशकला प्रधान।
परमारथ को तत्वहर, स्वयं ज्योति भगवान ॥२६॥

छं०—छायासे अधर्मसत्त्व रजतम, हैं नेत्रतीन कहैं शास्त्र कथन।
सुरमुनिपुराण श्रुति इच्छा तब, रचतेहो शास्त्रहरत्रिपुरमथन।३०।
विधिहरि सुरपति सब लोकपाल, सुर आपकी महिमान्नहिंजानैं।
सत रजतम जहां नहीं पहुंचै, हर परब्रह्म ज्योती मानै ॥३१॥
मख काम त्रिपुर कालहु नाशक, स्तुति प्रणाम पूरहि आशैं।
जब प्रलय कालहो भालनेत्र, करिभस्म जगत पलमें नाशैं ॥३२॥
शिव उमासहित जे हिय ध्यावैं, मुनि आत्मा गुरु हियमें मानी।
कह उग्र पुरुष मशानबासी, निर्लज्ज मूढनर अभिमानी ॥३३॥

दो०—पर से पर सत असतमय, लखैं न रूप तुम्हार।
ब्रह्मादिक कहि मौनलैं, हमकिमि पावहिं पार ॥३४॥

छं०—इस रूप से परहम लखि न सकैं, नहिं प्रगट रूप महरूप धरे।
जग पूजनीय महेश पर मृड, प्रभुसे भयदायक काल डरे ॥३५॥
शुक–उ०–विषको दुखलखिशिवदयाधारि, सबजीवनके हितकारी हैं।
कह पार्वती से बचन शम्भु, हरदयाल रक्षाधारी हैं ॥३६॥

[1] तत्पुरुष अघोर सद्योजात बामदेव ईशान

शिव उ०—हे प्रियेप्रजाका दुःखलखौ, बिषनिकला चीरसिंधुसेअब ३७
रचाहित सबके अभय करौं, पालन है दीनका मम करतब ॥३८॥
चण भंगु देह निज प्राणों से, औरों की साधु रचा करते।
माया से मोहित वद्ध बैर, जनमूढ द्वेष दिलमें धरते ॥३९॥

दो०—दयावान नर से हरी, प्रसन्न हो भगवान।
हरि से हम हमसे जगत, बिष खैहौ हितमान ॥४०॥

छं०-शुक-उ०—करिसलाहजगभावन शंकर, बिषखानेकोअनुमानकिया
जानैं प्रभाव जगदंबउमा, उपकार निरखि हिय हर्ष लिया॥४१॥
बिष हालाहल हाथों में लै, शिवदायाधर झट पान किया ॥४२॥
भे नीलकंठ विष प्रभाव से, जल आभूषण शिव बना लिया ॥४३॥
साधूजन रह पर दुखसे दुखी, यह अखिलात्मा का आराधन ॥४४॥
विधिहरिसबशिवहिप्रशंसिरहे, बिषपानकर्मलखिशुभसाधन ॥४५॥

दो०—विष पीवत में महि गिरा, ताको कहैं प्रवीन।
बीछी सर्प बिषौषधी, मशा डांस गहिलीन ॥४६॥

भजन—सार है जगमें पर उपकार।
धन सुत राजपाट बहुतों के, होय विवधि व्यापार ॥
जो लवलीन रातदिन इनमें जाते बाजी हार।
पर उपकार हेत शिव बिषको, लीन कंठमें धार ॥
यासों यथाशक्ति तन धनसे, परहित करौ विचार।
समरथ ह्वै परहित नहिं कोना, देतशास्त्र धिक्कार ॥
माधोराम जगत भल चाहै, होय जीव भवपार।

इति श्री० भा० भा० सरसकाव्यनिधौ अष्टमस्कंधे सप्तमोऽध्यायः

श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ अष्टम स्कंधे अष्टमोऽध्यायः ॥

श्लो०—अष्टमे मथ्यमानेऽब्धौ लक्ष्म्याविष्णौवृतेऽसुरैः ॥
धन्वंतरेर्हृते सोमे मोहन्युद्भवर्ईर्यते ॥१॥

दो०—मथत सिंधु निकसी रमा; हरिसंग भयो विवाह ।
अठयें अमृत दैत्य गहि, प्रभु मोहनी निवाह ॥

छं०-शुक-उ०—सुरअसुरमगन चिषपियाशंभु, फिरमथैंकामधेनूनिकली
मुनिहवनके घृत हितलेत भये, सुरभी से सधैं सब क्रिया भली ।२।
फिर उच्चश्रवा अश्व निकला, सुरपति ने नहीं बलि ने लीना ॥३॥
ऐरावत हाथी चारदंत, कैलास शिखर समता कीना ॥४॥
कौस्तुभमणि निकली विष्णु लई, हियका आभूषण ताहिकिया ५
फिर कल्पवृक्ष सुरपुर में रहा, मन इच्छा फल शीघ्रही दिया ॥६॥
निकली अप्सरा स्वर्गभूषण, मृदुगति बानी हेरन जिनकी ।७।
फिर लक्ष्मी निकली हरि में पर, दशदिशाचमक विजलीइनकी ।८।

दो०—चाहैं सुर नर असुर सब, रूप गुणों की खानि ।
सबही के मन हर गये, हमै मिलैं यह आनि ॥६॥

छं०-सुरपतिनेआसनबिमलदिया, धरिरूपनदीलियेस्वर्णकलश १०
भूमी सब औषधि ला दीनी, मधु माधव ऋतु पंचामृत रस ।११।
ऋषि मंत्र पढ़ैं अभिषेक होय, गंधर्व गावनारी नाचहिं ॥१२॥
बाजहिं मृदंग वीणा अनेक, शंखहू वेणु धुनिमृदु बाजहिं ॥१३॥
दिग्गज लै कलश छोड़ते जल, मुनिमंत्र पढ़ैं लक्ष्मी नहाय ।१४।

लाये समुद्र शुभपीत बसन, वैजंतिमाल वरुणहु पिन्हाय ॥१५॥
आभूषण विशकर्मा सुमाल, सरस्वतीकमलविधि कुंडलनाग ।१६।
स्वस्त्यनभयो लैकमलमाल, मुखकमलहसनिमृदुशुभसोभाग १७

दो०—कठी सूक्ष्म शुभ अंग सब, चंदन कुंकुमभाल ।
नूपुर धुनिजनु कनक तिय, लखतै असुर बिहाल ॥१८॥

छं०—औगुणविहीन, निज योगहि भर, देखनको लक्ष्मीआई हैं।
गंधर्व यक्ष सुर असुरमुनी, सब बैठे पांति लगाई हैं ॥१९॥
तप जहां तहां नहिं क्रोध[1] बिजय, जहं ज्ञान[2] तहां नहिं संगत्याग।
कोउबड़ेतहांनहिं[3] कामजीत, किसगिनतमें हैं इन्द्रादिबिभाग । २०
कहु धर्म[4] तहां नहिं जीव सुहृद, कहुं त्याग[5] तहांमुक्ती है नहीं।
बल[6] कहूं काल से नाशमान, तजि विष्णु और को होय सही ।२१।
कोइ चिरंजीव[7] मंगल तन नहिं, कोइ मंगल[8] हैं नहिं चिरंजीव।
जहांदोनों वासअमंगल[9] थल, मंगलमयत्यागी पुरुषअतीव।२२

दो०—दोष रहित बरनहिं लख्यो, गुन बिन सबकी चाह ।
सबै गुण रहित गुण सहित, लियो मुकुंदहि व्याह ॥२३॥

छं०—शुभकमलमाल हरिगलेडाल, मृदुहास निकटहीखड़ीरमा २४
जगजनक हरीदियो हियेवास, निजजन पालन करती हैं क्षमा २५
बाजहिं बाजे शंखहु मृदंग, सुर तियनाचहिं शुभगान करें ॥२६॥

१ दुर्वासादि २-गुरु शुक्रादि ३-ब्रह्माचंद्रादि ४ परशुरामादि ५ शिवरूपादि ६ सहस्रार्जुनादि
७-मार्कंडेय-८ हिरण्यकश्यपादि ९ शिवादि

शिवविधि सुरमुनि सबस्तुति करि, बहु वर्ष सुमन हियहर्ष धरैं ।२७
लक्ष्मीजी लखे सुर प्रजापती, गुणवान भये निवृत्ति पाई ॥२८॥
भे असुर लालची तेजहीन, उद्योग लाजबिन दुख छाई ॥२९॥
कन्या सरूप मदिरा निकली, हरि संपति से सब असुर गहैं ।३०।
फिर अद्भुत पुरुष एक निकला, धन्वंतरि जिनकानाम कहैं ॥३१॥

दो०—दीर्घ भुजा शुभ कंठ दृग, श्यामल तनु बनमाल ।
पीत बसन भूषण लसैं, शोभा अधिक विशाल ॥३२॥

छं०—श्रुति कुंडलकीट अलकसो हैं, हरिपुरुषसिंह अवतारहरी ।३३
अम्मृत से पूरण कलश लिये, अंशाशबिष्णु की कलाधरी ॥३४॥
पढ़ै आयुर्वेद यज्ञ भोगी, लखि असुर छीनकै ले भागे ॥३५॥
लै गये असुर सुर उदास सब, लै शरण खड़े भे हरि आगे ॥३६॥
देवतों की दीन दशा लखकै, साधैंगे काम मत दुःख करो ॥३७॥
सब लड़ैं असुर हम हम पहिले, नहिं तुमइककहते धीरधरो ॥३८॥
देवों को भाग उचित चहिये, मिहनतकी धर्म सनातन यह ॥३९॥
इक इक रोकहिं मत्सर करिकै, बलवान निबल से लेना चह ॥४०॥

दो०—सब उपाय जानत हरी, ताही छन प्रगटान ।
अद्भुत मोहनि रूप धर, जगकर्ता भगवान ॥४१॥

छं०—शुभ श्याम कमलतन अंग सुघर, कानों में कुंडल झूमिरहे ।
नकवेसर गोल कपोल अमल, झाइं परती जनु चूमि रहे ॥४२॥
है युवा वयस शोभा सुंदर, स्तन के भार से झुकत चलैं ।
मुख में सुगन्ध युत पान लसैं, चंचल दृग चारों तरफ हिलैं ॥४३॥
केशों की शोभा कौन कहैं, फूलों से गुन्धी बेनी लटकै ।

गलहार वजुल्ला बाजू में, मुनियों को मन लखते अटकै ॥४४॥
कटिमें अतिसुघर वसन सो हैं, द्वीपहु नितंब शोभा भारी।
लसछुद्र घंटिका कटिमें शुभ, नूपुर धुनिमृदु मुनि मनहारी ॥४५॥

दो०—कुछ लज्जित सी लखत हैं, चितवन नैन विशाल।
दैत्य दानवों के हिये, जागो काम कराल ॥४६॥

भजन—मोहनी मूरति नारि सरूप ।
अंग अंग में विष व्यापित जहँ, लागत अम्मृत रूप ॥
कामी मूढ न अंत निहारिहि, सुरमुनि शाहौ भूप।
त्तण सुख हेत मूत्रमल चाटत, परै अंत तम कूप ॥
दौड़त जीव नारि के पीछे, समझै छांह न धूप ।
विषय भोग करि तृप्ति न पावैं, मानैं अम्मृत पूप॥
माधवराम श्यामसुर हितको मोहनि भये अनूप ।

इति श्री भा० भा० सरसकाव्यनिधौ अष्टम स्कंधे अष्टमोऽध्यायः

श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ अष्टम स्कंध नवमोऽध्यायः ॥

श्लो०—नवमे मोहितैर्दैत्यैरर्पितेऽमृतभाजने ।
तद्वंचनेन देवेभ्योऽमृतं दत्तं तयेयंते ॥१॥

दो०—मोहित दैत्य कलश अमृत, दियो मोहिनी हाथ ।
असुरहिं छलि प्यायो सुरहिं, नवयें गावहिं गाथ ॥१॥

दो०–द्विज यजमान अग्नि मुनि, खड़े भये इक साथ।
आवत अग्नी सनक रवि, मानि नवायो माथ ॥२२॥

छं०–ऐसे गुरु शिष्य वितर्क करैं, आये बामन बटु रूप किये।
शिर छत्र कमंडल दंड हाथ, जनु ब्रह्मचर्य ही रूप लिये ॥२३॥
यज्ञोपवीत मेखला मूंज, मृग चर्महु बगल दबाये हैं।
शिर जटा सोहते भगवत के, अति अद्भुत शोभा पाये हैं ॥२४॥
आये लखि अग्नीउठे लपट, भृगुशिष्य सहितआदर कीना ॥२५॥
यजमान प्रसन्न देखि छबिको, सन्मान किया आसन दीना ॥२६॥
स्वागतकरि पद परखा बलिने, करिप्रणाम पूजन विविधि किया।
चरणामृत पाप हारि पीकर शिव धरेशीश शिर धार लिया ।२८।

दो० बलिरुवाच–स्वागत है ब्रह्मन तुम्हें, पद में करौं प्रणाम।
तपाह ब्रह्मऋषि रूपधरि, देत हमें विश्राम ॥२६॥

छं०–भेतृप्त पितरकुलभी पवित्र, तुमआये पूर्णयज्ञ नहिं कम ।३०
अग्निहू तृप्त हो गये खूब, महि पग पर से जलसे शुचि हम ॥३१॥
बटु मांगो जो जो इच्छा हो, गौ स्वर्णधाम भोजन कन्या।
गजबाजि ग्राम रथऔरहु कुछ, हम देंय भाग मानै धन्या ॥३२॥

दो०–ब्याहैं द्विज कन्या तुम्हें, जो हमसे कहि देव।
देने की श्रद्धा बढ़ी, कुछ तो द्विजबर लेव ॥

भजन–बिप्र को मानै सब संसार,
सुर अरु असुर यक्षकिन्नर नर, विविध देह सब धार।
शिव बिधि विष्णु विप्रको मानै, आपन इष्ट पुकार॥
सोई विप्र विप्रपन छोड़ै, सब प्रकार यह हार।

छं०-शुक-उ०-छीनैंआपसमें असुरकलश, धमकावैंत्यों देखीनारी ।१
क्या रूप अहो क्या नई उमर, पूंछते काम वस ह्वै भारी ॥२॥
हे कमल नैनिको हौ किसकी, मनमथती कहां से आई हो ॥३॥
सुर असुर किसी ने नहीं छुई, जानैं हमरे मन भाई हो ॥४॥
क्या दयालु विधिने भेजा तुम्हैं, इन्द्री मनके सुख भरने को ॥५॥
अम्मृत के हित हम सब लड़ते, आई झगड़ा तैं करने को ॥६॥
कश्यप मुनिके हम सब हैं पुत्र, दो बांट अमृत नहिं भेद धरो ।७।
सुनि माया मोहनि विष्णु कहैं, चलो हटो न हमसे बात करो ।८।

भगवान उ०—दो०—कैसे कश्यप पुत्र हो, चाहो पर की नारि ।
नारी में विश्वास नहिं, पंडित करैं बिचारि ॥९॥

छं०—भेड़िया वेश्या नारि तुल्य, थिर प्रीति न करि नर नये चहैं ।
विश्वास किये धोखा खावैं, मुनि संतसीख ये सत्य कहैं ॥१०॥
शुक०-उ-पिघलेहैं असुरमृदु बचन सुनत, हंसके झटअमृत कलशदिया
ले कलश कहैं हम बाटैंगी, नहिं रोकौ जो हमचहैं किया ।१२।
सुनि असुर बचन हां हां कीना, नहिं थाह रूपकी पाई है ॥१३॥
नहवाय हवन करि बैठाया, स्वस्त्यन, धुनी तहं छाई है ॥१४॥
कोरे सुवस्त्र पहिरे हैं असुर, जनु कोरे रह बैठे आसन ॥१५॥
सुरपांति अलगकी पी न जांय, हो धूपधूम हरिकर शासन ॥१६॥

दो०—सुघर रूप मद भरे दृग, मृदु नूपुर झनकार ।
उर करमें कलशहु धरे, हलकत हियमें हार ॥१७॥

छं०—नासा बुलाककुंडल हलकनि, श्रीसखीज्यों बस्त्रसम्हारे हैं ।
अंचल उघारि इत नैन मारि, देवों के काज संवारें हैं ॥१८॥

T

पय सर्पको असुरहिंअमृतहुतस, निर्दईजानि नहिंदियाअमृत ।१६।
करिअलग पांतिवैठारि सुरन्ह, निजशरण देखिकरते हरिहित ।२०।
लैअमृतकलश दैत्यों को छलि, देवों को अम्मृत हरिप्यावैं ॥२१॥
परखे हैं असुर अब हम पै हैं, झट लौटिके बातैं समझावैं ॥२२॥

दो०—सुनि २ कोमल बचन मृदु, विवश असुर हरषाहिं ।
उलटी भी सूधी गुनैं, मोहित कुछ न कहाहिं ॥२३॥

छं०—धरिदेव रूप राहूने पिया, घुसिकै रबिशशिने बतलाया ॥२४॥
हरिचक्रसे शिरझट काटि लिया, शिर अमरभया ग्रहमें आया ।२५।
जब पर्व में रविशशि ग्रहण परै, बदला लेने को धावै हैं ॥२६॥
हरि रक्षा करते अमृत प्याय, झट अंतर हित ह्वै जावैं हैं ॥२७॥
इस भांति सुर असुर मिहनत की, हरि आश्रय से फल सुर पावैं।
हरि विमुख असुर कोरे रहिगे, यह शिक्षा सबको समझावै ॥२८॥

दो०—मन वानी से अलग हरि, धरत अनेक न रूप ।
हरि पूजे सब तृप्त जग, शिक्षा परम अनूप ॥

भजन—आसरा हरिका सबसे नीक ।
निबल देवता अम्मृत प्यावैं, प्रबल असुर भे फीक ॥
हम अस करैं करैं पुरुषारथ, पीटैं कोरी लीक ।
पूर परै नहिं सपने उनकी, मन मारै रहै झींक ॥
माधवराम श्यामके आश्रय, विगड़ी होवै ठीक ।

इति श्री० भा० भा० अष्टमस्कंधे नवमोऽध्यायः समाप्तः ।

श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ अष्टम स्कंधे दशमोऽध्यायः ॥

श्लो०—दशमेमत्सराद्दैत्यैशरधेतुः मृधेसुरैः ।
दैत्यमायाविषण्णेषु देवेष्वाविर्बभौ हरिः ॥१॥

दो०—मत्सर करि सब दैत्य मिलि, लड़ैं देवतों संग ।
हारे सुर लखि प्रगट हरि, दशमे वरणत ढंग ॥

छं०-शुक उ-नहिंदानवअसुर अमृतपाये,हरिविमुखपरिश्रमयदपिकिया
निकराय अमृतपुनि प्यायसुरहिं, विष्णू प्रभु अंतर ध्यानलिया ।२।
सौतेलों की उन्नती देखि, नहिं सहैं दैत्य लड़ने को चले ॥३॥
देवता वली अम्मृत पीकर, हरि आश्रयले भिड़ गये भले ॥४॥
देवासुर दारुण रण है नाम, भासमुद्र तट हो रोम खड़े ॥५॥
तरवार वाण बहु अस्त्र चलैं, मिलि असुर देवता जोर भिड़े ॥६॥
भेरी मृदंग डमरू बाजैं, हाथी हय वीर घोर गाजैं ॥७॥
रथियों से रथी पैदल पैदल, असवार सवार भिड़ें राजैं ॥८॥

दो०—असुर ऊंट हस्ती चढ़े, कोऊ खर असवार ।
बानर ऋच्छ सिंहमृग, बाहन बिबिधि प्रकार ॥९॥

छं०—बकगृद्धकंक पच्छी बहुबिधि, वृषगवय महिषवाहनधारे ।१०।
खरगोस शृगाल अनेक जीव, बकरा सूकरचढि ललकारे ॥११॥
जल थल जीवों पर सवार सब, दोनों सेना बढती आगे ॥१२॥
पट चित्रबिचित्र छत्र छाये, मणियुत दोउ चम्मर ढुरन लागे ॥१३॥
वायू से डुपट्टा फहरावे, रवि किरनसे मुकुटमणी चमकै ॥१४॥
सागर समान सेना उमड़ी, जलजीव तुल्य वीरहु दमकै ॥१५॥

दो०—पुत्र बिरोचन बलि बली, बैठे उड़न विमान ॥१६॥
अस्त्रशस्त्र से पूर है, प्रगटहिं अंतर ध्यान ॥१७॥

छं०—बैठे बिमान शिर सोह छत्र, वहुवीर संग शशिसमसो हैं ।१८।
सेनापति नमुचि बाण शंबर, नहिं गिनै बीर हम समको हैं।१६।
हेती प्रहेति इल्वल आदिक, जहं वज्रदंत शकुनी राजैं ॥२०॥
हयग्रीव शंकु शिर धन दुंदुभि, तारक निशुंभशु भहु भ्राजैं ॥२१॥
मय त्रिपुराधिय अरिष्ट औरो, कालेय पुलोम वीर सबहीं ॥२२॥
दुख पाया अमृत न लहालेश, लखिसुर शत्रू रणमें जबहीं ॥२३॥
गर्जनकरि शंखबजाय दिये, रिपुकी उन्नति अससहि न सकैं।२४।
ऐरावत पर सुरपति सवार, रवि उदया चल पर शत्रु तकैं ॥२५॥

दो०—सुरपति के चहुं फेर सुर, बिबिधि बाह असवार ।
वरुण अग्नि सब लोक रति, अस्त्र गहे तैयार ॥२६॥

छं०—भिड़गयेपरस्पर कटुबच कहि, ललकारलगे जोड़ीसेभिड़न २७
बलिइन्द्र स्वामि कार्तिक तारक, मित्रहुप्रहेति हेती औ अरुन ।२८।
यम कालनाभ विशकर्मामय, शंवर त्वष्टा सविता रोचन ॥२६॥
अपराजितनमुचि वृषपर्वअश्वि, बलिसौ सुतसेरवि तममोचन ।३०
राहू से चंद्रवायू पुलोम लड़ैं, शुम्भनिशुम्भ महा काली ॥३१॥
अग्नी औमहिष वृषकपीजंभ, विधिसुत इल्वलबातापि बली ।३२
दुर्मर्ष काम उत्कल मात्री, गुरुशुक्र शनीचर नरक लड़े ॥३३॥
बायू निवात कवचहुं वसुसब, कालेय असुरदलजाय भिड़े ॥४३॥

दो०—विश्वेदेव पुलोम सुत, रुद्र क्रोधवश वृन्द ॥३५॥
द्वन्द युद्ध रण में करैं, प्रहार करि स्वच्छन्द ॥३६॥

छं०—गजघोड़े रथपैदर सवार, भुजशिरकटि कवच लगे गिरने ।३७
रथ चक्र पदों से धूरि उड़ी, रवि छिपे रुधिर कुण्डहु भरने ॥३८॥
शिर कटे गिरे कुंडल किरीट, दवेदंत होठ दृग क्रोध भरे ॥३९॥
आयुध आभूषण युत भुज हैं, कटि बीर अंग पृथ्वी में परे ॥४०॥
सुरपति के गज को तीन बाण, हनि फिरें कबंध मुंडनिरखैं ॥४१॥
गजपद रक्षक चारिहु के चार, हनि एक मातलिहि बली लखैं ।४२।
छिनपहुंचे इन्द्रने सबकाटे, वलि यहलखि शक्ति विचित्र गही ।४३
वह भी काटी शूलहु तोमर, लिये जौन २ सब काटे सही ॥४४॥
दो०—अन्तर ह्वै माया प्रगटि, वर्षहिं लगे पहाड़ ॥४५॥
जरे वृक्ष गिर सुरों पर, शिला चूर्ण कर हाड़ ॥४६॥
छं०—फिरैंनग्न राक्षसी राक्षसबहु, अहि बीछीसिंहसरूप धरैं ।४७
काटो मारो करि घोर नाद, गज हय मर्दहि नहिं देर करैं ॥४८॥
बादल गर्जैं अग्नी वर्षैं, वायू प्रेरित बिजली चमकैं ॥४९॥
सांवर्तक अग्नि प्रगट सुरगण, सुरसेन जलाय जोर चमकै ॥५०॥
उमड़ा समुद्र बहवायु चण्ड, उठ लहर भयंकर दुखदाई ॥५१॥
इस भांति अनेकन माया करि, सुरसेन विकलगे थिरताई ॥५२॥
प्रतिविधि न बनै सुरहरिसुमिरैं, जगभावनप्रभु प्रगटे तेहिछन ।५३।
चढ़िगरुड़ अष्ट भुज अस्त्रगहे, दृगकमलक्रीट शिरपीत वसन ।५४।
हरिप्रगटे लोप असुरि माया, ज्यों स्वप्नहरि स्मृति विपतिहरैं ।५५।
हनि शूल कालनेमी हरिको, गहिप्रभु मारयो सहवाह[१] मरै ॥५६॥
दो०—माली और सुमाली, माल्यवान तिहुं भाय ।
काटे शिर हरिचक्र से, रहा सुयश बहु छाय ॥५७॥

१ सवारी

भजन–जगत में हरि हैं सांच सहाई,
विद्यालय जप युक्ति अनेकन, रहो समाधि लगाई।
हरि सुमिरन सेवा बिन कीने, जिमि जलकी चिकनाई॥
तनधन पुत्र मित्र परिवारहु, माता पिता लोगाई।
हरि बिन कोऊ काम न आवैं, लेहु हिये अज़माई॥
रहि प्रारब्ध भोग पर प्यारे, धीरज हिय में लाई।
माधवराम सुमिरु मनसे हरि, दोऊ लोक बन जाई॥

इति श्री० भा० भा० सरसकाव्यनिधौ अष्टमस्कंधे दशमोऽध्यायः



श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ अष्टम स्कंध एकादशोऽध्यायः॥

श्लो०–एकादशे तु देवेषु दैत्यघातिषु नारदः।
देवात् वारयच्छुक्रो, मृतान्दैत्यानजीवयत्॥१॥

दो०–मारहिं असुरन देवता, नारद रोकों जाय।
ग्यारह में घायल असुर, शुक्रहु दीन जिवाय॥

छं०-शुक-उ०-हरिकृपासे सुरपतिसुरहर्षे, जहंतहं दैत्योंकोकुचलचले।
बलि हेत उठाया इन्द्र बज्र, सब प्रजा हायहा करैं भले॥२॥
रणमें बलि वीर से कहैं इन्द्र, गहि बज्र निरादर भारी करि॥३॥
माया करि जीतै माया पति, दृगबाल मूंदि नठ धनलेहरि॥४॥

माया से स्वर्ग औ मोक्ष चहैं, तिन मूढ़ों को कुचलों धरि पद ॥५॥
मायावी तेरा हरौं शीश, लै असुर यतन करले बेहद ॥६॥
बलिरु वाच-कालहू कर्म से प्रेरित जन, संग्राम में आकर लड़ते हैं।
जय अजय कीर्ति मृत्यू आदिक, क्रम क्रमसे सबही धरते हैं ॥७॥

दो०—काल फाँस से सब बँधे, निरखैं सार सुजान।
हर्ष शोक लावै नहीं, सुरपति अहो अजान ॥८॥

छं०—अपने को सिद्ध मानैं वाले, मर्महु छेदक बातैं जो कहो।
सज्जनों में शोचनीय तुम्हरी, दिलमें नहिं एकहु बात गहौं ॥९॥
शुक उ०-इस भांति इन्द्रको कहैं बली, धनुचढाय बाणों से मारा।१०।
शत्रू से निरादर पाय इन्द्र, सहि सके नहीं अस धिक्कारा ॥११॥
बलिको मारा बज्रहु अमोध, लगते गिरसम बलि भूमिगिरे।१२।
लखि गिरा मित्र दौड़ा है जंभ, बदला लूं नहिं मन नेक डरे।१३।
वह सिंहवाह लै गदा दौड़ि, सुरपति ऐरावत दोउ हनै ॥१४॥
लगते ही गदा गज विह्वल अति, घुटने टेकै नहिं सधत बनै ॥१५॥

दो०—लाया रथ तब मातलिहु, गजतजि तहं असवार ॥१६॥
जंभ प्रशंसहि सारथी, हंसि करि शूल प्रहार ॥१७॥

छं०—लगीशूलव्यथा मातलीसही, सुरपतिने वज्रसे शिर काटा।१८
सुनि जंभनाश नारद मुनिसे, बल पाक नमुचि सरपति डांटा।१९।
मर्महु वेधक कटु बचन कहैं, वाणों की बर्षधार बर्षे ॥२०॥
सुरपति के सहस बाण काटे, बहुसुरहिं बेधि हियमें हर्षे ॥२१॥
हनि पन्द्रह बाण नमुचि गर्जै, ज्यों बादल गर्जिवायु प्रेरै ॥२३॥
शरबृन्द से इन्द्रहिं मातलि हनि, रवि ज्यों घनअसुर सबै घेरे ॥२४॥

सौ शर मातलिके हनै पाक, अंगअंगमें अद्भुत कर्म किया ॥२२॥
सुरपति छिपगे सुर हाहाकर, पतिबिन सब धीरज त्यागिदिया ।२५।

दो०—शर पिंजर से सुरपती, निकरे हैं ततकाल ।
दिशा प्रकाशहिं सूर्य ज्यों, प्रातहिं शोभ विशाल ॥२६॥

छं०—सुरसेन शत्रु से पीड़ित लखि, सुरपतिने वज्र उठाया है ॥२७॥
जाती वालों को भय देकर, वलपाकका शीश गिराया है ॥२८॥
बध लखिनमुची रिसशोक भरा, सुरपतिमारनको युक्तिधरै ॥२९॥
रिससे कहि मरि है छोड़ि शूल, सुरपति पै घोर प्रहार करै ॥३०॥
करि सहस खंड त्रिशूल सुरपति, शिर काटैं खैंचि वज्र मारैं ॥३१॥
नहिं त्वचा कटी यह अचरज भा, वृत्रासुर मारा हिय हारैं ॥३२॥
मनमें सुरपति डर गये बहुत, जगमोहनि दैव गती कैसी ॥३३॥
गिर पंख काटि डारे जिसने, महि दबते लखितेहि गति ऐसी ।३४।

दो०—त्वष्टा का तपसार सुत, वृत्रासुर बधकीन ।
औरहु शत्रु अनेक हनि, रण जेहि कीरति लीन ॥३५॥

छं०—लघु असुरमें निष्फल सोई भया, इससे न हाथमें बज्रधरौं ।३६।
भै गगनगिरा सुरपति दुखलखि, मरि है इससे यह युक्ति करौ ।३७।
सूखे से मरै नहिं गीले से, बर दिया इसे युक्ती सोचो ॥३८॥
सुनि सोचि सिंधु फेनहिं मारौ, यह उपाय करिकै दुखमोचो ॥३९॥
मारा लगते ही कटा शीश, मुनि पुष्पवर्षि बिनतीहु करैं ॥४०॥
गंधर्व गान दुंदुभी वजैं, अप्सरा नाचि हिय हर्ष धरैं ॥४१॥

दो०—औरहु प्रति योधा हने, अग्नि वरुण सुरबृन्द ।
सिंह यथा मृगगण हनै, हरि आश्रय स्वच्छन्द ॥४२॥

छं०–विधि ने नारद को भेजि कहा, देवतों को जाय मना कर दो।
मिहनत करवाय अमृत पाया, मत मारो मेरी आज्ञा लो ॥४३॥

नारद उ०-हरिभुजबलसे अम्मृतपाया, बनगयाकाम बसमौनगहो।
श्रीयुक्त देवता वृन्द भये, तजदेव लड़ाई कुछ न कहो ।४४।

शुक उ०-मुनिबचन मानिफरः, शोकिक्रोध गंधर्व गावयश देवचले।
मरने से बचे जो असुर वलिहि, लै अस्ताचल को गये भले ।४६।
है शिर जिनके अंगमें तिनको, फरःशुक्राचार्य्य जिवायदिया ।४७।
बलिके शरीर पर हाथ फेरि, दै ज्ञान पुष्टतन बली किया ॥

दो०–बलिहारे रण में सही, धरे हिये संतोष।
समय उदय की लखैं निज, करैं न मनमें रोष ॥

भजन–हारि औ जीति समय आधीन,
समय अधीन कर्म फल होवै, भला बुरा जो कीन।
नीक कर्म से बिजय सदा रह, अजय कुकर्महु दीन ॥
करत कुकर्म असुर देवों संग, सुरपुर चहं ले छीन।
याही से करि युक्ति अनेकन, हरि रक्षा में लीन ॥
देखत माहिं धर्मही दीखत, अन्तर सब विधि हीन।
समुझि सोचि सब भांति कर्म करि, शिक्षा करैं प्रवीन ॥
सब प्रकार जग कठिन व्यवस्था, संमत यह प्राचीन।
माधोराम सुमिरि गुनगावो, समझो भूम गुणतीन ॥

इति श्री० भा० भा० अष्टमस्कंधे एकादशोऽध्याय: समाप्त:।



श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ अष्टम स्कंध द्वादशोऽध्यायः॥

श्लो०—द्वादशे मोहिनीरूपविभ्रमालोकनोत्सुकम् ।
भवं संमोहयामास हरिः पुनरसांत्वयत् ॥

दो०—रूप मोहिनी निरखि शिव, मोहे भूलो ज्ञान ।
बारह में वर्णत हरहिं, समझायो भगवान ॥

श्रीबादरायणि उवाच—धरिनारिरूपहरिअसुरमोहि, सुरगनकोअमृतपिलादिया।
चढि बैल भूत गण उमा संग, हरि दर्शन हेत पयान किया ॥२॥
भगवान मिले आदर कीना, शिव पार्वती को आसन दै ।
बैठे आसन पर प्रसन्न चित, कहते हैं हर कुछ हांसी लै ॥३॥
महा० उ०—जगदीश जगत मयदेवदेव, सबकी आत्मा परमेश्वर हैं ।४।
जगके हैं आदि अन्त मध्यहु, चित सत्य ब्रह्म सबसे पर हैं ॥५॥
बिन चाह संत तव चरण भजैं, लोकहु पर लोक आश त्यागे ।६।
तुम निर्गुण ब्रह्म पूर्ण सुखमय, जग रचि पालत नाशत आगे ॥

दो०—सब विकार से रहित प्रभु, दूसर नाहिं अनन्य ।
सबसे अन पेक्षा किये, भजहिं तुम्हें ते धन्य ॥७॥

छं०—सत असतरूप अद्वैत एक, जिमि भूषणमें नहिं स्वर्ण भेद।
अज्ञानी रचैं विकल्प बहुत, हो बिन उपाधि सपने न खेद ॥८॥
कोउ ब्रह्म धर्म कोइ माया पर, परमेश्वर पुरुष कोइ मानै ।
नवशक्ति सहित प्रभु महापुरुष, स्वच्छंद सदा अव्यय जानै ॥९॥
हम ब्रह्मामुनि मरीचि आदिक, सात्विकहू करतब लखि न सकैं।
माया मोहितनर असुर कहां, रजतममें रत किसभांति तकैं ॥१०॥

हरि व्यापक तुम सब जानत हौ, जगजन्म नाश मोक्षहु बंधन।
जिमि वायू व्याप्त चराचरमें, फँसते न कभी हो भवफंदन।११।

दो०—सब अवतार लखे प्रभू, गुणगहि लीला कीन।
देखा चहैं सरूप हम, नारि मोहनी लीन॥१२॥

छं०—असुरों को मोह लिया जिससे, देवों को अम्मृत प्याया है।
दर्शन करने को आयें हम, अति बिस्मय हियमें छाया है॥१३॥
शुक उ०-यों कहाविष्णुसे जबशिवने, गंभीरभावगुनिउत्तरदिया।१४
भगवान०-असुरोंके हितधरिनारिरूप, तहंकलशगयालखिकाजकिया
सुर श्रेष्ट तुम्हें दिखलावेंगे, कामियों को प्रियपड़ि जहां भखैं।१६।
शुक उ०-कहि अन्तर्ध्यान भयेहरिझट, शिवपार्वती चहुं फेर लखैं।१७
चलि दीख बाग में सुघर नारि, नव बेलि वृक्ष पल्लवहु सुमन।
खेलती गेंद किंकिणी वसन, कटि में सो हैं हरती मुनि मन॥१८॥
ग्रीवा स्तन पर हिलै हार, पद पद में कमर बल खाती हैं।
पद कमल भूमि परसत जिसके, पिघलै कोमलहो जाती हैं॥१९॥

दो०—गेंद जहां को जात हैं, चपला चमकै नैन।
कुंडल हलकि कपोल लगि, मुख छबि शोभा ऐन॥२०॥

छं०—अलकैं बिथुरी खुलिगै कवरी, छुटते हैं बसन करसे साधे।
दहने से गेंद उछाल रहीं, मोहनी मचहु मुनि मन बांधे॥२१॥
फेकते गेंद शिवको देखा, मुशकाय नैन तिरछे मारे।
भे बिकल कामके वशमें हर, नहिं लखैं उमा शिवगण सारे॥२२॥
फेंका फिर गेंद उघारि हाथ, लेने को मोहनी धाई है।
वायू ने उड़ाया वस्त्र तभी, अंग लखि शिव बुधि बौराई है॥२३॥

है रूप मनोहर नैंन सुघर, लखि लेने को शिव मन चाहैं ॥२४॥
विज्ञान गया भे काम विवश, तजि लाज धरैं को उत्साहैं ॥२५॥

दो०—शिव आते लखि मोहनी, लज्जित अंग उघार।
वृक्षों में छिपती फिरैं, हँसि हँसि मारहिं मार ॥२६॥

छं०—इन्द्रियों के वशहरपीछे भजि, गज हथिनीकेबश काम किया।
नहिं चहैं भागि शिव लगि पीछें, चोटीगहिअंग लगायलिया ।२८।
हाथी हथिनी त्यों मोहनिशिव, खुले बाल इतैउत छटक रही ॥६२॥
हरि माया मोहनि रूप बनी, भागी हैं अद्भुत कर्म सही ॥३०॥
प्रभुअद्भुत गतिशिव लखि न सके, निजशत्रु कामके वशमें भये ।३१
दौड़ते अमोघवीर्य बह चल, गौ पीछे बृषभ की दशा लये ॥३२॥
शिववीर्य भूमि पर गिरा जहां, सोने चांदी की खान भई ॥३३॥
गिरि बन उपबन नदि तड़ागमें मुनिवृन्दहि, सिखई सीखनई ॥३४॥

दो०—धोखे मत रहियो कोई, करियो मत अभिमान।
भये कामवश कामजित, देखो शिव भगवान ॥३४॥

छं०—वहगयावीर्य शिवलौट पड़े, जड़सम हरिमाया बशकीना ।३५
परमात्मा की गति आत्मा से, नहिं लखे पराक्रम सब छीना ॥३६॥
धरिरूप बिष्णुनिज शिवहिं मिले, लखिसावधानयों बचनकहे ।३७
भग० उ०—बड़भागआप निष्ठामें हैं, माया मेरी से बचके रहे ।३८
तुम्हैं छोड़ि तरैं माया को और, कामियों को अतिही दुस्तर है ।३६।
नहिं अब मोहैगी मम माया, बच जाय भक्त जो मुझ पर है ॥४०॥
शुक उ० इसभांति आज्ञाले हरिकी, गणपार्वती संगधाम गये ।४१
माया प्रभाव सुनि संमुख में, शिव पार्वती से कहत भये ॥४२॥

दो०—पर प्रभु की माया लखी, कस दुस्तर बलवान ।
श्रेष्ठ कला हम मोहबस, और बचै को आन ॥४३॥

छं०—करिवर्षसहसउठि योगसे हम, तुम पूंछा किसका ध्यानकिया ।
जहँ काल न जाय न गति जानै, परपुरुषअखंड प्रमाणलिया ।४४।
शुक उ०—हे राजनशांग धनुषहरिका, इसभांति पराक्रम सुनादिया ।
जिमि पर्वत धारा मथा सिंधु, सुर अम्मृत प्याय कर हर्ष हिया ।४५।
यह चरित पढ़ैं अरु सुनैं सदा, उनका उद्यम न बिफल जावैं ।
संसार परिश्रम दूर होय, हरिगुन गाये शांती आवै ॥४६॥

दो०—असत न पावहिं जासुपद, भक्त भाव से पाव ।
नमो मोहनी रूप हरि, देवहिं अमृत पियाव ॥४७॥

धुन, राम कहने का मजा जिसकी जबां पर आ गया ।

भजन—मोहनी सारा जगत माया ज़बर करतार की ।
तारना आत्मा चहे तो छोड़ राह कुतार की ॥ टे० ॥
कार में व्याकुल फिरै, किस भांति पैदा धन करूं ।
छल रही माया उमर, नहिं याद उस दरबारकी ॥१॥
दुनियवी शौरैं करै, शौकैं सूझती नित नई ।
पार हो ईश्वर मिलै, नहिं सूझ उस आसार की ॥२॥
पीठ तांबे से मढी, रावन औ बाणासुर बने ।
पानी का है बुल बुला, यह जिन्दगी दिनचार की ॥३॥
जगतकी यारी करी, प्यारी लगी नारी सदा ।
सुरत माधवराम, अब करले संवलिया यार की ॥४॥

इति श्री० भा० भा० सरसकाव्यनिधौ अष्टमस्कंधे द्वादशोऽध्यायः

श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ अष्टम स्कंधे त्रयोदशोऽध्यायः ॥

श्लो०—त्रयोदशे तुव र्ण्यन्ते सप्तमादीन्यनुक्रमात् ।
मन्वंतराणि सर्वाणि षड्विधानिपृथक् पृथक् ॥१॥

दो०—तेरह में सातो मनू, पिछलेहू कहि दीन ।
मन्वंतर की कथा सब, क्रमसे वर्णनकीन ॥

छं० शुक उ०-मनु श्राद्धदेव रबिसुत सतये, इनके सुपुत्र सब भूपसुनो ।
इक्ष्वाकु नभग शर्याति धृष्ट, नाभागनरिष्यंतहू गुनो ॥२॥
बसुमान करूष पृषध्र दशहु, रबिवसु रुद्रौ विश्वे देवा ॥३॥
अश्वनिकुमार ऋभु वायूदेव, है इन्द्र पुरंदर गुनिलेवा ॥४॥
कश्यप बशिष्ठ अत्री गोतम, जमदग्नि भरद्वाजहु कौशिक ।
मुनिसातअदिति कश्यपसेभये, वामनप्रभु चरितकिये लौकिक ।६
कहि दिये सातमनु थोरे में, होंवे आगे सातौं सुनिये ।
संज्ञा छाया रबिकी नारी, विशकर्मा की कन्या गुनिये ॥८॥

दो०—तीसरि बड़वा तीन सुत, संज्ञा पैदा कीन ।
यम यमुना श्राद्धहु मनु, छायाहू में तीन ॥९॥

छं०—सावर्णि शनीचर तपति सुता, जो संवरणहु को व्याही है ।
बड़वा के अश्वनिकुमार हैं, देवों के बैद उत्साही हैं ॥१०॥
अठवें मनु सावर्णी होंगे, निर्मोक विरज आदिक सुत हैं ॥११॥
सुरसुतप विरज औ अमृत प्रभा, बलिइन्द्र होंय गतिअद्भुतहैं ।१२
दै बामन हरिको तीन पैर, महिइन्द्रासन तजि सिद्धि लहैं ।१३

प्रभुबांधिकै सुतल पठायदियो, जहं स्वर्गहुसे सुखअधिक अहैं।१४
अश्वथामा गालव औ व्यास, शृंगीऋषि परशुराम गुनिये।
हैं दीप्तिमान मुनि कृपाचार्य, सातों ऋषि अठवें मनु सुनिये।१५

दो०—यह सातों मुनि होंयगे, हैं निज निज स्थान ॥१६॥
बलिको सुरपुर देंयगे, सार्व भौम भगवान ॥१७॥

छं०—हों दक्षसवर्णि नवयें मनु, सुत भूतकेत दाप्तिहु केतू ॥१८॥
पारा मरीचि गर्भादि मुनी, अद्भुत हैं इन्द्र सुख के हेतू ॥१९॥
मुनि द्यु तिमत आदि ऋषभ हरि हैं, जो अद्भुत इन्द्रहिं सुखी करैं।
पितु आयु मान माता जिनकी, अंबू धारामें जन्म धरैं ॥२०॥
दशवें मनुब्रह्म सावर्णि हैं, सुतभूरि षेण आदिक जानो ॥२१॥
जय सत्य सुकृति मूर्तिहु मुनि हैं, देवता विरुद्धादिक मानौ ॥२२॥
हो शंभु इन्द्र हरि बिष्वकसेन, प्रभुशम्भु इन्द्रके मित्र बनैं ॥२३॥
ग्यारहे धर्म सावर्णी मनु, सुत सत्य धर्म आदि को गने ॥२४॥

दो०—कामगमा निर्वाण रुचि, देव विहंगम जान।
वैधृत सुरपति होय तहं, अरुणादिक मुनिमान ॥२५॥

छं०—सुत आर्यक के हों धर्म सेतु, वैधृतमें प्रगटैं हरि भगवान ॥२६
बारहें रुद्र सावर्णी मनु, उपदेव देव सुत देववान ॥२७॥
ऋत धामा इन्द्र तहां पर हों, देवता हरित आदिक होवैं।
मुनि तपोमूर्ति आग्नीध्रकादि, सब धर्म शास्त्रशिक्षा जोवैं। २८॥
सूनृता मातु पितु सत्य सहस, अवतार स्वधाय प्रभू पावैं ॥२९॥
तेरहें देव सावर्णि मनू, सुत विचित्र चित्रसेन गावैं ॥३०॥
सुत्राय सुकर्मादिक सुर हैं, हों इन्द्र दिवस्पति यश भारी।

निर्मोक तत्व दर्शादिक मुनि, जो सत्यधर्म शिक्षा कारी ॥२१॥

दो०—देवहोत्र के पुत्र हरि, योगेश्वर हैं नाम ।
वृहती मातामें प्रगटि, साधैं सबके काम ॥२२॥

छं०—चौदहें इन्द्र सावर्णी मनु, उरु गंभीरादिक पुत्र भये ॥२३॥
शुचि इन्द्र देवता चाक्षुषादि, अग्नी बाहू सब मुनिहु लये ॥२४॥
सत्रायण के सुत वृहद भानु, वितनामे ह्वै मखकरवावैं ॥२५॥
युग सहस्र में चौदह मनु ये, होता है कल्प मुनिवर गावैं ॥२६॥

दो०—चौदह मनु की कथा जो, कहे सुनै चितलाय ।
तापर विष्णु प्रसन्न हों, काज सिद्ध ह्वै जाय ॥

भजन—काल है हरिका गुप्त सरूप ।
परमाणू से कल्प बनै है, निशिदिन वर्षहु रूप ॥
कर्म नीक करि जीवकाल में, होवै सुर नरभूप ।
करि कुकर्म दुख भोगे ह्यांपर, परैं अन्त तम कूप ॥
कालहि से जग बनै नाशहो, होय छांह अरुधूप ।
माधवराम श्याम भजि सुखलें, शिक्षा गहो अनूप ॥

इति श्री० भा० भा० अष्टम स्कंधे त्रयोदशोऽध्यायः



श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ अष्टम स्कंधे चतुर्दशोऽध्यायः ॥

श्लो०—चतुर्दशे तु सर्वेषां मन्वादीनां यथायथम् ।
पृथक्कर्माणि वर्ण्यंते भगवद्वशवर्तिनाम् ॥१॥

दो०—पृथक पृथक मनुकर्म सब, सुरमुनि इन्द्रहु साज ।
चौदह हमें वर्णन करें, यह गाथा मुनिराज ॥

छं० उ०—भगवन जिस भांतिमनू, चौदह मन्वंतरभी बतलादीजै ।
करते हैं कर्म शिक्षा जैसी, कहिये मुनिवर दाया कीजे ॥१॥
ऋषि उ०—मनुपुत्र मनू मुनि इन्द्र सबी, देवता हरी आज्ञा मानै ।२
कल्पांत कालसे ग्रसित बेद, तप करि सब मुनि लाना ठानै ॥३॥
हरि यज्ञ बनाई मनु करिके, संसार सभी पालन करते ॥४॥
रह चारो चरण धर्म सतयुग, निज समय पै कर्मधर्म धरते ॥५॥
पालते प्रजा मनुके लड़के, मख भाग लेंय सुर मदद करैं ॥६॥
प्रभु का दीना ऐश्वर्य इन्द्र, भोगैं जल वर्षहिं काज सरैं ॥७॥

दो०—विष्णु तहां अवतार लै, रक्षा करि दे ज्ञान ।
कर्मयोग मुनिवर धरैं, करैं ईश हिय ध्यान ॥८॥

छं०—धरि प्रजापती के रूप विविध, सृष्टी बहुभांति रचाते हैं ।
नृप रूप से चोर बिनाश करैं, धरि कालरूप लय लाते हैं ॥९॥
स्तुति करते मुनि नाना विधि, माया से नाम रूप धारैं ।
अवतार अनेकन धरैं बिष्णु, भक्तन को दुखसे उद्धारैं ॥१०॥

दो०—कल्प विकल्प प्रमाण यह, कहा भूप सब गाय ।
मनु मन्वंतर होय जहं, भगवत करैं सहाय ॥११॥

भजन—काल की गति बहुतै बलवान,
ब्रह्मा के दिनमें हजार युग, होवैं शास्त्र प्रमान।
यही भांति सौ वर्ष विधी के, महा कल्प पहिंचान॥
प्रकृति विनाश नाश हो ब्रह्मा, नाशै सकल जहान।
लयमाया सब जीवबिनाशैं, अद्भुत गति नहिं जान॥
धन छन वीतै शिक्षा देवैं, बीतै बयस निदान।
माधवराम श्याम जीवत ही, करौ दर्श भगवान॥

इतिश्री भा० भा० सरसकाव्यनिधौ अष्टम स्कंधे चतुर्दशोऽध्यायः

श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ अष्टम स्कंधे पंचमोऽध्यायः॥

श्लो०—वलिं पंचदशे विश्वजिताचार्या अयाजयत्।
ततोऽसौ स्वर्गमजयद्भयाद्देवा निलिल्यिरे॥१॥

दो०—यज्ञ करायो बलिहिं गुरु, स्वर्ग जीति तेहि लीन।
पन्द्रह में वर्णन करैं, भये देवता छीन॥

छं० उ०-किमिमांगे बलिसे तीनपैग, हरिलेके उसको बांध लिया।१
सुनना चाहों मन बिस्मित है, अपराध बिना कस दंड दिया।१
शुक उ०-सुरपतिलक्ष्मीली छीन, विकलबलिकोगुरुने भटज्यायाहै
सब भांति से गुरुकी सेवा करि, तन धन दे उन्हें मनाया है।।३॥
गुरुद्विज मिलि बलि हित यज्ञ करैं, जो विश्वजीत मख कहलावै।
जयहेत महा अभिषेक किया, विधिसे जिसमें बलि जय पावै।।४॥

रथ स्वर्णमयी सुरपतिके अश्व, सम घोड़े अग्नी से निकले।
ध्वजसिंह विराजमान जिसमें, सबही बदला निपटे पिछले ॥५॥

दो०—दिव्य धनुष तूणीर दो, दिव्य कवच ही साथ।
दिव्य माल प्रहलाद दी, विजय शङ्ख गुरु हाथ॥

छं०—रण समान दै मंगल कीना, बलि बिप्रों चरण प्रणाम किया।
आज्ञाली तिन्हैं नमाय शीश, नमि प्रहलादहि अति हर्ष हिया।७
भृगु दिया दिव्य रथ पै चढ़िके, धरि कवच बाणधनु जयमाला।८।
श्रुतिकुंडल शीशमुकुट भूषण, दमकैंजिमि अग्नि ज्योतिज्वाला
निज तुल्य सेन लै दैत्य पती, पीवैं अकाश जनु अग्नि जलैं।१०।
लैअसुर सेनसुरपुर पहुंचे, महिगगन विदिशिदिशि सबहिंहिलैं।
नंदन बनमें तरु बेलि पुष्प, पत्ती भौंरा गुंजार करैं ॥१२॥
फलभार से झूमि रहे तरुबर, जलतट जलपत्ती मगन फिरैं।

दो०—खिले कमल जलमे विविधि, कर सुरवधू बिहार ॥१३॥
लावा गंग अकाश हैं, शोभा विविधि प्रकार ॥१४॥

छं०—हीरों से जटित पुरद्वार रत्न, मयगोपुर कनक अटारी हैं।
जहँ विमल मार्गरचि विश कर्मा, सबही की शोभा न्यारी हैं॥१५॥
चौराह सभा बाजार तहां, मणिमय विमान वहु सोहि रहे ॥१६॥
नव वयस रूप आगरी नारि, दमकै लखि, मुनिमन मोहि रहे।१७
सुर नारिन के शिर पुष्प गंध, लै वायु सुगंधित सदा बहै ॥१८॥
गोषों मोषों से धूम धूम, निकसैं सुरतिय जहं छिपी रहैं ॥१९॥
मणि बितान स्वर्ण पताकों से, ध्वज केतु गगन लौं फहराये।
नाचहिं मयूर गुंजरहिं भृंग, तिय मंगलगान मधुर छाये ॥२०॥

दो०—दुंदुभि भेरी शङ्ख बहु, बाजहिं विविध प्रकार।
नृत्य गान सुर ताल मृदु, छावैं छटा अपार ॥२१॥

छं०—नहिं जांय अधर्मी द्रोही जन, कामी क्रोधी हिय लोभधरैं।
जाते हैं शुद्ध चित धर्मवान, नारी नर जे हरि भजन करैं ॥२२॥
सुरपुरी सैंन लै घेरी बलि, गुरुदत्त शंख धुनि लाई है।
धुनि जोर घोर सुनि सुरनारी, हिरदे में अति थराइ हैं ॥२३॥
बलिकाबलवान यतन लखि कर, सुरपति सुरलै गुरु पास गये ।२४।
हे गुरू लखो बलिका उद्यम, अस असह तेज किमि बढत भये ।२५।
नहिंरुकै किसी से किसी भांति, दशदिशिपी अग्नितुल्य चाटै ।२६।
क्या कारण रिपु का कहो आप, हम तेजवंत हूं को डाटै ॥२७॥

उ० दो०—रिपुउन्नति कारण सबहिं, हम जान सुरराज।
तेज बढायो शिष्य को, बहुमुनि भृगु महराज ॥

तुम तुल्य तुमहु इक हरी बिना, बलिके सामने न ठहर सकै ॥२८॥
जिमिकाल सामने बीर कोई, तजिधाम भगो निजसमय तकै ।३०।
द्विजबल से बली प्रतापी है, अपमान किये कुल सहित नाश ।३१।
गुरु सलाह से पुर छोड़ि भगे, कामना रूपधरि तजि सुखआश ।३२।
सुरपतिभागे वलिप्रवेश करि, पुरबैठि त्रिलोक स्ववशमेंकिया ।३३।
जग बिजयी निजचेलालखिकै, सौ अश्वमेध गुरु ठान दिया ।३४।
तिस प्रभावसे यशतीन लोक, फैला शशि तुल्य छटा छावै ॥३५॥
सुख सुरपुर श्रीबलि भोग रहे, कृतकृत्य आत्मको हिय लावै ॥३६॥

दो०—गुरु सेवा का फल प्रगट, निरखि लेहु नरनारि।
जो गुरु में श्रद्धा करैं, सो फल पावहिं चारि ॥

भजन—गुरुशरण जीवसुखकारी,
हरिपदविमुख यद्यपि हैं दानव, गनतनहींमनमेंसुरमानव।
गुरु भजि विपदा टारी ॥ गुरु०॥
माधवराम कृपा गुरुपाई, विद्याधन भक्ती हिय आई ॥
श्यामचरण अधिकारी ॥

इति श्री० भा० भा० सरसकाव्यनिधौ अष्टमस्कंधे पंचदशोऽध्यायः



श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ अष्टम स्कंधे षोडशोऽध्यायः ॥

श्लो०—षोड़शे पुत्र नाशेन शोचन्त्या अदितेः पतिः ।
प्रार्थितः कश्यपः प्राह पयोवृतमितीर्यते ॥१॥

दो०—पुत्र दुःख से अति दुखित, अदिती कश्यप नारि।
सोलह में कश्यप कह्यो, पयब्रत हिये बिचारि ॥

छं० शुक उ०-सुखदुखीदेखि अदितिहैदुखी, दैत्योंने सुरपुरछीनलिया।
इक समय समाधी तजि कश्यप, घरआये तियलखि दुखीहिया।२।
आदर सतकार किया नारी, बैठे यह नीति कथन कहते ॥३॥
हे प्रिये जगत है मौतके बश, नहिं धर्म विप्रदुख कहु लहते॥४॥
हैं गेह मालकिन घरमें कुशल, धर्मार्थ काम जहँ बन जावें ॥५॥
क्या अतिथि बिना सतकार गये, तुम अटकी आदर नहिं पावें॥६।
जिस घर में अतिथी जलसे भी, आदर न पाय फिर जाते हैं।
सब भरी संपदा कुटुंब बहु, सर्पों के भवन लखाते हैं ॥७॥

दो०–हवन किया नहिं समय पर, हम समाधिली धार।
तुम गृह कारज में फँसी, भा उलटा यह कार ॥८॥

छं०–अग्नी ब्राह्मण हरि सुरमुख हैं, पूजनसे कामना सिध होवैं।९
हैं प्रिये पुत्र देवता सुखी, तुम दुखी आत्मा हम जोवैं ॥१०॥
अ० उ०-मंगलहै द्विजगौधर्म अतिथि, पूजैं सबनित ही विधानकर।
अतिथी अग्नी भिक्षुक सेवक, तब दयासे पाये नित आदर ॥१२॥
नहिं कौन काम हो सिद्ध मेरा, पति इस प्रकार से हित चहते।
हैं आप प्रजापति हितकारी, उपदेश धर्मके नित कहते ॥१३॥
मन शरीर के सुत सब तुम्हार, हे प्राणपती यह विनय सुनों।
सबमें सब दृष्टी आपकी है, भक्तों को भजते मनमें गुनो ॥१४॥

दो०–भजन करौं हरि आपका, करौ मोर कल्यान।
पुत्र बधू सुत हैं दुखी, पाहि हमैं भगवान ॥१५॥

छं०–सौतेलों ने सुत काढि दिये, हौं दुखीधाम धन यशहारी।१६
सुर फिर पावैं यह यत्न करो, कल्यान करो प्रभु सुखकारी ॥१७॥
शुक उ०-इसभांति बिनयसु निहँसिकश्यप, कहतमायामें जगतफंसा।
तन नाशमान आत्मा है विमल, किसके पतिपुत्र हैं मोहग्रसा।१९
पद शरणलेहु हरि दुखहर की, सबके हिय जगतमाहिं बासी ॥२०॥
दुखहरण दीनके पूर काम, हरि भक्ति सफलहै सुखरासी ॥२१॥
अ० उ०–किसबिधिसेकरूं मैं आराधन, संकल्पसत्यप्रभु पूरैंकाज।
हे प्राणपती विधि बतलाओ, सुत सहित सुखी हाजाऊं आज।२३

दो०-कश्यप उ०-पुत्र कामना रही हिय, विधिसे पूछी जाय।
हरि तोषण जो यतन कह, तुमसों देहु बताय।२४

छं०—बारह दिन शुक्ल पच्छ फागुनमें, पयव्रत धारै पूजै हरि ॥२५॥
बन बराहे की खोदी माटी, मावसमें लगा तन मज्जन करि ॥२६॥
यह पढै मंत्र पृथवी देवी, तुम्हें आदि बराह प्रभू लाये।
है नमो पाप नाशौ मेरे, अंग लगाय माटी वो न्हाये ॥२७॥
करि नियम फेरि हरि को पूजै, मूरति बेदी में रबि औ जल।
अग्नी में औ गुरु मूरति में, ह्वै सावधान तजिकै हलचल ॥२८॥

दो०—भगवत पुरुष महान प्रभु, सकल जगत में बास।
वासुदेव साच्छी सदा, भक्तन देत सुपास ॥२९॥

छं०—है नमो प्रधान पुरुष सूच्छम, चौबीसतत्व मायासे अंग ॥३०॥
दो शीश सगुण निर्गुण सरूप, त्रीपाद त्रिगुण सब वेद शृंग।
हैं सात छंद ही हाथ यज्ञ, के रूपवेद त्रयरूप धरे ॥३१॥
शिव रुद्र शक्तिधर विद्यापति, है नमो भूतपति नमोहरे ॥३२॥
जगदात्मा प्राण हिरण्य गर्भ, योगेश्वर नमो जगत कारण ।३३।
है नमो साच्छी आदि देव, नारायण नर हरिजन तारण ॥३४॥
मरकत मणिसम है श्याम अंग, केशव पीतांबर धारी नमो ॥३५॥
नर श्रेष्ट भक्तके वरदायी, जन सेवहिं चरण मुरारी नमो ॥३६॥

दो०—जिन पद को हति सेवही, लच्मी हिय में धार।
प्रसन्न सो भगवान मम, कारज देहु सुधार ॥३७॥
आवाहन पूजन करै, पाद्य अर्घ्य स्नान।
मंत्र पढै विधि सों सबै, हरि चरणों में ध्यान ॥३८॥

छं०—पंचामृत पय नहवाय पोछि, चंदन माला पहनाय बसन।
द्वादश अच्छर पढ़ि मंत्र धूप, दीपहु निवेदि दे आभूषन ॥३९॥

चांवलकी खीर गुड़ घृत डारी, द्वादश अक्षर से हवन करै ॥४०॥
हरि अर्पण करि भक्तहि देवै, आचमन पान प्रभु अर्पि धरै ॥४१॥
आहूती एक सौ आठ देय, स्तुति प्रणाम पर दक्षिण करि ॥४२॥
धारै प्रसाद निज शीश माहिं, द्विज बारह नेवतै श्रद्धा धरि ॥४३॥
आज्ञा लै सबहिं खवाय खाय, ब्रह्मचारी ह्वै महिमें सोवै ॥४४॥
बारह दिन करि तेरहे पूर्ण पय, से हरि न्हावै शुचि होवै ॥४५॥

दो०—दूध पियै यह पयोव्रत, हरि पूजै चित लाय ।
हवन करै नित मंत्र जपि, ब्राह्मण देय जिमाय ॥४६॥

छं०-हरिपूजन बारह दिनलौंकरै, द्विजभोजन हवनहरी अर्पन ।४७
पड़िवा से त्रयोदशी लौं पूर, न्हावै त्रिकाल शुचि भूमिशयन ।४८
बोलै न झूठ नहिं विषय भोग, हिंसा न करै हिय हरिहि भजै ।४९
तेरस में उत्सव बड़ा करै, पंचामृत न्हान सुमंत्र सजै ॥५०॥
लालच तजि पूजन बड़ा साजि, हविसे अग्नी में करै हवन ॥५१॥
नैवेद्य खीर नाना व्यंजन, प्रभु अर्पण कीजै प्रसन्न मन ॥५२॥
आचार्य पूजि जो धन देवै, वस्त्रहु आभूषण प्रसन्न चित ॥५३॥
ऋत्विकद्विज और हुदानमान, करिकैचाहै सिधि अपना हित ।५४

दो०—दै भोजन गुरु दक्षिणा, बहुविधि गुरु को मान ।
तृप्त प्रसन्न करैं सबहिं, खुशी होंय भगवान ॥५५॥

छं०-दीनांध भिखारी जिमाय सब, हरितृप्ति मानि प्रसाद पावै ।५६
स्तुति मंगल नाचहू गान, हरि कथा नित्य ही करवावै ॥५७॥
यह नाम पयोव्रत विधि ने कहा, हमसे सोई हम बतलाया ॥५८॥
ह्वै सावधान यह व्रत धारो, परमेश्वर शीघ्र करैं दाया ॥५९॥

T

ब्रत यज्ञ सबै तप सार यही, दानहू सार हरि तृप्ति गुनो ॥६०॥
यम नियम दान तप ब्रतमखसे, हरि हों प्रसन्न यह मंत्र सुनो ।६१।

दो०—श्रद्धा से यह ब्रत करो, प्रिये खुशी भगवान ।
शीघ्र प्रगट हो देयंगे, मन चाहा बरदान ॥३२॥

भजन—भजन हरिही को जग में सार,
बिन हरि भजे योग तप ब्रतमख सबही है बेकार ।
यासों यही उचित है जगमें हरि हिरदे में धार ॥
हरि सब आप सम्हारि लेयंगे दोउ लोक को भार ।
माधवराम श्याम के बलसे भवसागर भे पार ॥

इति श्री० भा० भा० अष्टमस्कंधे षोडशोऽध्यायः समाप्तः ।

श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ अष्टम स्कंधे सप्तदशोऽध्यायः ॥

श्लो०—ततः सप्तदशेऽदित्या कृते तस्मिन्ब्रते हरिः ।
तत्कामपूरणायादौ तत्पुत्रोऽभूदितीर्यते ॥१॥

दो०—आदति कीन ब्रत चाह सो, पुत्र भये हरि आय ।
पूर करी सब कामना, सत्रह में यह गाय ॥

छं० शुक उ०-पतिकश्यपजी अदितिहिशिक्षा दीनीपयब्रतधारणकीना ।
मति एक से महापुरुष ध्यावैं, मन इन्द्री बशमें कर लीना ॥२॥
अखिलात्मा हरि में एक बुद्धि, मनवासुदेव में निरधारे ॥३॥

हरि आये पुरुष पीतांबर धर, गदशंख चक्र पद्महु धारे ॥४॥
हरि सन्मुख लखिउठिकरि प्रणाम, विह्वल ह्वै प्रेमसे होश नहीं।५।
कर जोरि नैन प्रेमाश्रु भरे, रोमांच खड़े तन कंप सही ॥६॥
पुनि गद् गद बैन करै स्तुति, नैनों से रमापति छबि निरखै।
जनु पान कर रहीं मोद भरीं, हरि यज्ञपती जगपती लखैं ॥७॥

दो०—अदिति उवाच-यज्ञ ईश यज्ञहु पुरुष, श्रुति मंगल प्रभु नाम।
शरणागत दुख हर दया, नमो चरण सुखधाम ॥८॥

छं०—जगरूप जगत पालकनाशक, निजशक्ति धारिप्रभु करते हैं।
परिपूर्णबोध तमहारी हरिः है नमो रूप बहु धरते हैं ॥९॥
प्रभु अशीश से वय तन लक्ष्मी, भूमी सुरपुर त्रिलोक रचना।
ज्ञानहुबिशुद्धहों रिपुजयक्या, जिसकेहितहरि सन्मख पचना।१०।
शुक उ०-हरिकमल नैनस्तुति सुनिकै, चेत्रज्ञ भूतपति बचनकहैं।
जनुसूखी बेलि दवारि अनल, प्रभुदया वृष्टिकरि सींचत हैं ॥११॥
भग० उ०-सुरमातु आपकीचाहपुत्र, की लक्ष्मीरिपूने छीनलई।१२
रिपु जीति समर में देहुराज, सुरलोक लहैं हो कीर्ति नई ॥१३॥

दो०—इन्द्र जैष्ट सुर सुतन सों, हारैं रिपु रण माहिं।
देखन की इच्छा तुम्हैं, रिपुनारी बिलखाहिं ॥१४॥

छं०—निज पुत्रों को त्रैलोक सहित, सुरपुर बैठें सुख संपति लें।१५।
पर अपार बल हैं असुरपती, द्विज प्रसन्न तिन पै बल न चलै।१६।
व्रत से प्रसन्न सोचा उपाय, मम पूजन वृथा न फलदाई ॥१७॥
तुमसे पूजित हम पुत्र बनै, सुर रक्षा करि हैं चितलाई ॥१८॥
सुभक्तिकरि भावपती को भजो, निष्पाप मुनी तुमसती अहो।१९।

करतब सुगुप्त फलती है सदा, औरों से पूंछने पर न कहो ॥२०॥
आदिति उ-नहिंधारिसकौंतुमआदि पुरुष,ब्रह्मांडकोटिरोमोंमेंबसै।१।
पातकी नाम सुमिरे से तरै, किस भांति धरौं जग तनमें लसै॥२॥
भग० उ०—सच कहती सुरमाता तौ भी, पतिव्रत धारैं जो नारी हैं।
धारण कर सकती हैं हमको, उनकी महिमा द्युति न्यारी हैं ॥३॥

भग० उ०-दो०—यह कह अन्तर ध्यान भे, अदिती दुर्लभ जानि।
अपनेमें हरिजन्म शुभ, समुझि हिये हरषानि।२१।

छं०-पतिजायमिली हियभक्तिविमल, मुनिसमाधिसेसबज़ानगये।
ज्यों अग्नि काष्टमें आतममें प्रभु, लखितपयुतगर्भाधानकिये।२३।
अदिति के गर्भ में माया से, भगवान सनातन आये हैं।
हरि गुप्त नामसे विधि आकर, नारायण विनय सुनाये हैं ॥२४॥
ब्रह्मोवाच-बहुकीर्तिबड़ी गति तुम्हैनमो,ब्रह्मण्यदेव हे नमोत्रिगुण।
विधि पृश्निगर्भनमो वेदगर्भ, त्रैलोक नाभमें परहो सगुण ॥२६॥
जग आदि अंत मध्यहु में आप, मुनिशक्ति पुरुषहू कहते हैं।
तुम काल रूप जग बहे जहां, ज्यों सरिता में तृण बहते हैं ॥२७॥
दो०—जगत चराचर जीव सब, उत्पति नाश विलास।
सुरपुर से सुरपति तजे, तिनको देत सुपास ॥२८॥
भजन—अनेकों रूप धर हरदम विपति जनकी छुड़ाते हैं।
कभी सुरनर कभी जलजीव नरहर रूप लाते हैं ॥ टे० ॥
देवता मुनि गऊ ब्राह्मण प्रजा पर जब विपति आवै।
न लेते चैन हैं पल भर, प्रगट हो झट बचाते हैं ॥१॥
न आने में लगे देरी, खड़े जनु आ पहले से।

दुखी जन आर्त हो दिलसे, जबी प्रभु को बुलाते हैं ॥२॥
अनेकों दुख से बचने का, यतन नरनारि यह सिखलो।
न भूलो एक छन हरिपद, जची युक्ती सिखाते हैं ॥३॥
योगजपतप तीर्थब्रत, आदिकवृथा हैं हरिकी सेवाबिन।
छोड़ सब रात दिन माधव, रामगुन गान गाते हैं ॥

इतिश्री भा० भा० सरसकाव्यनिधौ अष्टम स्कंधे सप्दशोऽध्यायः

श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ अष्टम स्कंधे अष्टादशोऽध्यायः ॥

श्लो०—ततस्त्वष्टादशे भूत्वा, बामनः सत्कृतोऽखिलैः।
यज्ञ गतस्ततस्तेन सत्कृत्योक्तो बरान् वृणु ॥१॥

दो०—बामन ह्वै सतकार लहि, वलिमख पहुंचे जाय।
अट्ठारह में बलि कहैं, बर लीजै हरषाय ॥

छं शुक उ०—ब्रह्मा की स्तुति सुनिप्रभुजी, अदिती माता से प्रगट भये।
दृग कमल पीटपट धारी हरि, गद शंखचक्र कर कमल लिये ॥१॥
छबि श्याम क्रीट कुंडल धारे, मुखकमल द्युती अति प्यारी है।
मणिश्री हियमें कटि में किंकिण, भुज अंगद शोभा न्यारी है ॥२॥
गुंजरहिं भ्रमर बनमाल गले, कश्यप मुनि भवन प्रकाश करैं।
सब दिशि प्रसन्न जल आश्रय है, ऋतुगुण समान फल वृक्ष करैं।
महि अंतरिक्ष गौ द्विज अग्नी, हरि मुख तीनों ये हर्षित हैं ॥४॥
अभिजित भादौं द्वादशीश्रवण, प्रगटे सुर पुष्पहु बर्षत हैं ॥५॥

दो०—मध्य दिवस प्रगटे प्रभू, विजया अहै सुनाम ॥६॥
शंख दुंदुभी बजि रहे, पाये सुर विश्राम ॥७॥

छं०—गंधर्वगान अप्सरा नृत्य, सुरमुनिमनु पितर विनय करते ।८।
विद्याधर किन्नर यत्त नाग, चारण सुपर्ण हर्षहु भरते ॥६॥
गावैं नाचैं वहु सुमन वृष्टि, अदिती आश्रम पै बर्षि रहे ॥१०॥
प्रगटे लखि परम पुरुष अदिती, जयजय करि कश्यप हर्षि रहे ।११।
आयुध आभूषण धारे तनके, अब प्रभु जौन प्रकाश रहा ।
देखत ही झट भे बामन बटु, बावन अंगुल नट रूप महा ॥१२॥
मुनि हर्षित बामनरूप निरखि, सब प्रजापती लेकर्म करैं ॥१३॥
यज्ञोपवीत करि सावित्री, सविता ने दई तनतेज धरैं ।
सुर गुरू देहिं यज्ञोपवीत, मेखला मुनी कश्यप दीन्हा ॥१४॥

दो०—मृगछाला महि देत भै, दंड चन्द्रमा दीन ।
माता बांधि कुपीन कटि, द्यौः छत्रशिर कीन ॥१५॥

छं०—बिधि दीन कमंडल सप्त ऋषी, कुश सरस्वती दी शुभमाला ।
भित्ता का पात्र देंयत्तराज, जगदंब मातुदें भित्ता ला ॥१७॥
बटु श्रेष्ठि ब्रह्मऋषि सभामाहिं, वामनजी शोभा पाय रहे ॥१८॥
प्रज्वलित अग्नि पर दत्तिणकरि, पूजा औ हवन करि शोभलहे ।
बलि अश्वमेध करि बढ्यो सुनो, भृगु आदि यज्ञ करवाते हैं ।
पग पग में कंपाते पृथ्वी को, जगभार अंग से जाते हैं ॥२०॥
नर्मदा के उत्तर तीर यज्ञ, भृगु कच्छ स्थल जो कहलाये ।
भृगु मुनि द्विजवृन्द लिये करते, रबि उदयमनहु बामनआये ।२१।

छलसे विप्र बने वामनजी, किया जाय उद्धार ॥
दर्श हेत प्रभुके जग तरसै, ठाढ़े बलि के द्वार ।
माधवराम गाय गुन प्रभुके, भव से नैया पार ॥

इति श्री० भा० भा० सरसकाव्यनिधौ अष्टमस्कंधे अष्टादशोऽध्यायः



श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ अष्टम स्कंधे एकोनविंशोऽध्यायः ॥

श्लो०—ऊनविंशे तु हरिणा याचितेचपदत्रयें ।
प्रतिश्रुतेच बलिना जानन्भृगुरवारयत ॥

दो०—हरि मांगी महि तीन पद, बलि कीनो स्वीकार ।
उनइश में वरणन न करैं, भृगु भे रोकन हार ॥

छं० शुक उ०-सुनिधर्मयुक्त सचबलिकेबचन, खुशहो वामनजीकहते हैं ।
की बहुत बड़ाई प्रथम हरी, हो गया काम जो चहते हैं ॥१॥
भगवान-राजन कुलउचित धर्मयश कर हम बचन तुम्हारे गुनते हैं ।
भृगु मुनि द्विज वृन्द पितामह भी, हैं साक्षी कहना सुनते हैं ॥२॥
इस कुल में कृपिण निःसत्व नहीं, जो द्विजसे कहिकै नहिं देवै ॥३॥
नहिं युद्ध तीर्थ में विमुख करै, याचक हिं वीर सुख से सेवैं ।
यशसेनिर्मल कुल यह सोहै, प्रहलाद चंद जहँ द्योत रहे ॥४॥
जहँ हिरण्याक्ष दिगजयी बीर, संमुख न बीर कोउ होत रहे ॥५॥

दो०—महि लावैं में विष्णुहरि, दीनो ताहि पछार ।
जीति न मानै आपनी, बल सुधिकर हियहार ॥६॥

छं०—सुनिहिरएय कश्यप भाईबध, निज रिपुहरि के स्थान गये ।७।
मारन को आते देखि विष्णु, कालज्ञ हृदय से जान गये ।।८।।
मृत्यू सम जहँ जहँ हम तहँ ये, हिय में बैठ यह चित्त धरे ।।९।।
यह सोचि गुप्त हिय में बैठे, मिलिप्राण बायुसंग लखि न परे ।।१०।।
लखि शून्य लोकबहु जोर गर्जि, ढूढ़ें महिगगन सिंधु सबथल ।११।
सब जग ढूंढा नहिं पाये हरि, मिटि गया शत्रु गै सब हलचल ।।१२।।
तन धारी से जीवते बैर, अज्ञा न मान दे क्रोध ज़बर ।।१३।।
प्रहलाद पुत्र पितु तुम्हार नृप, यह नाम विरोचन दानी बर ।।

दो०—विप्र तप रूप धरि देवता, गे याचन तेहि पास ।
हां करिकै आयू दई, मानो हिये हुलास ।।१४।।

छं०—पूर्वज औरहु द्विजवृन्द किया, गृहधर्म सोइ तुमभी धारे ।१५।
तुमसे कुछ मांगें तीन पैर, पृथ्वी नापै पद से ह्मारे ।।१६।।
राजन् जगदीश्वर दानी हो, तुम से इतनाही चहते हैं ।
मतलब भर दान लिये भूपति, विद्वान दोष नहीं लहते हैं ।।१७।।
वलिरु उ०-हैबचन वृद्धसम विप्रपुत्र, निजस्वारथमें अज्ञानी से ।१८
मैं प्रसन्न तुम पर लोकनाथ, नहिं लिया दीप बरदानी से ।।१९।।
मुझसे याचना करी जिसमें, नहिं और ठौर मांगना भला ।
जीवका होय महिअधिक लेहु, पदतीनसे स्वार्थकौन निकला ।२०

भग० उ०-दो०—जहां लगे जगमें विषय, अजितेन्द्री नरकाहिं ।
तृप्ति नहीं करसकत हैं, नृपसोचहु हियमाहिं ।२१।

छं०—संतोष न तीन पैर से जब, सातहू द्वीप से पूर नहीं ।।२२।।
नृपवेन गयादिक द्वीपपती, तृष्णा से विकल मरि गये सही ।।२३।।

T

सुख है संतोष भाग पर रहि, हरि इच्छा से जो मिल जावै।
अजितात्मा त्रिलोकपति होवै, संतोष बिना नहिं सुख पावै ॥२४॥
धन काम भोग में असंतोष, नरको नरकहि पहुंचाता है।
हरि इच्छा लहि संतोष किये, जीवों को मुक्ती दाता है ॥२५॥
संतोषी द्विजका तेज बढ़ै, बिन इसके घटै जिमि जलसे अनल ।२६
तीन ही पैर लेंगे तुमसे, इसही से मिटैगी सब हलचल ॥२७॥

शुक उ०-दो०-यह सुनिकै बलि नृप कहैं, पैर तीनही लेहु।
करमें जल गडुआ लिया, हरि कहते हां देहु ।२८।

छं०-विष्णु वामनको महि देते, कह शुक्राचार्य वलिराजा से।
सारी करतब लख गये शुक्र, हियमें अपने अंदाजा से ॥२९॥
शुक्र उ०-हेबलि यहहैं भगवानविष्णु, बामनकश्यप अदितीमेंभये
देवों के कारज साधक हैं, मांगते दान महि युक्ति लये ॥३०॥
बिन समझे तुमने हां कर दी, दैत्यों को विपति बुलाई है ॥३१॥
श्री कीर्ति तेज स्थान हरैं, इन्द्रहिं देवै छलहाई है ॥३२॥
पग तीनमें नापै विश्वकाय, हरिको सबदै किमि गुज़र करै ॥३३॥
इक पगमें महि दूजे में गगन, पग तीसर पूरा नहीं परै ॥३४॥

दो०-दाता हां करि देय नहिं, तिसको नर्क निदान।
देकर पूरा होय नहिं, दशा आपनी जान ॥३५॥

छं०-नहिं दान बड़ाई लायक,वह, जिससे जीविका बिगड़ जावै।
तप यज्ञदान सब कर्म सधैं, जीविका में बाधा नहिं लावै ॥३६॥
यश धर्म अर्थ अरु काम स्वजन, धन पांचमें सचै सुख पावै ॥३७॥
कवि कहते हां करना सच है, नहिं करना झूठे में आवै ॥३८॥

आत्मा तरुके फलफूल सत्य, है झूठहि जड़ आत्मा की लखो ।३९।
तरु मूल बिना होता विनाश, बिन झूंठ आत्मा नाश सिखो ।४०।
हां करना आगे है अपूर्ण, कुछ हां कुछ ना से काम बनै ।
भिक्षुकको सब हां करके दुख, पावै विपत्ति फिर शीश धुनै ।४१।
नाहीं से आत्मा रक्षण हो, अध्यात्म बचन दिल से मानो ।
बिलकुल नाहीं करि झूंटकहै, जीते ही मरा उसको जानो ॥४२॥

दो०—नारी हास्य विवाह में, प्राण जीविका कोष ।
गौ ब्राह्मण हिंसा जहां, झूंठ कहे नहिं दोष ॥४३॥

भजन—बनावत सब विधि हरिजन काम,
शरणागत पालक सुखदायक, देत भक्त विश्राम ॥
मत्स्य कच्छ वाराह देह धरि, बामन बने ललाम ।
अंतर नीति सत्य पालक हरि, ऊपर हों बदनाम ॥
मांगत भीख खड़े वलिद्वारे, तीन पांव नहिं ग्राम ।
माधवराम श्याम गुन गावैं, पावैं नित आराम ॥

इति श्री० भा० भा० अष्टमस्कंधे एकोनविंशोऽध्यायः समाप्तः ।

श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ अष्टम स्कंधे विंशोऽध्यायः ॥

श्लो०—विंशेत्वनृतभीतोऽसौज्ञात्वाऽपिकपटंहरेः ।
ददावेवततो विष्णुः सहसाऽवर्धताद्भुतम् ॥

दो०—जानि विष्णु हैं कपट द्विज, झूठसे डरि बलिभूप।
विंशये महि दी हरि बढ़े, धरो विराट सरूप॥

छं० शुक उ०-कुल पूज्य गुरू शुक्राचारज, बलिको समझाया बचै विपत्ति
कुछ देर मौन रह विचार के, गुरुजी से उत्तर दे भूपति॥१॥
बलिरु उ०—सच कहा गृहस्थधर्मगुरुजी यशअर्थकाम जीविकानजाय।
प्रहलाद पौत्रहां देंगे कहि, लालचमें नाहिं करि जगत हंसाय।३।
नहिं अधर्म झूंठे से बढिकै, महि कहै सहौं सब झूठहि तजि॥४॥
दुख दरिद्र नर्कहु राज छुटै, नहिं डरौं यथा द्विज झूंठी भजि।५।
मरने पर धनादिक सबी छुटैं, छोड़ने में क्या पुनि विप्र प्रसन्न।
तजि प्राण सुजन उपकार करैं, शिवदधीचि जगमें हैं धनिधन्य॥

दो०—दिग् विजयी जे असुर भे, तिनको खाया काल।
लोक भोग दुहुं पता नहिं, केवल कीर्ति बहाल॥८॥

छं०—रणमें तनत्यागी बीरसुलभ, धनपात्रमें दानीनाहिं सुलभ।६।
याचकों को धन दे हो दुर्गति, दाया में दुःख सहना दुर्लभ।
तुम्हरे समवेद पात्र दुर्लभ, इससे वटुको मैं दूंगा दान॥१०॥
वेदांत यज्ञसे भजे जिन्हैं, हो और चहै द्विज या भगवान॥११॥
अपराध बिना बांधै हमको, रिपुविप्र समुझि नहिं मारूंगा॥१२॥
यश जाय न मारैं सब हर लें, हिय धरि हरि से नहिं हारूंगा।१३।
शु० उ०-श्रद्धासेहीन आज्ञापलटै, सच बीर बलहि गुरुशाप दिया।
मोहिंत्यागी पंडितमानि मूढ, हो लक्ष्मी नाश नहिं बार लिया।१५।

दो०—हटे नहिं बलि सत्य से, यदपि दिया गुरुशाप।
वामन को महि देनहित, पूजन कीनो आप॥१६॥

छं०—विंध्यावलि रानी मुक्तमालधारे जल कलश लिये आई ।१७।
पद पखारि जल शिर पर धारा, जगपावन बलि तजिदुचिताई ।१८।
सुरगण गंधर्व सिद्ध चारण, वर्षहि प्रसून वलि यश गावैं ॥१६॥
दुंदुभी बजैं हो नाच गान, रिपु समुझि दिया विस्मय लावैं ॥२०॥
हरि अनंत वामन लैके बढ़े, त्रिगुणात्मक तनत्रिलोक जो है।
महिअकाश दिशिदशसिंधु सरित, सुरनर मुनिकीट जगत सोहै।
हरिविभूतिमय तनमें गुरुबलि, जगत्रिगुण जीवमय देखि रहे ।२२।
पदमें पताल कटिमें पृथिवी, उरू में बायू गण हैं उमहे ॥२३॥

दो०—संध्या वस्त्रहु में वसी, जंघ प्रजापति लीन।
कोखि सिंधु नभनाभि में, नखतमाल उर कीन ॥२४॥

छं०—हियधर्म सत्य ऋत स्तन दोऊ, मनमें चन्द्रहु शोभा लीनी।
हियमें लक्ष्मी गल सामबेद, भुजमें सब सुरगन छबि दीनी ॥२५॥
कानों में दिशि शिर में अकाश, रोमों में मेघ विराजत हैं।
बायू नासामें नैन में रबि, मुखमें अग्नि द्युति भ्राजत हैं ॥२६॥
वाणी में बेद जिह्वा में वरुण, विधि निषेध भ्रू पलकें निशिदिन।
राजैं ललाट में क्रोध रुद्र, बसलोभ अधर जहं कल नहिं छिन ।२७।
स्पर्श काम जलही है वीर्य, रह पीठि अधर्म यज्ञ पदचाल।
छायामें मृत्यु माया है हास्य, तन रोमों में औषधी जाल ॥२८॥

दो०—नाड़ी में नदियां लसैं, नखमें शिला दिखात।
बुद्धिमें विधि सुरगनमुनी, प्राणों माहिं समात ॥२६॥

छं०—सब जीव चराचर लखि तनमें, यह लखि सब असुर कष्ट पाये।
हरि चक्र सुदर्शन शार्ङ्ग धनुष, धरिरूप अस्त्र सबही आये ।३०।

धुनिमेघ शङ्खसो पांच जन्य, कौमोदकि गदा बेग धरिकै।
शशिछटा युक्त विद्याधर असि, दो तरकस अक्षयशर भरिकै।३१।
पार्षद सुनंद सब लोकपाल, शिरकोट मुकट शोभा धारे।
श्रीवत्स मेखलावसन स्वच्छ, मकराकृत कुंडल अति प्यारे ।।३२।।
गुंजरहिं भृङ्ग बनमाल हिये, वामन भगवान के सोहि रही।
हाथों से दिशा आकाशनापि, पद एकमें नापी सकल मही ।।३३।।

दो०—द्वितीय पद में गगन सब, नाप्यो अदिति कुमार।
तिसरें को कुछ नहिं रहा, जनतप पद गयो पार ।।३४।।

भजन—हरि की लीला लखे न आव।
करौ और हो जाय और कुछ, सब बिधि करौ बनाव।
उलटो होय परिश्रम सबही दौड़ २ नित धाव।
यासों ईश सहारे रहिकै, हिय धरि ध्यान मनाव ।।
माधौराम सबै बनि जै हैं, प्रेम सहित गुन गाव।

इतिश्री भा० भा० सरसकाव्यनिधौ अष्टम स्कंधे विंशोऽध्यायः

श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ अष्टम स्कंधे एकविंशोऽध्यायः ॥

श्लो०—एकविंशेपदापूर्तिमिषेण बलि बंधनम्।
बिष्णुना कृतमुत्कर्षं तस्य ख्यापयितुं जने ॥

दो०—पद अपूर्ति के ब्याज से, वलिबांधा हरि आप।
इकइश में बर्णन करें, बलि उत्कर्ष प्रताप ॥

छं० शुकउ०-नखसेबेधितलखिसत्यलोक, बिधिसनकमरीचिनारदादिक
उपवेद वेद यम नियम तर्क, इतिहास पुराण शारदादिक ॥२॥
सब वंदन करते हरि को भजि, विधि धाम अकर्मक पाय गये।
वह उठा चरण धोया बिधि ने, जिस हरिसे बिधि उत्पन्न भये ॥३॥
जल रहा कमंडलमें बिधिके, हरिपद पखारि शुचिधार भई।
श्रीगंगा ह्वै सब लोक पाप हरती, महि कीरति छाय गई ॥४॥
ब्रह्मादिक लोकनाथ सब मिलि, लघुरूप भये प्रभु भेट धरैं।५।
जल पुष्प माल चंदन तुलसी, पूजनसुर बिबिधि प्रकार करैं ॥६॥

दो०-जय जय धुनि बिनती कहैं, महिमा करैं बखान।
शंखदुंदुभी बजि रही, हौंय नृत्य बहु गान ॥७॥

छं०-भेरीबजाय उतजाम्बवान, सबदिशामें बिजयसुनायदिया।८।
पद तीनहिंमें महिलोक हरे, सब कुपित असुर यह कथन लिया।९।
यह ब्रह्मबंधु मायावी हरि, द्विज रूप धारि सुर काज किया।१०।
बटु रूपसे मांगे तीन पैर, सब छीन लिया अति मलिन हिया।११।
सत्यव्रत दीक्षित दयावान, ब्रह्मराय झूंट नहिं बोलि सकै।
इससे इसको मारो सब मिलि, लै अस्त्र बामनहि घुर्चि तकै ॥१३॥
करि क्रोधमारिबे को दौड़े, शूलादि गहे पर बलि न चहैं ॥१४॥
आते लखि विष्णु पार्षद सब, असुरों से लड़ने को उमहैं ॥१५॥

दो०-नंद सुनंद बिजय जय, कुमुद प्रबल बरबीर।
विष्वकसेन गरुड़ सबै, कुमुदाक्षहु अतिधीर ॥१६॥

छं०-श्रुतदेव जयन्त पुष्पदंतहु, दशहजार गजबल असुरहनै।१७
रोवत पिटते लखि दैत्य बली, मत लड़ो गुरु का शाप गुनै ॥१८॥

हे राहु विप्रचित्ती नेमी, सुनि बचन लड़ो मत समय लखो ।१६।
सुख दुख कालहिसे सबको होंय, बलसे न हटै इसमें न झखो ॥२०॥
मम उदय सुरों के हारि हेत, पहले था सो हरि पलटि गया ॥२१॥
बलमित्र मंत्रमति ओषधिसब, कहिंकाल न इनसे बिजय भया ।२२।
हरि अनुचर तुमसे हारि चुके, अब जीति तुम्है गर्जन करते ॥२३॥
जब दैव प्रसन्न इन्है जीतैं, परखो सुकाल जहं सिधि भरते ॥२४॥

शुक उ०-दो०—स्वामी बलिकी बात सुनि, दानव दैत्य सुबीर।
विष्णु पार्षद मार सहि, गे पताल धरि धीर ॥२५॥

छं०—हरिइच्छा लखिबलिको बांधा, लैवरुण फास मखमाहिंगरुड़।
गतश्रीथिरमति वलिविमल सुयश, वामनसे बोलेबचनअरुण ।२७
भयो हाहाकार बलि बंधनलखि, प्रभुविष्णुखड़े आकर संमुख ।२८।
पद तीन दिये दो भये पूर, तीसरा पूर कर दो हो सुख ॥२६॥
जहँ लौं रबि चंद्र करैं प्रकाश, जल वर्षै तेरी रही मही ॥३०॥
पृथ्वी सब नपि गई एक पैर, दूसरे पैर में स्वर्ग सही ॥३१॥
कहिकर न दिया लो नर्कबास, तिस परभी गुरुकी संमपति है ।३२।
कहिकर न देयजो याचकको, नहिंस्वर्ग मिलै शिर आपति है ।३३।

दो०—धनमानी तूने हमैं, हां करि धोखा दीन।
कछुक काल भोगहु नर्क, पलटि दुःख फल लीन ।३४॥

भजन-गज़ल—लखो प्यारे सबी दिलसे, चरित वलिका सिखावै है।
करै बे कायदे जो धर्म, फलमें दुःख पावै है ॥ टे०
करै बलियज्ञ लूंगा स्वर्ग, मुनि द्विज संत मानै सब।
धर्मकरि हक़ ईश्वरी चहि दंडसे तन बंधावै है ॥१॥

इखत्तर चौयुगी पर्यंत पाया राज इन्द्रर में।
ज़बरदस्ती यज्ञ करके, वली उसको छुड़ावे है ॥२॥
मददगारों ने दुख पाया, यही हरदम समझ रक्खो।
बहाने हरि के पर धनले, न सपने सुक्ख आवै है ।३।
सचाई धर्म से खुश प्रभु, न कोरे यश दिखावे से।
कृष्ण गुण गाय माधवराम, हरि हियमें बसावै है।४।

इति श्री० भा० भा० अष्टम स्कंधे एकविंशोऽध्यायः



श्रीमद्भागवत भाषा सरस काव्यनिधौ अष्टम स्कंध द्वाविंशोऽध्यायः ॥

श्लो०—द्वाविंशेतुप्रसन्नःसन्प्रस्थाप्यसुतलंवलिम् ।
दत्वाबरान्हरिर्न्यूनंमत्वा तद्द्वारपोऽभवत् ॥

दो०—बाइस में हरि खुश भये, सुतलहि बलिहिं पठाय ।
बर दै लघु गुनि आपहू, भे दरवानी जाय ॥

छं० शु० उ०—बलिपाय निरादर बहुहरिसे, धरिधीर नहीं घबड़ाये हैं।
ह्वै सावधान धीरज़ी बचन, यों बामन प्रभुहिं सुनाये हैं ॥१॥
बलिरु-उ०-हे उत्तम यश सुर श्रेष्ठ हरी, जो मेरा कहना झूठ गुनो।
मैं करूं सत्य पद ममशिर धरि, तीसरलो नाप यह बचन सुनो ॥२॥
नहिं डरूं नर्क औ बंधन से, धननाश दुःख से नहिं तिल भर।

कह करके दिया नहिं ब्राह्मण को, इस दुर्यश से कंपता थर थर ॥३॥
पितु मातु भाइ गुरु सुहृद आदि, ये दंड देय अच्छाई है ॥४॥
तुम गुप्त गुरू दैत्यों के हो, मद हरि हिय दृष्टि खुलाई है ॥५॥

दो०—जिन प्रभु से बहु बैर करि, लड़ि मरि मुक्ती पाय ।
योगिन दुर्लभ गति लही, नहिं सधि सकै उपाय ॥६॥

छं०—प्रभु वरुण फांस से बंधा हूं मैं, नहिं डरता नहिं शरमाता हूं ।७
प्रहलाद पितामह जहं पहुंचे, अब उस दरजे में जाता हूं ।
लड़ि हिरण्य कश्यप प्रभु तुमसे, गति पाई जो योगी पावैं ॥८॥
इस तनधन कुल पर वारिनारि से क्या जहं आयु वृथा जावै ॥९॥
यह समझ पितामहजो मेरे, पद कमल शरणमें आय गये ।
हो असुर नाशकर यदपि आप, निर्भय पद मनमें भाय गये ॥१०॥
मद युक्त शत्रु मैं था प्रभु का, हठि करि मुझको अपनाय लिया ।
अज्ञानी चल जीवन न लखौं, हरि लक्ष्मी बंध छुड़ाय दिया ।११।

शुक उ०-दो०—यों भाषत प्रभु से बली, आय गये प्रहलाद ।
भक्तों में हैं चन्द्रमा, निरखि हरि हि आल्हाद ।२१।

छं०-दृगकमल लंबभुज श्यामछबी, प्रहलाद पितामह बलि निरखै ।
कीन्हा प्रणाम बंधन से बंधे, लज्जित हो आंसू भरि कै लखै ॥१४॥
प्रहलाद भक्त प्रभु पास गये, पार्षद सेवहिं शोभा भारी ।
भरि प्रेम अश्रुमहि प्रणाम करि, विनती करते भवभय हारी ।१५।
प्रहलाद उ०-आपहीदेतहैं सुरपतिपद, हरि लियाआपने भलाकिया
की दया आपने बालक पर, माया का बंध छुड़ाय दिया ॥१६॥
लक्ष्मी में पंडित मोहि जाय, इसमें फंसि किसने गति पाई ।

साक्षी जगदीश्वर नमो तुम्हैं, नारायण दाया मन लाई ॥१७॥
हमसे भी पौत्र बढ़ गया नाथ, हम पर प्रभु ने कर कमल धरा।
इसने शिर पर पद कमल लिया, सर्वस देकर नहिं नेक डरा॥

दो०—जिस पद की रज शिव चहैं, विधि सनकादि न पाव।
सो पद धार्यो बाल पर, राख्यो नाहिं दुराव॥

छं०—बन गया काम सब विधि इसका, बांधा तुमने भव बंध गया।
कुल पुत्र उजागर सब चहते, प्रभु दाया से तैसही भया॥१७॥
शु० उ०-प्रहलादविनयसुनि विधिकहते, बलिरानीतैसहिंबोली है।
पति बंधन लखि है भयसे बिकल, बातें जिसकी अनमोली हैं।१८॥
कर जोरि दंडवत करि प्रभु को, शिर नीचा कर कुल नारी है।
हैं बचन पंडितों से जयादा, जो कहती हिये बिचारी है॥१९॥
विंध्यावलिरु उ०-प्रभुक्रीडाहित त्रैलोकरचा, तहंकुबुद्धिमालिकबनैंसही
कहने भरके कर्ता निलज्ज, वहैं बोझ आपकी हानि नहीं॥२०॥

ब्रह्मो वाच दो०—जगमय देव देव हरि, जगभावन भूतेश।
लीन्हों सब छोड़ो इसे, योग न अस असुरेश।२१

छं०—सर्वसदै कर्मसेजो संचित, युधिबिकल नहीं तनभी दीना।२२
फलजन जततुलसी चरणअर्पि, गतिपावैं यह दुख कसलीना।२३
भग०उ०—हे ब्रह्मन् जिस पर दया करैं, हम उसका मद हर लेते हैं।
मदयुक्त पुरुष मुझको जगको, अपमान करैं दुख देते हैं॥२४॥
मरि जन्मि कभी यह जीवात्मा, भूमियोनि बहुत नर देह बनै।२५।
वय जन्मकर्म विद्या श्रीतन, मद होय नहीं मम दया गुनै॥२६॥
सब श्रेय हरैं जन्मादिक मद, मम भक्त न इसके वश आवै॥२७॥

बलिदैत्य अग्रणी कीर्ति विमल, माया जीती न मोह लावै ॥२८॥

दो०—तजैं जाति के बंधरिपु, छूट गयो धनधाम ॥२६॥
सही यातना बहुत बिधि, नहि सत त्याग ललाम ॥३०॥

छं०—सुर दुर्लभ पद इसने पाया, सावर्णि मनूमें सुरपति हो ॥३१॥
विशकर्मारचित सुतलमेंबस, नहिं आधिव्याधिदुखआपतिहो ।३२
बाधा न कोई मम इच्छा से, सुर चहैं तहां बलि करो बास ।३३।
सबको लै बाधहिं नहिं सुरपति, तव विमुख दैत्यकरैं चक्रनाश ।३४
सब भांति करौं रच्छा तुम्हारि, अनुचर धन लक्ष्मी रखवाला ।
तैयार द्वार पै मुझे लखो, मैं भक्त जनों का प्रतिपाला ॥३५॥

दो०—दानव दैत्य प्रसंग से, भया आसुरी भाव ।
मम दर्शन करि रहे नहिं, उपजै प्रेम प्रभाव ॥३६॥

भजन—जीव के हरि सांचें हितकारी,
अहंकार मद लोभकाम तन, लावैं विपदा भारी ।
जीवत चैन न देत पलहु भरि, अंत नर्क महं डारी ॥
हरि दयालु पहले हरि लेवैं, यद्यपि जीव दुखारी ।
सत संगति से मिलै ज्ञान जब, तब यह होय सुखारी ॥
वलिमद भरो स्वर्ग सुख चाहै, युद्ध औ यज्ञ प्रचारी ।
पौत्र देखि प्रहलाद भक्तको, अपनायो भयहारी ।
माधवराम श्याम गुण गावै, सब जग जाल बिसारी ॥

इति श्री० भा० भा० सरसकाव्यनिधौ अष्टमस्कंधे द्वाविंशोऽध्यायः

T

श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ अष्टम स्कंधे त्रयो विंशोऽध्यायः ॥

श्लो०—त्रयोविंशेबलौ याते, सुतलंसपितामहे ।
उपेन्द्रेण दिवंगत्वा, पूर्ववन्मोदते हरिः ॥

दो०—तेइश में प्रहलाद युत, बलि पठयो पाताल ।
सुखी स्वर्ग बसि इन्द्र भे, वामन सहित निहाल ॥

छं० शुक उ०-सुनिपुरुष पुरातनकीबातैं, जनसंमत मृद बोलैबानी ।
गद् गद् स्वर प्रेम अश्रु बहते, विह्वल बलिपरा भक्ति आनी ॥१॥
बलिरुउ०-शरणागतपालकपनप्रमाण,कहयुक्ती यहदिखलाया है।
नहिं पावैं लोकपाल जो पद, शिर धारि मुझे अपनाया है ॥
करते न कृपा प्रभु इस प्रकार, क्या छुट्टी कभी मैं पा सकता ।
लड़ने भिड़ने में उमर खोय, मायामें बंधि निशि दिन झखता ॥२॥
दर्शन तुम्हार तजि कुछ न चहौं, जो कहा सो प्रण पालन करना ।
उठि प्रात मिलैं दर्शन पहले, बिनती मेरी दिलमें धरना ॥

शुक उ० दो०-असकहि विधिहरि हरहिनमि, सुतलगये बलिराज ।
सबको लिये प्रसन्न चित्त, सिद्ध भये सब काज ॥

छं०—इस भांति इन्द्रको दै त्रिलोक, अदिती की कामनापूर करी ।
आवैं सुरपुर सुरपति संग में, सब जगत पालते बिष्णु हरी ॥४॥
छुट बंध लहे बरपौत्र बलिहिं, लखि हरिसे यह प्रहलाद कहैं ।
हैं भक्त भक्तिसे गद् गद् ह्वै, प्रभुदाया वर्णन कीन चहैं ॥५॥
प्रहलाद०-यह प्रसाद बिधिशिवश्री न लह्यो, नहीं और कोई सपने पावै ।

असुरों के भये प्रभु दुर्गपाल, जगवंदित जिनके पद गावैं ॥६॥
जिन चरणों की सेवा करिकै, ब्रह्मादि विभूती पाते हैं।
कैसे हम दैत्य मूढ योनी, प्रभु पदवी श्रेष्ट दिलाते हैं ॥७॥

दो०—करतब चित्र तुम्हारि है, जगधर लीलाधार।
कल्प वृत्त से बढि प्रभू, समान फल दातार ॥८॥

छं० भगवान उ०-प्रहलादवत्स मंगलहोवै, लैपौत्रजातिसुतलहिंजावो
लै गदा हाथ मैं दर्शन दूं, छुटिकर्म वंध सब सुख पावो ॥१०॥
शुका-उ०-प्रहलादप्रभूकोआज्ञालै, वलिसहितशीशधरिनमनकिया
पर दत्तिणकरि आनंदपाय, चलिसुतल माहिंनिजबास लिया।१२
हरि शुक्राचार्य से कहते हैं, ऋत्विजों सहित मुनि करो यही।१३।
इमयज्ञ छिद्र को पूर करो, द्विज दृष्ट कर्म हो पूर सही ॥१४॥
शुक्र उ०-किमिहोयकर्म न्यूनताप्रभू, जिसकर्मकेमालिकआपभये
यज्ञेश भक्त से महापुरुष, सब भाव से पूजे आप गये ॥१५॥

दो०—मंत्र तंत्र दिशिकाल से, जौन छिद्र है जाय।
नाम कीर्तन आपको, पूरण करै बनाय ॥१६॥

छं०—तिस पर भी आपकी आज्ञाल, करि हौं है आज्ञा पालन धर्म।
इसही में जीवका मंगल है, हरि भजै सदा साधै सतकर्म ॥१७॥
शुक उ०-हरि आज्ञालै ब्रह्मर्षिसहित, मुनियज्ञछिद्र पूरणकीने।१८
वलिनृप से भित्ता मांगि हरी, भाई इन्द्रहिं त्रिलोक दीने ॥१९॥
विधि प्रजापती सुरपितृमुनी, भृगु दत्तादिक शिवसनकसहित।२०
कश्यप अदिती के प्रीति हेतु, बामन त्रिलोकपति कीनो हित।२१
सुरबेद धर्मयश श्री मंगल, ब्रत स्वर्ग मुक्ति सब सुख दायक ॥२२॥

पदवी उपेन्द्रकी दी सबने, है प्रसन्न लखि पालक लायक ॥२३॥

दो०—लोक पाल युत इन्द्र तब, ब्रह्मा सहित सहाय।
विमान पर बामन लिये, स्वर्ग गये हरषाय ॥२४॥

छं०—हलचलगै लक्ष्मीलहि प्रसन्न, वामन सहायलैं पुरपालैं ।२५।
शिवब्रह्मा सनक मुनिपितृ सिद्ध, आदिक गुन गावैं श्रद्धालैं ।२६।
गुन गाय परम अद्भुत हरिको, सब निज २ धाम पधारे हैं ।२७।
राजन हम गाय कहा तुमसे, सुनिपाप बिनाशत सारे हैं ॥२८॥
नहिं पार मिलैं हरि यशका कहीं, चहै महिरजकन गिनती करले।
कोइ हुआ न है नहिं होय कभी, महिमा हरिकी पूरण धरले ।२९।

दो०—देव देव अद्भुत करम, सुनि चरित्र गतिपाव ॥३०॥
देव पितृ के कर्म में, पढ़े पूर्णता आव ॥३१॥

भजन—कही बामन प्रभु लीला गाय,
कर्मधर्म हैं सही जगत में, सब पर यह मत आय।
हरिकी शरण भजन हिरदे से कीने सब बनिजाय॥
बलिकी दशा देख लो प्यारे, चहै न होत दिखाय।
यासों सत्य धर्म व्रत पालो हरि की लेहु सहाय॥
माधवराम सबै बनि जैहै, हियपद धरु हरषाय।

इति श्री० भा० भा० अष्टमस्कंधे त्रियो विंशोऽध्यायः समाप्तः।



श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ अष्टम स्कंधे चतुर्विंशोऽध्यायः ॥

श्लो०—चतुर्विंशे प्रसंगेन मत्स्यरूपस्य शार्ङ्गिणः ।
लीलोच्यते यतः सत्यव्रतरक्षामहार्णवे ॥

दो०—चौविस में प्रभु मत्स्य हरि, लीला करत बखान ।
सत्यव्रत नृप सिंधुमहं, रक्षाकी भगवान ॥

छं० राजोवाच-मुनिबरसुननेकोइच्छाहै, जिससेहरिमत्स्यसरूपलिया
जगनिंदित मत्स्य सरूप, तमोमय कर्मग्रस्त ज्यों कर्म किया ॥२॥
हे भगवन् सब कहिये मुझसे, जैसा हो तैसा समझा कर ।
सब लोक सदा सुख पावै हैं, उत्तम श्लोक लीला गाकर ॥३॥
सूत उ०—इसभांति परीक्षित नृपपूंछै, मुनि मुखसे सुनना चहते हैं ।
लीला की मत्स्य सरूप धारि, शुकदेव ऋषीश्वर कहते हैं ॥४॥
शुक उ०—गौविप्र बेद सुरसाधु हेत, प्रभु धर्म हेत तन धरते हैं ॥५॥
ऊंचे नीचे सब जगह जाय, ज्यों पवन विशुद्ध बिचरते हैं ॥६॥

दो०—नैमित्तिक लय ब्राह्म जो, भयो जबहिं कल्पांत ।
बढ्यो सिंधुमहिं लोक सब, डूबे सबै दिगन्त ॥७॥

छं०—कुछ काल शयन करि ब्रह्मा जब, मुखसे सबबेद कढ़े बाहर ।
भया हयग्रीवदानवतेहि क्षण, लै गया भया नहिंकुछ जाहर ॥८॥
सुनि बिनय असुर करतब लखिहरि, रक्षाहित मत्स्य रूपधारा ॥९॥
सत्यव्रत तब राजर्षि रहे, हरिजन तपकर जल आधारा ॥१०॥
सोई इस कल्पमें श्राद्धदेव, मनु भये पुत्र रबि कीर्ति मई ॥११॥

कृतमाला नदी में तर्पण कर, अंजुली मत्स्य लघु आय गई ॥१२॥
जल सहित नदी जलमें छोड़ी, सत्य ब्रत द्रविण देश भूपति ॥१३॥
मछली कहती अति दीन बचन, खा जाय जाति के हरो विपति ।

दो०—दीन बछल नृप आय हैं, मैं डरती लघु जीव ।
जाति ज़ाति को खात हैं, यह भय मोहिं अतीव ॥१४॥

छं०—निज रच्छाहित तनुधरे हरी, नहिंसमझे नृप रच्छा ठानी ॥१५॥
सुनि दीन बचन झट हाथमें ले, धरि कलशे में आश्रम आनी ।१६।
निशिमें बढ़ि पात्र में ठौर न लहि, भूपति से मछली कहती है ।१७।
नहिं कलश में मैं रह सकती हूं, बड़ स्थल काया चहती है ॥१८॥
उससे निकाल बड़पात्र दिया, तहँ तीन हाथ बढ़ि गई तुरत ॥१९॥
नहिं गुज़र यहां दो और ठौर, तुम शरणपाल मैं शरणागत ॥२०॥
छुड़वाया सरोवर में नृप झट, बढ़ि महामीन कहते बानी ।२१।
नहिं यहां भी नृपहो मेरी गुज़र, कहिं सूख न जावै यह पानी ।२२।

दो०—सुनि विचित्र बानी नृपति, जलसे झट कढ़वाय ।
समुद्र में छोड़ी तुरत, रच्छा में चितलाय ॥२३॥

छं०—फेंकते नृपतिसे मीन कहैं, जलजीव खांय ह्यां मत छोड़ो ।२४।
मोहित नृप मीठी बाणी सुनि, कहते हैं आपको भ्रम तोड़ो ॥२५॥
ऐसा जलजीव न दीख सुना, दिन में सौ योजन रूप लिया ॥२६॥
क्या हरि नारायण दया धारि, कल्याण हेतु मम यत्न किया ॥२७॥
जग स्थिति पालन नाश करो, शरणागत जनकी आत्म गती ।२८
कल्याण हेत लीलावतार, नमो समझा दीजै जगत पती ॥२९॥
सबके प्रिय आत्मा मित्र हरी, तब चरण शरण नहिं बृथा जाय ।

हों शरण बृथा भिन्नात्मा की, यह अद्भुत रूप दियो दिखाय ॥३०॥
दो० शुक उ०-इमि सुनि बानी नृपति से, कहैं मत्स्य भगवान ।
बिहार जल में करैं की, इच्छा है बलवान ॥३१॥
छं० भगवानु०-नृपसुनों आजके सतवेंदिन, हो प्रलयसिंधु उमड़ै भारी
जलमें त्रिलोक जावैगा डूब, वड़िनाव आइ है भयहारी ॥३३॥
औषधी बीज लै छोट बड़े, सप्तर्षि जीव सब संग लेकर ॥३४॥
चढि नावमें विचरौ सिंधुमाहिं, घबड़ाना मत हम रच्छा कर ॥३५॥
वह प्रवलबायु जब हिलै नाव, मम शृङ्ग बांधना दुखहरि हों ॥३६॥
जलमें मुनि सहित भूप तुमको, विधि रात्रिलगै रच्छा करि हों ।३७
जो परब्रह्म महिमा मेरी, करि प्रश्न हमैं सब ज्ञान लहै ॥३८॥
नृपसों कहि अन्तरधान भये, करियुक्ति भूप सोइकाल चहै ।३९।
दो०-कुश बिछाय थिर पूर्व मुख, मत्स्यरूप कर ध्यान ॥४०॥
समय आय उमड़ो उदधि, बर्षि मेघ घमसान ॥४१॥
छं०-हरिआज्ञा परखे आईनाव, मुनिसहित औषधी नृपलेकर ।४२।
बैठे मुनि कहैं ध्याव नृप हरि, सब संकट हरि हैं सुख देकर ॥४३॥
नृपध्यान किया। प्रगटे जलमें, हरि मत्स्यरूपतन योजन लच्छ ।४४।
जस कहा प्रभू ने नावबांधि, बिनती ठानी लखिरूप प्रत्यच्छ ॥४५॥
राजोवाच-जोअहै अविद्याअनादिसे, छिपगया ज्ञान संसारभ्रमण।
अपनी इच्छासे मिलौ आप, गतिदायक गुरुहो रमा रमण ॥४६॥
अज्ञानी जनलहि कर्म वंध सुख, इच्छा से दुख पाते हैं।
प्रभु सेवा से बुधि शुद्ध होय, गुरु ग्रन्थि छुटै गुन गाते हैं ॥४७॥
दो०-स्वर्ण शुद्ध हो अग्नि तपि, धोये नहिं सत रूप ।
मलसे शुद्धि न होय तस, गुरु हरि सेइ अनूप ॥४८॥

छं०-प्रभुप्रसादका दशसहस भाग, सुर,गुरू स्वजन नहिंसाधिसकैं।
सबसे निराश ह्वै परमगुरू तब, शरण शरण हम दीन तकैं ॥४६॥
अंधे को ले चले नेत्र हीन, अज्ञानी गुरु दें सच्चा ज्ञान।
प्रभु साक्षी सबके सच्चे गुरु, जनके गति दायक वेद प्रमान ॥५०॥
संसारी गुरु दें लोक ज्ञान, जिससे भव नर्क विपत्ति भरैं।
सतगुरू ज्ञान उपदेशक तुम, गति पावैं जनभवसिंधु तरैं ॥५१॥
सबके प्रिय आत्मा सुहृत ईश, गुरुज्ञान सिद्धि मनकी दायक।
तबहूं जग अंध न भजै तुम्हैं, हिय में बैठे प्रभु जगनायक ॥५२॥

दो०—देव देव प्रभु ईश की, शरण ज्ञान के हेत।
वाणी से अज्ञान रबि, हरौ ग्रन्थि संकेत ॥५३॥

छं० शुक उ०-इसभांतिभूपजब विनयकरी, हरिमत्स्यरूप सबतत्वकहा
मुनिसहित भूप फिर विनयकरी, मुनिसांख्यसंहिता योगमहा।५५
नौका में चढ़े नृप आत्म तत्व, सत ब्रह्म सनातन हरि से सुना।५६
हनिहयग्रीव गयो प्रलयबीति, दियेबेद विधिहि सुखमहसगुना।५७
विज्ञान ज्ञान युत सत्य ब्रत, इस कल्पमें रबिसुत मनू भये ॥५८॥
सत्यब्रत मत्स्य चरित्र सुनै, आनन्द होय सब पाप गये ॥५६॥
यह चरित्र रोज जो कहैं सुनैं, संकल्प सिद्धि गति परम लहै ॥६०॥
विधि सोये प्रलय जल मध्य, बेद मुखसे निकरे कुछ खबर न है।

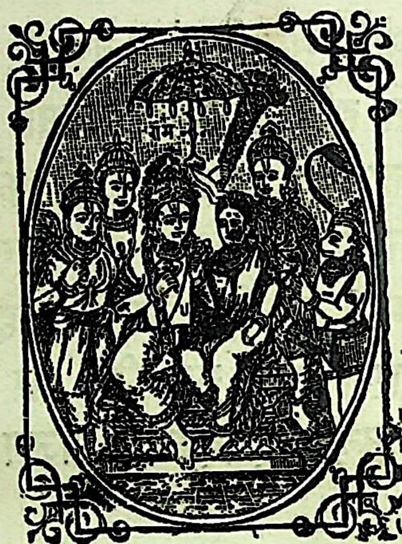
दो०—मत्स्यरूप अवतार लै, हयग्रीव को मारि।
ज्ञान सत्यब्रत नृपति दै, नमो है चरण मुरारि ॥६१॥

भजन—प्रेम से जे जन हरि गुन गावैं।
विपति दुःख संसार रोग बहु, सपने पास न आवैं॥

जो सिधिसाधि समाधि योग तप नर सपने नहिं पावै।
अनइच्छित हरि गुनगाये से बिना बोलाये आवैं॥
मूढ गुरू बहु पंथ प्रगट करि, सबको नित भटकावैं।
हरि गुनगान राह सीधी यह, मूरख नाहिं बतावैं॥
कढ़ै बारिमथि घृत बिन जलके, चाहै प्यास बुझावैं।
बिन प्रभुशरण भजन सत कीने, पार न कबहूं जावैं॥
माधवराम जची यह हिकमत, भजन करो समझावैं।

इति श्री० भा० भा० सरसकाव्यनिधौ अष्टमस्कंधे चतुर्विंशोऽध्यायः



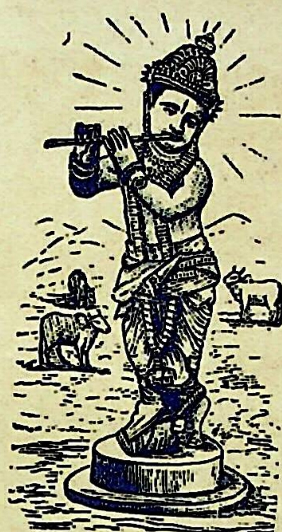


श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ नवम स्कंधे प्रथमोऽध्यायः ॥

श्लो०—गुणा यं गुणतावात्यै वृणते करुणानिधिम् ।
तमहंशरणं यामि परमानन्दमाधवम् ॥१॥
तत्रतु प्रथमेऽध्याये बैवस्वतसुतान्वये ।
सोमबंशप्रवेशोक्त्यै सुद्युम्नस्त्रीत्वमुच्यते ॥

दो०—सेवहिं गुण गुणतालहैं, जो करुणानिधिराम ।
माधव परमानन्द की माधवशरण ललाम ॥
नवम प्रथम अध्याय में, रबिको बंश प्रधान ।
चंद वंश तहं सो भयो, तिय सुद्युम्न वखान ॥

छं० राजोवाच-मुनिमन्वन्तर वर्णनकीने, हरिचरितबिचित्र सुनेगाये ।
सत्यवृत राजा द्रविडदेश, तपि हरि से ज्ञान विमल पाये ॥२॥
भये सूर्य पुत्र मनुसोई नृप, इच्वाकुआदि सुत हैं जिनके ॥३॥
मुनिकहो चरित सब वंशवर्णि, हम सुनै पवित्र सुयशतिनके ॥४॥



श्रीमान् लाला श्रीकृष्णजी माहेश्वरी (मालानी) के पुत्र

स्व० श्रीरामकृष्णजी, चि० श्री० रामगोपालजी

स्व० श्रीरामकृष्णजी के पुत्र

चिरंजीव

श्रीमान् लाला जयकृष्णजी माहेश्वरी (मालानी)

आप सकुटुम्ब ग्रन्थकर्ता के प्रेमी हैं।

नवमस्कंध की धर्मार्थ पुस्तकों में आपकी उत्तम सहायता है।

मरचेंट प्रेस,—कानपुर।

जे हुए होंयगे अब भी हैं, भूपाल पवित्र चरित कीने।
मुनि कहो पराक्रम भूपों के, श्रद्धा से सुनैं हम मनदीने ॥५॥
सूत उ०—इसभांति परीक्षित पूंछिरहे, दिलमें अपने श्रद्धा करके।
मुनि परम धर्म शुकदेव जानि, कहते नृपसे भक्ती धरके ॥६॥

शुक उ० दो०—मानव वंश सुनो नृपति, सूक्ष्महि देत सुनाय
वर्णन करि सौ वर्ष लौं, वृहत पार नहिं जाय।७।

छं०—पर अवर जीवको आत्मा प्रभु, है कल्पके पहले कुछ नाहीं।८।
नाभी से स्वर्णमय कमलभया, मुख चारि विधी भये जिहमाहीं।६।
मनसे मरीचि तिनके कश्यप, अदिती में सूर्य उत्पन्न भये ॥१०॥
संज्ञा रवि से मनु श्राद्धदेव श्रद्धा में दश सुत कहे गये ॥११॥
इच्वाकू नृग शर्याति दिष्ट, धृष्टहु करूष छठये कहिये।
नरिष्यंतपृषध्र नभग कवि ये, सब मिलिकै दशगिनती लहिये।१२।
पहले न पुत्र थे वशिष्ठ गुरु, मखमित्रावरुण सुत हेत करी ॥१३॥
रानी श्रद्धा ने होता से कन्या होवै, यह हठ पकरी ॥१४॥

दो०—होता अध्वर्यू सहित, उलटी करतब कीन।
कन्या होवै युक्ति सोइ, गुरु नहिं जानैं लीन ॥१५॥

छं०—होता की उलटी करतब से, है नाम इला कन्या प्रगटी।
सुनि राजा कहते वशिष्ठ सो, मनसे उदास किमि गति उलटी।१६।
भगवान ब्रह्म वादी हैं आप, अस उलटा करि बेंचना बेद।१७।
तप युक्त मंत्र विद पाप रहित, किमि उलटाफल मनमें है खेद।१८।
सुनि वशिष्ट मुनि जब करी जांच, रानी होता की भूल रही।१६।
संकल्प किया कन्या के हेत, पर निज बलसे करौं पुत्र सही ॥२०॥

गुरु आदि पुरुषकी विनय कीन, जिसमें कन्या सुत हो जावै ।२१।
हरि प्रसन्न बर दीना गुरु को, सुद्युम्न पुत्र तनसे पावै ॥२२॥

दो०—वह सुद्युम्न शिकार को, घोड़े पर असवार ।
मंत्रि फौज लै साथ में, पहुंचे बनहिं मंझार ॥२३॥

छं०—शर धनुषहाथ तन कवच धरे, उत्तर दिशिमें मृगसंग गये ।२४।
क्रमक्रम से मेरु निकट पहुंचे, शिव उमा सहित स्थिती लिये ॥२५॥
सुद्युम्न तहां व रि कै प्रवेश, तन नारि भयो घोड़ा घोड़ी ॥२६॥
सब सेवक नारि शरीर पाप, देखते परस्पर मुख मोड़ी ॥२७॥
रा० उ०-कैसेयहथल किसभांतिभया, किसने कीनाअसजालभरो ।
यह प्रश्न हमारा हे भगवन, समझाय सबी संदेह हरो ॥२८॥
शुक उ०-शिवदर्शनकेहितसनकादिक, जापहुंचेदिशिप्रकाशकरते
थी उमागोद में शिवजी के, कुछ अंग विबस्त्र निरख परते ।

दो०—लज्जित सों धारैं बसन, ऋषि लौटे ततकाल ॥३०॥
नर नारायण आश्रमहिं, गे सुमिरत नन्दलाल ॥३१॥

छं०-शिवआपठौर नहिं बैठनको, सुनिशिवप्यारी हित यत्नकिया ।
स्थान में आवै नर कोई, वह नारी हो यह बचन दिया ॥३२॥
नहिं जाय तहां कोइ पुरुष मात्र, सबको लै पहुंचे बिन जाने ॥३३॥
इससे नारी सब भये फिरैं, बाहर आये बुध यह ठाने ॥३४॥
भा प्रेम परस्पर व्याह भया, बुधसे पुरूवा पुत्र भया ।
भया सूर्यवंशसे चंद्र वंश, कीना परमेश्वर खेल नया ॥३५॥
सुद्युम्न नारि हो गुरु सुमिरै, मुनि वशिष्ठ को ऐसा सुनते ॥३६॥
इत पिता चरित्र गुरू समझे, विनवैं वह यत्न करो गुनते ॥३७॥

जा शिव मनाय शिव बर दीना, हो सत्य हमारी तब बानी ।३८।
इक मास नारि इक मास पुरुष, महिपालै सुनिये मुनि ज्ञानी ।३९।
नर ह्वै गुरु संग भवन आये, नर तिय हों प्रजा नहीं राजी ॥४०॥
गय उत्काल विमल तीन सुतभे, दक्षिण पूरब नृप अंदाज । ४१।

दो०–प्रतिष्ठान पुर में बसे, उचित राज नहिं पाय ।
राज पुरूव को दई, बन बसि मुक्ति बनाय ॥४२॥

भजन–प्रभू की माया लखो सुजान ।
जो मन में सपने नहिं आवै, नहिं दिलमाहि समान ॥
सो करतब कर्ता के बलसे, भावी अस बलवान ।
तियसे पुरुष पुरुषसे तियभे, यह अद्भुत गति जान ॥
किस छनमें क्या होय जगतमें, को करि सकै बखान ।
माधवराम श्याम हिरदे धरि, गावत हरिगुण गान ॥

इति श्री० भा० भा० नवम स्कंधे प्रथमोऽध्यायः समाप्तः ।

श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ नवम स्कंधे द्वितीयोऽध्यायः ॥

श्लो०–द्वितीये मनु पुत्राणां द्वावपुत्रौ विरागतः ।
करूषकादि पञ्चानां, बंशानाह लघुक्रमात् ॥१॥

दो०–द्वितीय में मनु पुत्रदश, दो विरागि सुत हीन ।
करूषादि सुत पांच का, बंश कछुक कहि दीन ॥

छं० शुक उ०-मनुसुत सुद्युम्न उचितनभये, सौवर्ष यमुनतटतपकीने।
सुतके निमित्त हरिपद पूजे, इक्ष्वाकु आदि दश सुत लीने ॥२॥
तिनमें पृषध्र गुरु गोपालै, निशिमें वीर व्रत दृढ धर कर ॥३॥
निशि में इक बार सिंह आया, भयसे गौ भागी इधर उधर ॥४॥
पकड़ा ज्यों एक को चिल्लाई, चिल्लाहट सुनि मारन डांटा ॥५॥
लै खर्ग हाथ में अँधियाला, गुनिसिंह शीश गौ शिर काटा ॥६॥
कट गया शेर का कान तुर्त, बहता है खून लै प्रान भगा ॥७॥
जाना पृषध्र ने शेर मरा, लखि प्रात मरी गौ दुःख लगा ॥८॥

दो०--शाप दिया मुनि गुरु ने, बिन जाने बध कीन।
क्षत्र बंधु नहिं होउ तुम, शूद्र कर्म से हीन ॥६॥०१

छं०-कर जोरि गुरूकाशाप लिया, मुनिप्रिय दृढ ब्रह्मचर्य धारा।
हरि वासुदेव में भक्ति साधि, सब जीव मित्र सबका प्यारा ॥११॥
तजि संग जीति इन्द्री प्रशांत, हरिइच्छा पर भोजनको धर ॥१२॥
करि ज्ञान आत्मामें आत्मा, जनु अंधबधिर सम मही बिचर ॥१३॥
बनकी दवांरि में भस्म देह, थे शांत ब्रह्मलहि मुक्त भये ॥१४॥
छोटे कविराज में चित्त न धर, भाई तज बनमें आप गये।

दो०--तरुण वयस हरि ध्यान करि, जगसे चित्त हटाय।
तृण सम बंधन देह तजि, परब्रह्म मिलि जाय ॥१५॥

छं०-मनुपुत्र करूषसे कारूषहु, क्षत्री उत्तर दिशिद्विज पालक।१६
भे धार्ष्ट धृष्टसे ब्रह्म मिले, बसु सुमति आदि नृगके बालक।१७
वसुके प्रतीक सुत ओघवान, कन्याहु ओघवति दर्शन पति।१८
नरिष्यंत के चित्र सेन दक्षहु, मीढ्वांश कूर्च इन्द्र सेनहु सुत ॥१६॥

भे इन्द्रसेन के वीति होत्र, तिनके नृप सत्यश्रवा जाये।
सुत उरुश्रवा हैं नृप तिनके, नृप देवदत्त तिन से आये ॥२०॥
तहं अग्निवेश्य अग्निहीपुत्र, यह जातु कर्ण ऋषि तपसे भये।२१।
इनका कुल ब्रह्म समान भया, अब दिष्ट वंश राजन सुनिये॥२२॥

दो०—दिष्ट पुत्र नाभाग यह, द्वितीय वैश्य समान।
पुत्र भलन्दन तासु सुत, वत्स प्रीति लो मान ॥२३॥

छं०—सुत वत्सप्रीति के प्रांशु तासु, सुत प्रमिति व्यासमुनि बतलाते।
तिनके खमित्र तिनके चाक्षुष, तिनके विविंशती सुत गाते ॥२४॥
सुत तासु रंभ खनि नेत्र तहां, भे करंधमहु सुपुत्र जिनके ॥२५॥
तहं पुत्र अवीक्षित तहं मरुत्त, संवर्त पुरोहित भे इनके ॥२६॥
जस मरुत को यज्ञ भई जगमें, नहिं किसी भूप ने कर डाली।
सवपात्र यज्ञमें सोने के, नितनव भोजन लोटा थाली ॥२७॥
हो गया अजीर्ण अग्नि सुर को, दक्षिणासे तृप्त भये द्विजबर॥
भइ पांच हजार बर्ष लौ मख, करवाई वंद अग्नी हठ कर।२८।

दो०—भये मरुत्त के पुत्रदम, राज्य वर्धनहु तासु।
सुधृत तासु नरतासु है, यह विधिवंश विकास ॥२९॥

छं०—तिनके केवल तहं बंधुमान, तहं वंधु तहां तृण बिंदु भये।३०।
भइ अलंबुषा रानी तिसकी, इडविडा सुता बहु पुत्र किये ॥३१॥
इडविडा बिश्रवाको व्याही, तिसमें कुबेरजी जन्म लिया ॥३२॥
सुत विशाल शून्य बंधु धूम्रहु, बीशीलविशाला पुरी किया ॥३३॥
तहं हेम चंद्र तहं धूम्राक्षहु, तिसके संयम सहदेव भूप ॥३४॥
तिनके कृशाश्व तहं सोमदत्त, मख करि गति पाई है अनूप।३५।

दो०–तहां सुमति तिनके तनय, जनमे जयहु प्रधान ।
तृणविंद्व के वंश में, ये सब भूप सुजान ॥३६॥

भजन–भये इस जगमें वहु भूपाल,
एक एक से प्रवल वीर रण, दानी रूप बिशाल ।
तेज प्रताप प्रचंड सूर्य जिमि, कोई अधिक सुचाल ॥१॥
छाई कीर्ति स्वर्ग लौं जिनकी, सुयश गयो पाताल ।
पता नहीं कहं गये अन्त में, खायो पलमें काल ॥२॥
यासों सुकृत कमावै जगमें, बनै नहीं बिकराल ।
दाया करै दीन जीवन पर, तिनका ह्वै प्रतिपाल ॥३॥
संग धर्म ही चलै जीव के, पड़ा रहै धनमाल ।
माधवराम भक्ति मुक्ती लै, मिलहु अन्त नन्दलाल ॥४॥

इतिश्री भा० भा० सरसकाव्यनिधौ नवमस्कंधे द्वितीयोऽध्यायः



श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ नवम स्कंध तृतीयोऽध्यायः ॥

श्लो०–तृतीये मनुपुत्रस्य शर्यातेः कीर्त्यतेऽन्वयः ।
यत्र सौकन्यमाख्यानं रैवतंचमहाद्भुतम् ॥१॥

दो०–तृतीय में मनुपुत्र हैं, नृप शर्याति चरित्र ।
चरित सुकन्या रैवत, वर्णन करैं बिचित्र ॥२॥

छं० शुक उ–शर्याति भूप हैं मनु के पुत्र, ब्रह्मिष्ठ भये अस गाये हैं।
अंगिरस ब्राह्मणों की मख में, दूसर दिन कर्म बताये हैं ॥१॥

है नाम सुकन्या सुताभूप, लै संग च्यवन मुनि बन में गये ॥२॥
ह्वां कन्या सखी संग घूमै, विमौर में चमक दो दृष्ट भये ॥३॥
भावीवश कांटा लै कन्या, छेदन कीना वहु रक्त बहा ॥४॥
मलमूत्र बंद भया चट सबका, हैं विकल भया आश्चर्य महा ॥५॥
पूंछै नृप क्या अपराध किया, किसने मुनिका आश्रम दूषण ।६।
कांटे से छेदा सुता कहै, विन जाने हे पितु नर भूषण ॥७॥

दो०—बाणी कन्या की सुनी, नृप अतिशय घबरान ।
वहुत विनय मुनिसे करी, भे प्रसन्न भगवान ॥८॥

छं०-मुनि कहैं हमैं यह सुता व्याहु, नृप संकट लखिदै घर आये ।९।
क्रोधी पतिपाय सुकन्या नित, सेवा करती मनचित लाये ॥१०॥
अश्विनि कुमार मुनि निकट गये, सुरवैद्य कहैं मुनियुवा करो ।११।
मख भाग दिलावैं तुमको हम, वयरूप मनोहर तनमें धरो ॥१२॥
अच्छा कहि औषधि कुंड रचा, मुनिसे कहते कीजै स्नान ॥१३॥
हां कहि मुनिवैद्य तिहूं न्हाये, दुर्बल मुनि तुरतै भे हैं ज्वान ॥१४॥
गलमाल वस्त्र कुंडल धारे, नारी प्रिय तीन पुरुष निकले ॥१५॥
लखि पति नहिं जानै पतिब्रता, ली सुरवैद्यों की शरण भले ॥१६॥

दो०—पतिव्रत से दोउ प्रसन्न ह्वै, मुनिपति दीन्ह लखाय ।
गये स्वर्ग को हर्षि हिय, मुनि की आज्ञा पाय ॥१७॥

छं०—शर्याति पुत्रहित यज्ञ करैं, मुनि लेने को आश्रम आये ।
आश्रममें कन्या निकट तरुण, नर मुनिही को नृप लख पाये ।१८।
लखि पितासुता करती प्रणाम, नृपउदास देहि न आशिर्वाद ।१९।
रे दुष्टे मुनि पति त्याग किया, लखि वृद्ध जारनर गहि दुर्वाद ।२०।

कुल कन्या है किमि मति पलटी, कुल दूषण तूपर पुरुष किया।
निर्लज्ज पिता औ पति कुलको, दोनों ही नर्क पहुंचाय दिया।२१।
पितु बाणीसुनि नमि मुसकाई, भृगु नन्दन मुनि यहहै कहती।२२
सबकथा कही सुनि प्रसन्न पितु, हैं योगसुता नृपबुधि चहती॥२३॥

दो०—नृप मुनि को ले गये गृह, सुत हित कीनी याग।
च्यवन अश्विनी पुत्र को, दियो सोम का भाग॥२४॥

छं०—रोकते इन्द्र मुनि हठ कीना, सुरपति ने बज्र उठाय लिया।
हुंकरि सबज्र मुनि बांधि हाथ, दिलवाय भाग तब ठीक किया॥
यह प्रताप था विप्रों का प्रथम, अब तो और ही कमाई है।
तप भजन भार में झोंक दिया, शौकों पर करी चढाई है॥२५॥
सुरवैद्य समझि नहिं देत भाग, मुनि दाया से सब ठौर मिला।
जाती का चक्कर सबी ठौर, हिलता नहिलाये जाति किला॥२६॥
सुत भूरिषेण उत्तान बर्हि, आनर्त के रेवत पुत्र भये॥२७॥
रेवत ने बसाई कुशस्थली, आनर्त देश सब राज लये॥२८॥

दो०—शत सुत ज्येष्ठ ककुद्मी, रेवत जिसका नाम।
निज कन्या वे रेवती, लै पहुंचे विधि धाम॥२९॥

छं०—बर पूंछनगे कन्या के हेत, तहं गान होय नृप मौन रहे।३०।
नृप पाय समय विधि से पूंछा, ब्रह्मा हंसि नृप से बैन कहे।३१।
जिनको सोचा नृप मरे सभी, नाती पोते कुल गोत्र नहीं॥३२॥
सत्ताइश चौयुग बीति गये, बल देवहि कन्या देहु सही॥३३॥
भूभार उतारै को आये, यह कन्या रत्न नर रत्न योग॥३४॥
निजअंश सहित प्रभु पूर्ण उतरि, नमिनृप आये कीना संयोग।३५

दो०—पुर तजि भाई भगि मरे, यक्ष बहुत भय कीन,
कन्या दै बलदेव को, बदरी बन थल लीन ॥३६॥

भजन—नारि को पतिव्रत धर्म प्रधान ॥ टे० ॥
तन मनसे पति सेवा कीजै, पति मानै भगवान ॥
जीवत नारि सबै सुख पावै, मुक्ति होय तजि प्रान ।
जो मतिमन्द नारि नहिं सोचैं, पर पुरुषहिमें ध्यान ॥
यहां अपयश दुख मिलै सबै बिधि, पैहैं नर्क निदान ।
माधवराम श्याम पद चित दै, पति सेवा गुनगान ॥

इति श्री० भा० भा० नवम स्कंधे तृतीयोऽध्यायः

श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ नवम स्कंधे चतुर्थोऽध्यायः

श्लो०—चतुर्थे मनुपुत्रस्य नभगस्य कथोच्यते ।
तत्सूनोश्चाम्बरीषस्य, कृत्या प्रतिहता यतः ॥१॥

दो०—चौथे में मनुसुत नभग, तिनकी कथा बखान ।
अंबरीष सुत जासु हैं, मुनि कृत्या हैरान ॥ ॥२॥

छं शुक उ०-सुत नभगहुके नाभाग अहैं, विद्वानब्रह्मचारी सतमन ।
पितुही विभागमें देहि भाय, जिनका सब बांटि लिया पितुधन ॥१॥
भाइयों से पूछा हमको क्या, देते हो बाप को ले जावो ।
श्रद्धा से ले आये पितु को, सेवा कीनी मति घबरावो ॥२॥

पितु सुतसे कहैं मुनि आंगिरसहु, छठवें दिन कर्म भूल जाते ॥३॥
दो ऋचा वैश्व देवी जा कहो, मख शेष देहिं धन तुम लाते ॥४॥
देंगे जावो तैसही किया, धन शेष दिया मुनि स्वर्ग गये ॥५॥
इक श्याम पुरुष आकर रोकै, मखशेष लेहिं हम तुमन लिये ॥६॥

दो०—दिया मुनी हम नृप कहैं, पूंछहु पितु से जाय ॥७॥
पूंछा पितु कहैं लेहिं शिव, भाग उन्हीं का आय ॥८॥

छं०-कहते हैं नभगनाभि आपलेहु, पितुकहा चमहुमेशअपराध।९
शिव कहैं दोउ ने सत्य कहा, दूं ज्ञान मंत्र इक तोहिं प्रसाद ।१०।
मख द्रव्य लेहु सब हम प्रसन्न, सत्य प्रिय शिव कहि गुप्त भये ।११।
कवि होय मंत्र विद प्रातकाल, सुमिरै प्रसंग यह चित्त दिये ॥१२॥
नाभाग पुत्र भे अम्बरीष, हरिभक्त बड़े हैं पुण्यवान ।
जिन्हे बह्मशाप भी नहीं लगा, रचा कीनी सुचक्र भगवान ।१३।
राजोवाच-राजर्षी बुद्धिमान राजा, इनका हम चरित सुना चहते।
जहं ब्रह्मदंड बेकार भया, क्या कारण जो मुनिवर कहते ॥१४॥

दो० शुक उ०—अम्बरीष हरि भक्त नृप, सात द्वीप लौं राज ।
लक्ष्मीविभव अतुल अहै, हरिहिय माहिंबिराज।१५

छं०-सबबिभव स्वप्न समनृप मानै, जिससे गतिनाश नर्कपावैं।१६
हरि हरिजन पदमें चित लगाय, सब बिभव तुच्छ मनमें लावैं।१७
कहते मनवो गुनै कृष्ण चरण, यश नाम कहै सो बाणी है।
हरि मंदिर सेवा करैं हाथ, सुन कथा कान तो प्राणी है ॥१८॥
करैं मुकुंद दर्शन तब हैं नैन, हरिजन परशैं तब साचें अंग।
हरि चढ़े पुष्प सूंघै तो नाक, जिह्वा प्रसाद ले सुधरै ढंग ॥१९॥

मन्दिर तीरथ जावैं तो पद, द्विज हरि गुरु नमै तो सांचा शिर।
भक्ती की चाह नहिं दुनियाकी, प्रभुजन प्रभुमिलैं आश फिर फिर।

दो०—सकल कर्महरि अर्पण, करि मालिक भगवान।
सर्वभाव से सेइहरि, महिपालैं धरि ध्यान ॥२१॥

मन्दिर रचना इनमे ही चली, जिसका कुछ हाल सुनाते हैं।
मूर्ती स्थापन मन्दिर रचि, सब सेवा आपहि लाते हैं॥
भक्ता इकराज सुता नृप से, हठ करि इसही से व्याह किया।
छिप कर मन्दिर की सेवा में, पार्षद मार्जन में भाग लिया॥
लखि कर भूपति कह चोरी भै, पूछे से हाल बताया है।
कीन्ही है जांच लघु रानी ने, हरि सेवा में मन लाया है॥
नृप कहैं न इसमें शामिल हो, रानी कहती मन्दिर कर दो।
भगवान पधारो मैं सेवौं, मांगू भिक्षा पति हर बर दो॥

दो०—किया तैसही आप नृप, हरि हित पीसै चून।
हरि पीछे हांकै हवा, लखि नृप सूखा खून ॥१२॥

छं०-नमि हांहां प्रभु यह क्या करते, प्रभु कहते तुम यह क्या करते।
देखो भक्ती अरु प्रेम दशा, जनहरि हरिजनका हित धरते॥
मत पीसो कहिहरि गुप्त भये, लघु रानी प्रेम दशा सुनिये।
सब सेवा निज प्रभु की साधै, पधराय रात में गुन गुनिये॥
गावै नाचै विह्वल होके, प्रेमाश्रु बहैं तन होश नहीं।
हरि प्रगट मूर्ति से भक्त सहित, हो बात चात वह गान सहीं॥
पहरेदारों ने आहट पा, राजा से खबर जनाई है।
अपराध क्षमा कीजै राजन, रानी लघु बलाय लाई है॥

दो०—जाकर छिपिराजा लखैं, प्रगट भक्त भगवान ।
कीन दंडवत जाय नृप, बिसरा देह अपान ॥२३॥

छं०—करि दिया पुजारी निज मंदिर, नृप रानी के मंदिर आवैं ।
लखि दशा सबै रानी विस्मित, इश कोना नृपको मन लावैं ॥
पूंछे से बताई युक्ति यही, मंदिर बनवाय सेइ दै चित ।
मंदिर रचवाय करैं सेवा, दर्शन हित राजा आवैं नित ॥
सब रानी कीना मंत्रि प्रजा, फिर देश देश में चाल चली ।
थी पहिले भी पर भूपति से, यह रीती ज़ोरदार निकली ॥
औरहू चरित्र विचित्र अहैं, सब नहीं कहे इतनी ही कहा ।
अब सुनो चरित्र भागवत में, मुनि व्यास लिखा है विशद महा ॥

दो०—अश्वमेध करि बिबिधिविधि, मुनिन दच्छिणा दीन ।
असित वशिष्ठ गौतमहु, सरस्वती तटकीन ॥२४॥

छं०-नृप मखसुरपतिमख मुनिसमभे, आश्चर्यदेखिनहिंपलक लगै ।
नहिं प्रजा स्वर्ग सुख का चाहैं, हरिगुण गावैं हिय प्रेम जगै ॥२४॥
सब होंय कामना पूर नित्य, कुछ बांकी नाहिं हरि हिये निरखि ।२५।
तपयुक्त भक्ति करि हरि पूजैं, सब संग तजैं जगमें दुखलखि ।२६।
गृहधन तियसुत कुटुम्ब हय गज, रथसेन आदि माया सारी ।
आभूषण आयुध सबही में, की असत बुद्धि भजि गिरधारी ।२७।
रच्छा के हित हरि चक्र दिया, शत्रुओं को अतिशय भयदाई ।
एकांत भाव से प्रसन्नहरि, सेवक की रच्छा मनलाई ॥२८॥

दो०—तुल्य शील रानी सहित, कृष्ण अराधन कीन ।
साल भरे की द्वादशी, ब्रत धारन नृप लीन ॥२५॥

T

छं०—कार्तिक के अंतमें इकादशी, व्रतधारि भूपतहं पूजहिं हरि।
दशमी में एक अहार एकादशि, निर्जल द्वादशि पारणाकर।३०।
करि महाभिषेक समग्री सब, चंदन वस्त्रादिक अर्पि दिये।३१।
प्रभु कृष्णमें अंतर भाव किया, पक्वानसे ब्राह्मण तृप्त किये।३२।
मढि चांदी से खुर स्वर्ण शृङ्ग, पय बछरा युत गौवों के दान।३३।
विप्रों को दै बहु दान दिया, भोजन कराय करिकै सन्मान ॥३४॥
सब पूर्ण काम आज्ञा लेके, नृप पारण कर मुनिवर आये ॥३५॥
दुर्वासा को नृप पूजि भले, भोजन करि ये कहि शिर नाये ॥३६॥

दो०—हां करि मुनि स्नान हित, गे यमुना के तीर।
कर्म अवश्यक में लगे, ध्यान धरैं मुनि धीर ॥२६॥

छं०—आधी मुहूर्त द्वादशी रही, नृप द्विजहिं पूंछते संकट परि।३८।
बिन विप्र जिमाये जीमें दोष, या द्वादशिमें पारण नहिं करि।
नहिं अधर्म पाप लगे मुझको, जो करिकै हित मम हो जावै।३६।
ब्राह्मण कहते जल पिवै भूप, ब्रत औ भोजन संज्ञा लावै ॥४०॥
जल आचमन कर ब्रत पूर्ण किया, परखे हैं मुनिको हरि ध्यावै।४१।
दुर्वासा यमुना तट से आय, आदर कर नृप कृति लख पावै।४२।
कोपित ह्वै कंप भौह टेढ़ी, भूखे मुनि राजा नमै कहै ॥४३॥
धनमत्त नीच नृप अधर्म करि, हरि में अभक्त अभिमान लहै।४४।

दो०—आय अतिथि न्यौता दियो, भोजन दियो न ताहि।
पहले नृप आहार कर, देखहु फल कस आहि ॥४५॥

छं०-असकहि करिकोप जटा उखारि, कालानलसमकृत्याकीनी।४६।
लै खड्ग भूप पर दौड़ी वह, महि कांपै नृपशांती लीनी ॥४७॥

रक्षा में चक्र सुदर्शन थे, आते लखि चट से भस्म किया ॥४८॥
ज्यों अग्नि सर्पको निर्फल लखि, श्रमभागे मुनिरक्षार्थ हिया ।४६।
दावाग्नितुल्यहरिचक्रझपटि, दशादिशिमुनि रक्षाहित भागे ।५०।
महिसिंधु अकाश गुफा लोकहु, पीछे है चक्र लखैं लागे ।५१
ढूंढ़ते शरण नहिं मिलै कहूं, विधि पास गये राखौ हमको ।
हो अमित तेज यह चक्र दहै, हम ब्राह्मण हैं बाजिब तुमको ॥५२॥

ब्रह्मोवाच दो०—लोक हमार जगत सहित, भ्रू विलास से नाश ।
द्वैपरार्ध क्रीडांत है, कालात्मा हरि आश ॥५३॥

छं०—हमरुद्र दक्षभृगु आदिक सब, आज्ञा जिस हरि की शिर धरते।
नहिं राखि सकैं सुनि भागे मुनि, पहुंचे शिव पै भयसे डरते ।५५।
रुद्र उ०—लखिशिव कहते हम समर्थ नहिं, जहं बहु ब्रह्मांड होय नाशैं॥
हम भ्रमते विधि नारदहु सनक, देवल आसुरि माया फासैं ॥५७॥
मुनिमरीचि आदिकलखि न सकैं, माया जिसकी कोइ नहिंजानैं।
विश्वेश्वर हरिका चक्र अहै, हरि ही पै जाव हम यह ठानैं ॥५६॥
सुनि दुर्वासा बैकुंठ गये, लक्ष्मी समेत जहं विष्णु रहैं ॥६०॥
जरते हैं चक्र से पद में पड़े, अपराधी राखहु बचन कहैं ॥६१॥

दो०—बिन जाने अपराध भा, लखा न भक्त तुम्हार ।
कीजै हरि उद्धार अब, नामहि लेत उबार ॥६२॥

छं० उ०—हमभक्त अधीनस्वतंत्र नहीं, भक्तहि हियमें भक्तहिजिय हैं।
नहिं चहौं भक्त बिन आत्मा को, लक्ष्मी नाहीं जसजन प्रिय हैं।६४।
तिय धन सुत प्राण त्यागि मुझको, चाहैं कैसे हम त्याग धरैं।६५।
समदर्शी मेरे में चित धरि, पतिको तिय तिमि मोहि बशमें करैं।६६

सालोक आदि चारों मुक्ती, ममसेवा बिन नहिं एक चहैं ॥६७॥
मम हृदय साधुहिय साधुके हम, वहहमैं हमहुं उनही को लहैं ।६८।
सुनलो उपाय यह करतब की, भक्तों से बैर करि पलटि दुखी ।६९।
तप विद्या द्विजका भला करैं, दुर्नीति न तिनसों होय सुखी ॥७०॥

दो०—अम्बरीष पंह जाहु द्विज, करहु क्षमा अपराध ।
शांति पाइ हौ शीघ्र ही, यह साधन लो साध ॥७१॥

भजन—भक्तजन हरि को प्राण पियारे,
अपने तनको तनक न मानै, लक्ष्मी रहत विसारे ।
विधि शिव लोकपाल सुर आदिक, हैं सबके रखवारे ।१।
भक्त टेर सुनतै रघुनन्दन, धावत पांव उधारे ।
गजको राखि ग्राहके फंदन, चक्रसे वक्र विदारे ॥२॥
सुनत टेर द्रौपदि की आरत, हरि पटपीत पसारे ।
सुनि प्रहलाद हांक हरि निकसे, दैत्य शरीर बिदारे ॥३॥
हरि राजत हैं भक्त हृदय में, हरि हिय भक्त पधारे ।
माधवराम असल गुनि हर को, पदके रहै सहारे ॥४॥

इति श्री० भा० भा० नवम स्कंधे चतुर्थोऽध्यायः



श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ नवम स्कंध पंचमोऽध्यायः

श्लो०—पंचमे बिष्णु चक्रं तु प्रसाद्य प्राण संकटात् ।
दुर्वासा रक्षितस्तेन तथा तद्वृत्तमीर्यते ॥१॥

दो०—पंचयें में हरि चक्र से, मुनि लहि संकट प्रान ।
नृप स्तुति करि राखही यह सब कथा बखान ॥

छं० शुक उ०-दुर्वासा हरिआज्ञा पाकर, अतिदुरित भूपके पास गये ।
पद परसे राजा लज्जित है, दुखलहि बिनती बहु करत भये ॥२॥
अम्बरीष उ०-तुमअग्निसूर्यशशिज्योतिरूप, जलमहिप्रकाशवायूमात्रा
है नमो चक्र प्रभु सहस धार, सब अस्त्र घाति हो द्विज त्राता ।४।
तुम यज्ञ धर्म सत्य स्वरूप, तुम लोकपाल सर्वात्म पुरुष ॥५॥
रक्षक सब धर्म सेतु के तुम, करते अधर्मिजन नाश हरष ।
त्रैलोक गोप्ता शुद्ध तेज, मनबेग कर्म अद्भुत है नमो ॥६॥
लै तेज महात्मा जन रक्षक, अत् असत् रूप मय हरत तमो ॥७॥

दो०—छोड़हि बिष्णु तुम्हें जबै, दैत्यन फौज मंझार ।
शिर पद अंग अनेक तहं, देत काटि महि डार ॥८॥

छं०—तुम जग रक्षा हित हरि से भये, ममबंशदेवद्विजदयाकरो ।
हम दान यज्ञ कुछ धर्म किया, हों इष्टदेव द्विज बचन धरो ।१०।
सब गुण आश्रय हरि हों प्रसन्न, हम पर कुछ दाया धारी हो ।
सबही प्रकार द्विज रक्षा हो, हम मांगे द्विज न दुखारी हो ॥११॥

शुक उ०-दो०—विनय करी नृप चक्रकी, द्विज रक्षा में लीन ।
राजाकी सुनि याचना, विप्रताप तजि दीन ॥१२॥

छं०—दुर्वासा चक्र ताप से छुटि, जब सावधानता पाये हैं।
करि बहुत प्रशंसा राजा की, आशिष दै बचन सुनाये हैं ॥१३॥
दुर्वासा उ०-अहोआजभक्त महिमादेखी, अपराधकियेकाभलाकरैं
दुष्कर दुस्त्यज क्या भक्तों को, त्रैलोक पती हरि हियमें धरैं ।१५।
यश नाम सुने जग हो पवित्र, हरि दासों को बांकी न रहा ।१६।
नृप दयावान तुम दया करी, अपराध भुला मम जीव चहा ।१७।
परखे द्विजको जी में न भूप, पदगहि प्रसन्नकरि जिमा दिया ।१८।
करिभोजन मुनी तृप्त हर्षित, कह जीमो नृप तब अन्न लिया ।१६।

दो०—दया करी हम प्रसन्न हैं, हरी भक्त नृप आप ।
दर्शन पर्शन बचन से, छुटै दुःख संताप ॥२०॥

छं०—सुर पुर में सुरनारी सबही, तब विमल कीर्ति नृप गावैंगी।
अति पवित्र पृथ्वी पर भी प्रजा, नित गाय २ फैलावैंगी ॥२१॥
छं० शुक व०—यशगायकूपके मुनिहर्षित, ह्वैविदाशीघ्रविधिलोकगये।
इक वर्ष बीत गया मुनि फिरते, तजि अन्न भूप जल पियत भये २३
छं०-मुनिको खवायअति शुद्धअन्न, खुशहो राजा भोजन कीना ।
ऋषि संकट छूटा भूप खुशी, पाया सर्वस जनु नृप लीना ॥२४॥
ऐसे अनेक है नृप में गुण, परमात्मा वासुदेव के जन।
सबकरि हरिही प्रसन्नकरते, विधि लोकहुनाश समझते मन ।२५।
दै राज्य पुत्र को धीर नृपति, लखि अंत समय बन गये भजन ।
मनलगाय आत्मा हरिमें भूप, तजिगुण प्रवाहगतिलीनसुमन २६

दो०—आख्यान अम्बरीष नृप, कीनो विमल बखान ।
पढ़ैं सुनैं नरनारि जे, होंय भक्त भगवान ॥२७॥

भजन–सदा जन रत्तक दीन दयाल ।
जब जब संकट पड़ै भक्त पर, हरी हौंय प्रतिपाल ॥
हरि रत्तक हैं जिनके हरदम, भख मारै जहँ काल ।
प्रभु के बल पर भक्त सदा रह, चलति न मायाचाल ॥
हरि दर्शन से भक्त मगन हैं, करिकै भजन निहाल ।
माधवराम श्याम हियमें धरि, छोड़ा जग जंजाल ॥

इति श्री० भा० भा० नवम स्कंधे पंचमोऽध्यायः समाप्तः ।



श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ नवम स्कंधे षष्टोऽध्यायः ॥

श्लो०–षष्टारम्भेऽम्बरीषस्य बंशमुक्त्वा ततः परम् ।
तत्र षष्टे शशादादिर्मान्धात्रन्तो निरूप्यते ॥१॥

दो०–अम्बरीष को बंश कहि, कुल इक्ष्वाकु बखान ।
छठवें में शश आदि नृप, मांधाता गुण गान ॥१॥

छं० शुक उ०-सुतअम्बरीषके भयेतीन, शंभूविरूप अरु केतुमान ।
पृषदश्व विरूपके तहं रथि तर, इनसे न भई है जब संतान ॥१॥
अङ्गिरा पुत्र पैदा कीने, निज तपबल से सुत तेज भये ॥२॥
आङ्गिरस गोत्री कह लाये, त्त्रीपन लै ब्राह्मण कुलये ॥३॥
छींकते मनू के इक्ष्वाकु पुत्र, पैदा भे सौ सुत है जिनमें ॥४॥
निमि दण्ड विकुक्षि पचीस पुत्र, आर्यावर्तहि नृप भे तिनमें ।५।
बांकी सब ठौर बिकुक्षि गये, पितु आज्ञा लै शुचि मांस लेन ।६।

हां करि बन जाय शिकार खेलि, भूखे खाया सुधि गई चैन ।७।

दो०--श्राद्ध हेत बांकी दिया, गुरु कीनी जब जांच ।
पढ़ा मन्त्र प्रोक्षण किया, जूंठा गुनि कहं सांच ॥

छं०-यह जूंठा श्राद्ध योग नहिं है, तब मांस श्राद्ध नृप वहु करते ।
कलियुग में शास्त्र निषेध करै, हबिही से तृप्ति पितर चहते ॥८॥
गुरु कहा पुत्रका कर्म अशुभ, निज देश से पुत्र निकाल दिया ।९।
इक्ष्वाकु राज से बिराग ले, योगी तन तजि पर धाम लिया ।१०।
पितु गये विकुक्षि भये राजा, भा नाम शशाद यज्ञ कीनी ॥११॥
पुनि नाम ककुत्स्थ पुरंजभये, सब कथा सुनो जसगति लीनी ।१२।
देवता दैत्य का भया युद्ध, हारे सुर राजा यहं आये ॥१३॥
मांगी सहाय नृप कहैं इन्द्र, बनि जाय बैल तो जप पाये ॥१४॥

दो०—इन्द्र बने बृष हरि कहा, धनु लै नृप असवार ।
नाम ककुत्स्थ भया तबै, युद्ध हेत तैयार ॥१५॥

छं०-हरि तेजसे तेज बढ़ा नृपका, जापच्छिम असुर नगर घेरा ।१६।
भा घोर युद्ध दैत्यन पछारि शीघ्रही दीन यमपुर डेरा ॥१७॥
बाणों की वारज्यों अग्निधार, रणछोड़ि कितनेही भागिचले ।१८
पुरधन श्री जयकरि इन्द्रहि दै, लै नाम पुरंजय सोह भले ॥१९॥
सुत भया अनेना तिसके पृथु, तहं विश्वरन्धि तहं चंद्र भये ।२०।
तिसके युवनाश्व शावस्त तहां, शाबस्ती पुरी रचि पुण्य नये ।
तिसके वृहदश्व भये सुत हैं, इनके कुबलाश्व धुंधुमारा ॥२१॥
इकइस हज़ार सुत जरे तहां, बचि गये तीन कुल निस्तारा ।२२।

T

दो०—धुंधुमार पदवी मिली, यदपि भये सुत नाश।
अप्सुर मुखाग्नि जरावती बिपति सहैं यश आश ॥२३॥

छं०-कपिलाश्व दृढाश्वऔ भद्राश्वहु सुतदृढाश्वके हर्यश्व भये।२४
तिसके निकुंभ तहं बर्हणास्व, तहं कृष्णाश्वसे न जितौ तहं ये।२५।
युवनाश्व तहां इनके सौ तिय, सुत हेत इन्द्रकी यज्ञ करी।२६।
निशिमें पुंसवन मंत्रजल नृप, उठिपान कियानहिं समुझिपरी २७
खाली लखि कलश बिप्र पूंछै, को पिया भूपकह हमने पिया।२८
राजाने पिया जल द्विज कहते, है दैवप्रबल नहिंचलत क्रिया।२६
होगा सुत नृपके गर्भ रहा, पुनि कोषि फारि बालक निकला।३०।
टोवै को इसको दूध प्यावे, कहि मांधाता करि इन्द्र भला ॥३१॥

दो०—दिई तर्जनी बालमुख, सुरप्रसाद पितु जीव।
तप करिकै युवनाश्व नृप, पाई मुक्ति अतीव ॥३२॥

छं०—त्रसद्दस्यु मांधाता है नाम, रावणादि दस्यू भय धरते ॥३३॥
मांधाता चक्रवर्ति राजा, सातहु दीपस्वराज करते ॥३४॥
की यज्ञ बहुत दक्षिणा दई, सब बेददेव मयमख अतिशय ॥३५॥
विधि मंत्रयज्ञ यजमान विप्र, जहं देशकाल धर्महु हरिमय ॥३६॥
जहं सूर्य उदय पुनि अस्त होय, नृप मांधातकी राज अहे।३७
रानी थी विंदुमती जिसमें, पुरुकुत्स पुत्र मुचुकुन्द लहैं।
सौ बहिन सौ भरी मुनि ब्याहीं, तीसर सुत अंबरीष जाये ॥३८॥
यमुना जलमें सौ भरी तपै, मछलीका बंश मुनिलखि पाये।३६।

दो०—मै इच्छा है ब्याह की, मांगी कन्या एक।
वरै स्वयंबर नृप कहैं, सो तुम लेहु न टेक ॥४०॥

छं०-मुनिसोचि बूढलखिको व्याहै, नृपिदशा देखि यों ज्वाब दिया।
सुरतिय मोहन निज रूपधरौं, क्या नृप कन्या मनमोह लिया।४२
धरि सुघर रूप रनिवास गये, सबही ने बरा हम हम करिकै ॥४३॥
तुम नहीं वरौं हम तुम नहिं हम, मम तुल्य अहै झगड़े लड़िकै।४४
नृपसब व्याही मुनिसब लाये, निजयोगसे महल समान किये।४५
गहना सुवस्त्र दासहु दासी, सुरपुर से बढि आनन्द दिये ॥४६॥
नृप चक्रवर्ति मुनि प्रभुना लखि, निज प्रभुताका गुमान मोड़ा।४७
यों करिगृहस्थ नहिं तृप्तिमिली, ज्योंअग्निजलैजस घृतछोड़ा ४८

दो०-भजन समय सोचहिं मुनी, भा तप सकल बिनाश।
मीन संग परिवार लखि, परी गरे गृह फास ॥४९॥

छं०-हा लखो हमारातप विनाश, करिमीनसंग तपछीन किया ५०
है मुमुक्षु गृही संग त्यागै, एकांत बसै सत संग लिया ॥५१॥
हम एक तपस्वी जल में तपैं, मछली लखि एक पचास भये।
इक इक में सौ सौ पांच सहम, नहिं अन्त मनोरथ नये नये ॥५२॥
बसि गृह बिराग लै यती तुल्य, बन गये रानियां संग चलीं।५३
तपिआत्म सोखि परमात्म मिले, योगी थे मुनिगतिपाई भली।५४

दो०-पति की आतम गति लखी, तियतनु तजि मिलि जांय।
अग्नि शांत में लपट ज्यों, हरि में गई समाय ॥५५॥

भजन-संग से वंधन मुक्ती होय।
साधु संग करि मुक्ति लेत सब, कहते शास्त्र टटोय ॥
करि कुसंग ले बंध नर्क दुख, लखो न सखत गोय।
लाल रंग से लाल होय जल, कार कारसे तोय ॥

T

फूल संग वायू सुगंध युत, मल संग दे बदबोय।
संग अनेक फांसते जगसे, तहां प्रबल तिय जोय॥
पर तिय यार महा दुखदाई, जश लोह सम टोय।
माधवराम श्याम गुन गावै, जानै एक न दोय॥

इतिश्री भा० भा० सरसकाव्यनिधौ नवमस्कंधे षष्ठोऽध्यायः

श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ नवम स्कंधे सप्तमोऽध्यायः॥

श्लो०—मान्धातुरन्वयः प्रोक्तः सप्तमे यत्र गीयते।
पुरुकुत्सस्य चाख्यानं हरिश्चंद्रस्य चोत्तमम्॥१॥

दो०—मांधाता को बंश कहि, पुरुकुत्सहु आख्यान।
सतयें में बर्णन करैं, हरिश्चन्द्र सत ज्ञान॥

छं० शुक उ०-माधांताके सुतअम्बरीष, तिसके सुतनृप हारीतभये।१
नर्मदा वहिन सर्पों की रही, पुरुकुत्स ब्याहि पाताल गये॥२॥
गंधर्वों को करि बिजय तहां, सर्पों से अभय बर लाये हैं॥३॥
पुरुकुत्स के त्रसद्दस्यु जानो, अनरण्य पुत्र तिन पाये हैं।
तिनके हर्यश्व अरुण तिनके, तिनके सुत भूप त्रिबंधन है॥४॥
सत्यव्रत तहां त्रिशंकु सोइ, गुरु शाप से चांडाल तन हैं॥५॥
तन सहित स्वर्ग गे दिखैं अबहुं, सुर नीचे डारैं गुरु साधा।
विपरीत चाल चलने से सुनों, होती हैं जगत में सौ बाधा॥

कोइ तन समेत नहिं गया स्वर्ग, यह देह सहित जाना चहते।
हठ करने पर गुरु वशिष्ठ से, हो चांडाल शापहु लहते॥

दो०—विश्वा मित्र मदद करी, निज तपसे पहुंचाव।
पहुंचे नहिं लटके रहे, ऊपर तरे न आव॥६॥

छं०—भे त्रिशंकु के सुत हरिश्चन्द्र, जो सत्य व्रत दृढ धारा है।
अजमाया विश्वामित्र ने वहु, नहिं किसौ भांति सत टारा है॥
नाटक लीला में दृश्य बहुत, जिनके दिखलाये जाते हैं।
इस हेतु यहां संक्षेपहि में, हम उनका चरित सुनाते हैं॥
सुरपुर में गुरु वशिष्ठ पहुंचे, सुरपति ने सत्य भूप पूंछा।
कहते वशिष्ठ हैं हरिश्चन्द्र, नहिं जगत रहै कबहुं छूंछा॥
विश्वामित्रहु पहुंचे ये सुना, कहं ये यजमान बड़ाई है।
हम नहीं देखते दुंनियां में, जो सत पर दृढता लाई है॥

दो०—हैं नाहीं बत बढ भया, दोऊ मुनि हठ कीन।
विश्वामित्र छिपाय कै, भूप परीक्षा लीन॥

छं०—माया सूकर रचि शिकार के, मिससे भूपति को बन लाये।
सूकर भग गया भूप भूले, झट पलटि बेषमुनि बर आये॥
कहि पर्व व्याह कन्या का कहै, नृपसे सब दान कराय दिया।
संहिता हेत पुनि विश्वामित्र, कुछ बहुत नगद धन दान लिया॥
प्रगटे संग आ सब राज लई, संहिता तगादा करते हैं।
दो भूपति या नाहीं कर दो, विन लिये न धीरज धरते हैं॥
पर हरिश्चन्द्र नृप सत धारी, नाहीं न करी यह यत्न किया।
काशी में जाय तिय सुत निज तन, क्रमसे सबहीं को बेंच दिया॥

नृप भरै डोंम घर पानी, आप, रानी दासी हैं पर घर में।
होता है सत्य में दुख पहले, नर नारि तजो मत हर बर में॥
सुत मरा जलाने को रानी, श्मशान में जब लाई है।
मांगते वस्त्र नहिं पास सूत, सुनके रानी घबड़ाई है॥

दो०—अंत मौत पर आ गई, प्रगटे श्री भगवान।
सत्य परीक्षा पास भे, दया करी जन जान॥

छं०—बालक जिवाय सब राज दिई, बरदान मुक्ति दै प्रभू गये।
सत्यब्रत पाला हरिश्चन्द्र, विश्वामित्रहु शरमात भये॥
इसके निमित्त गुरु बशिष्ठ ने, विश्वामित्रहिं दे दीना शाप।
आड़ी पक्षी हो उनको भी दीना मुनि बगला होवो आप॥
यजमान के पीछे यह गति भै, वहु वर्ष पक्षि हो लड़त रहे
ब्रह्मा ने आ उद्धार किया, तब अपना अपना रूप लहे॥७॥
जब हरिश्चन्द्र के पुत्र न था, हो पुत्र वरुण मानता करी॥८॥
जो सुत होगा बलि उसकी दे, करैं यज्ञ वरुणकी मनमें धरी॥९॥

दो०—रोहित सुत भे करो मख, वरुण प्रश्न जा कीन।
होय शुद्ध दश दिन गये, नृप यह उत्तर दीन॥१०॥

छं०-दश दिनभे करो कह दंतहोय, तबसुत पवित्रपशु होजावै ११
भे दंत कहे नृप फेर दाँत, जब निकलैं तब पूजा आवै॥१२॥
गिर गये दाँत फिर कहा करो, निकलैगे दाँत नृप प्रथम कहा।१३।
जब निकल दंत कर वरुण कहैं, धनुधारी हो तब होय चहा॥१४॥
इस भाँति पुत्र में मोह किये, नृप वरुणसे बात बनाते हैं॥१५॥
सुत रोहित ने जब यह समझा, समझाने से बन जाते हैं॥१६॥

आ वरुण नृपति रोगी कीना, बढ़ गया पेट नृप दुखी भये।
रोहित ने सुना आने को थे. सुरपति द्विज बनितेहि रोकि गये।१७।

दो०—महि बिचरन तीरथ करन, सुरपति ताहि सिखाय।
घर नहिं आवैं देत हैं, शिक्षा दै दै जाय ॥१८॥

छं०—दुसरे तिसरे चौंथे पंचवें, वृद्धहु द्विज होकर सिखलाये।१६।
६ वर्ष गये तब आये घर अजी गर्त से मध्यम सुत लाये ॥२०॥
शुनः शेफनाम तेहि पशु करिकै, नृप पुरुषमेध यज्ञहु कीना ॥२१॥
विश्वामित्रहि मखपूर कीन, सुत मरा न तन निरोग लीना ॥२२॥
अध्वर्यू विश्वामित्र जहाँ, जमदग्नी ब्रह्मा बशिष्ठ साम।
सुरपति प्रसन्न ह्वै रथ दीना, तन रोग रहित भा पूरन काम ॥२३॥
कहैं शुनः शेष का चरित फेर, विश्वामित्रहि के पुत्र भये ॥२४॥
विश्वामित्रहु तेहि ज्ञान दीन, जलवायु, शोधिमन बनहिं गये।२५।
महि जलमें जल अग्नी में लय, बायू में अग्नि सो अकाश में।
सो अहं में अहं महत में धरि, आत्मा धरि ब्रह्महि प्रकाश में ॥

दो०—तजि अज्ञान मोक्ष लै, भव बंधन छुटि जाँय।
रहित तर्कना ब्रह्मपद, जीव तौन पद पाय ॥

भजन—सत्य जग में जिन हिय में धार।
विना परिश्रम भव सागर से, हो जावै जन पार ॥
पंथ अनेकन बेष संतबहु, मज़हब अधिक अपार।
सत्य एक सबही को प्रिय है, इसमें नहिं तकरार ॥
यासों सबही को नित चहिये, तज दे झूठ विकार।
सत्य गहे निर्भय ह्वै जावै, गावैं बेद पुकार ॥

जो नर नारि सत्य हिय धारैं, ते हैं बड़े उदार।
माधोराम सत्य दृढ़ धारे, तजिकै झूंठ लवार॥

इति श्री० भा० भा० नवम स्कंधे सप्तमोऽध्यायः समाप्तः।

श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ नवम स्कंधे अष्टमोऽध्यायः॥

श्लो०—अष्टमे रोहितस्योक्तो वंशो यत्राभवन्नृपः।
सगरः कपिलाक्षेपान्निर्दग्धा यस्य सूनवः॥१॥

दो०—रोहित बंश बिवर्ण कर, सगर प्रताप प्रकाश।
अठये में मुनि कपिल से, साठि सहस सुत नाश॥

छं० शुक उ०-रोहितकेहरित तिसके हों चम्प,जो चम्पापुरीबसाई है।
चम्पा के पुत्र सुदेव तासु, है विजय कीर्ति बहुपाई है॥१॥
है तिसके भरुक वृक तासु, अहैं, तिसके बाहुक रिप से हरि हारे
भय खाय शत्रु से बनमें गये, संग रानी जस तस निस्तारे॥२॥
थे वृद्ध मरे जलती रानी, लखि गर्भवती किया और्व मना॥३
रक्षा हित सौतहु को रोका, लखि गर्भवती किया डाह धना।
दे दिया जहर भोजन के संग, मुनि रक्षा की सुत नहीं मरा॥
गर जहर को कहते जहर महित, सुत जन्मा सगरहि नाम परा।४
पालन रक्षा शिक्षा मुनि की, सुत चक्रवर्ति पितु राज लिया।
जिसके सुत खोदि किया सागर, शक यवन कुबेष बनाय दिया।५

दो०—सब पीड़ित भे सगर से, और्व से विनती कीन।
छोड़ि दियें गुरु बचन से, कुरूपता करि दीन॥

छं०-कोइ शिर मूंडे कोई दाढी धर, कोइ खुले बाल वाले हैं यवन।६।
कोइ वहिरवस्त्र कोइ अंतरकरि, सबको भगायमख किये हवन।७।
हरि हित मुनि और्व करावें मख, सुरपति ने घोड़ा चोर लिया॥८॥
सुमती रानी में सगर पुत्र, घोड़ा ढूंढैं महि खनन किया॥६॥
खनिसिंधु कपिलमुनि पहंपहुंचे, लखिअश्व कहैं यह ध्यानी चोर।
मारो मारो लै अस्त्र हाथ, साठिहु हजार चिल्लावैं जोर॥११॥
अपराध महात्मा का करते, मुनि खुले नैन सब भसम भये॥१२॥
मुनि जारा कहना उचित नहीं, उनहीं के पाप उन्हें खाय गये।

दो०—सत्व रूप हरि कपिल मुनि, तहां न तम का भास।
मुनि अपमान पाप बड़, मरे करो विश्वास॥१३॥

छं०—जिन सांख्य योग तरने को कहा, हैं नाव मुमुक्षु भवतरते।
आत्मज्ञानी परमात्म मयी, किमि ईश्वर कोप हिये करते॥१४॥
केशिनी के सुत असमंजस है, तिसके सुत अंशुमान आये॥१५॥
अचरज दिखलाया असमंजस, थे पूर्व जन्म योगी पाये॥१६॥
नृप पुत्र भये सब याद इमे, सुत प्रजा के लै सरजू बोरै॥१७॥
चाहै पितु देहिं निकारि, निकारैं नृप तब सब बालक छोरै॥१८॥
सब बालक दे बन गये पुत्र, बालक लखि पुरबासी सोचैं।
अचरज मानैं राजाहै बिकल, किमि आये सबगुनि दुख मोचैं।१९।
तब अंशुमान गये अश्व खोज, चाचाओं की जा भस्मलखी।२०।
लखिमुनि प्रणाम करि स्तुतिकी, ईश्वर औतारहु कपिलऋषी।२१।

अंशुमान उ० दो०-कुजन लखैं नहिं पर पुरुष, समाधि युक्ती कीन।
किमि देखैं जगमें फंसे, तनमन अधिक मलीन ॥

छं०—जे गुणाभिमानी तन धारी, तुममें सब गुन या तमहिं लखैं।
माया से मोहित चित बाहर, प्रकाश लखि तुम्हैं न देखि झखैं।२३।
दृढ़ ज्ञान नाश माया प्रभुकी, सनकादि ध्यावहम किमि जानै।२४
गुण कर्म नामसे रहित शांत, उपदेश हेत तब तन मानै ॥२५॥
तुम्हरी माया से रचित लोक, गृह तनधन सुत मानै हैं सांच।
कामहू क्रोध लोभहू मोह, में फँसे विकल सहते भव आंच ॥२६॥
सब जीवों की आत्मा हे प्रभु, कामना पूर्ण मम चित्त रहा।
तव दर्शन से दृढ मोह फांस, छूटी माया आनन्द महा ॥२७॥

दो० शुक उ०-विनती सुनि मुनि कपिलहरि, तापर भये दयाल।
अंशुमान से कहत हैं, कीना ताहि निहाल ॥२८॥

छं० भगवानु उ०-तुम्हरे बाबाका यज्ञपशू, बचायह घोड़ाले जावो।
यह चाचा सब जलिखाख भये, चाहैं गंगाजल तुम लावो ॥२६॥
दंडौत प्रदच्छिण मुनि बर को, करि बिनय बहुत घोड़ा लाये।
बाबाको दिया भइ यज्ञ पूर्ण, सब हाल कहा जिस विधि पाये।३०।

दो०—अंशमान को राज दै, तजि बंधन बे चाह।
और्व मुनी की सीख से, गति ली सत उत्साह ॥३१॥

भजन—कठिन है जगमें माया जाल,
जमै वीज अंकुर निकसै पुनि, होय पात बहु डाल।
फूलै फलै झरै फिरि जामैं, नाशै कर लो ख्याल ॥१॥

T

ऐसे गर्भ आय तहं बाढै, जन्म लेय हो बाल।
ज्वान व्याह बालक उपजावै, बाढै जग जंजाल ॥२॥
सोचत फिकिर करत वृद्धापन, भोगि परै मुख काल।
ऐसे जन्म अनेकन बीते, कोटि कल्प-बिकराल ॥३॥
पायो नरतन मुक्ति लेन को, तजत नहीं ढंग चाल।
माधवराम सबै बनि जै है, शरण गहौ नंदलाल ॥४॥

इति श्री० भा० भा० नवम स्कंधे अष्टमोऽध्यायः



श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ नवम स्कंधे नवमोऽध्यायः

श्लो०—नवमेंऽशुमतो बंशः खट्वाङ्गावधिवर्ण्यते।
गङ्गां भूतलमानिन्ये यस्य पौत्रोभगीरथः ॥१॥

दो०—अंशुमान के वंश कह, नृप खट्वाङ्ग बखान।
गंगा लाये भगीरथ, पौत्र तासु नृप जान ॥

छं० शुक उ०—गंगा लाने को अंशुमान, बहुकाल गया अति तप कीना।
नहिं गंगा आईं आखिर में, नृप भये मृत्यु के आधीना ॥१॥
तिनके सुत दिलीप तप ठाना, नहिं लाये गंगा देह तजें।
तज राज भगीरथ तिनके सुत, गंगा के हेत तप जोर सजें ॥२॥
तप कठिन देखि गंगा प्रगटी, बर मांगो सुनि नृप हाल कहा ।३।

महि फोरि पताल चली जाऊ, को साधै नृप मम बेग महा ॥४॥
दूसरी बात नहिं जाऊं मैं, नरनारि पाप मुझ में धोवैं।
मैं अपने पाप कहां डालूं, इस हेतु विचारौं क्या होवै ॥५॥

दो० भगीरथ उ०—साधू सन्यासी मुनी, जग पवित्र करतार।
मज्जनकरि तब पाप हरि, हियहरि बसैं उदार।६।

छं०—धारैंगे वेग तब महादेव, पट में तंतू सम जग आत्मा ॥७॥
असकहि शिवजी का तप ठाना, झट प्रसन्न भेशिव परमात्मा ।८।
स्तुति करि गंगा धारो कहा, हरिपद पवित्र जल शिवधारा ॥९॥
नृप चले भगीरथ आगे ह्वै, जहं पितृ भस्म हो निस्तारा ॥१०॥
रथ वायु बेगेन पीछे गंगा, करि देश शुद्ध नृपसुत हैं जरे ॥११॥
द्विज द्रोही जल स्पर्श करते, तन भस्महिं से गे स्वर्ग तरे ॥१२॥
तन भस्महि से नृप सुत तरिगे, फिर क्या जो श्रद्धा से सेवैं।१३।
अचरज श्री गंगा में यह नहिं, प्रभु पद जल है मुक्ती देवैं ॥१४॥

दो०—निर्मल मुनि मन धारि जहं, कठिन त्रिगुण जग त्याग।
पावैं हरि मय होय झट, हैं उनके बड़ भाग ॥१५॥

श्लो०-गङ्गे तव जलधारा यैंनासेवि, सन पश्यतियमंकारागारं देवि
इन्द्रं गाङ्गं त्यजतामिहाङ्गं न पुनर्भवाङ्गं यदि बाऽपि चाङ्गम्।
पाणौ रथांगं शयने भुजंगं याने बिहंगं चरणौ च गाङ्गम् ॥२॥
छं०—गङ्गे तव धारा जो सेवैं, यम कारागार नहीं देखैं।
मज्जन स्पर्श दरश करिके, हों मुक्त न भव बंधन लेखैं॥
गंगा तट जो जन देह तजैं, हो मुक्त न तन फिर पाते हैं।
यदि होवै तन तो बिष्णु होय, निज पीठ पै गरुड़ चढ़ाते हैं॥

कर धरैं चक्र ले शयन शेष, पद से पुनि गंग बहाते हैं।
यह कहने का मतलब यह है, हरि में मिलि हरि हो जाते हैं॥
गंगा कहलाई भागीरथी, नृप कीर्ति जगत में छाई है।
तरते हैं हजारों पापी जन, अस करि दुहुं लोक बड़ाई है॥
सुत भये भगीरथ के श्रुत हैं, तहं नाभ सिंधु दीपहुं इनके।
तिनके अयुतायुत नाम पुत्र, ऋतुपर्ण नलसखा हैं जिनके॥१६॥

दो०—सीखी विद्या अश्व की, नल राजा से आप।
पासा की विद्या दई, नलके गे संताप॥१७॥

छं०—तिनके सुदास मदयंती पति, कल्माष चरण मित्रहु सहभे।
लहि शाप बषिशठसे सुत न भये, राच्छस तन पाया बन महंगे।१८।
राजोबाच-किस कारणसे गुरुशाप भया, सौदास भूपथे विमलमती
सुनने की इच्छा कहिये मुनि, जो गुप्त न हो क्यों ली विपती।१९।
शुक उ०—सौ दास खेलने शिकार गे, तहं एक राच्छस को मारा।
छोटा भाई उसका उसने, यह बदला लेना चित धारा॥२०॥
बन गया रसोई दार वही, गुरु हेत रसोई करी सबी।
मानुष का मांस रांधा तिसमें, जानै न भूप गुरु कोई अभी।२१।

दो०—खान समय शोधन किया, समझ गये नर मांस।
होउ राच्छस खाहु नर, शाप लह्यो सौ दास॥२२॥

छं०-राच्छस भयो अंतर ध्यान, भूप घबराये गुरुने तुर्त लखा॥२३॥
किया बारा बर्ष नृप भी गुस्सा, गुरु शाप देन को मनमें झखा॥
रानी मदयंती ने रोंका, महि बिकल होय पद में डारा।
कल्माष पाद हो गया नाम, महि जीवमयी लखि निस्तारा।२४।

राक्षस भे भूप सपेद पैर, ब्राह्मण नारी युत बनमें बस ॥२५॥
भूखे हनि ब्राह्मण खान लगे, नारी बिनवै है भूप सुयश ॥२६॥
इक्ष्वाकु वंशि नहिं राक्षस हो, सुत मेरे नहिं मत पति मारो ।२७।
नर तन सब देत कामना है, द्विज मारे स्वार्थ नाश धारो ।२८।

दो०—यह ब्राह्मण विद्वान है, तप गुण शील निधान ।
वेद पाठि ईश्वर भजै, यामें बस भगवान ॥२६॥

छं०-यह ब्रह्मऋषी तुम राजऋषी, पितुबिप्र पुत्रनृप बध न उचित।
निष्पाप वेद पाठी गौ सम, इसका बध नृप नहिं धारौ चित ।३१।
मारते इसे तो खालो मुझे, पति के बिन मुर्दा जियौं न छन ।३२।
करती बिनती रोती अनाथ, वश शाप भूप हनि खाया पन ।३३।
ऋतु दान देत पति को मारा, द्विज नारी नृप को शाप दिया ।३४।
इस दशा में मेरा पति खाया, करो गर्भ धान चट मृत्यु लिया ।३५।
दे नृपहिं शापपति हड्डी लै, अग्नी जराय चट भई सती ॥३६॥
यह पतिव्रता तिय धरै रीति, पति के पीछे न सहै विपती ॥३६॥

दो०—बारह वर्ष गये जबहिं, शुद्ध भये तब भूप ।
मिल रानी तब रोकती, गुनि द्विज शाप अनूप ॥

छं०-स्त्री सुख तबसे भूप तजा, गुरु कृपा कीन तिय गर्भ धरा ।३८।
गये सात वर्ष नहिं पैदा हो, पत्थर मारा सुत भूमि गिरा ॥३६॥
है पत्थर अश्मक यही नाम, अश्मकसे मूलक नारि कवच ।४०।
तिसकेसुत दशरथ तहं इडविड, तहं विश्वस हो खट्वांगहु रच ।४१
खट्वांग सुरों की सहायकी, छन आयु जानहरि मन धारा ॥४२॥
द्विज कुलसे प्रियनहिं प्राण पुत्र, श्रीराज्य मही तन औ दारा ।४३।

नहिं किया अघर्म लड़कपनमें, हरिबिन न और कुछ नृप कहते ।४४
देवों ने दिया बरदान मुझे, हरि दर्शन बिन कुछ नहिं चहते ॥४५॥

दो०—भूले हैं सब देवता, हरि हिय में नहिं जान ।
प्रिय तन से हरि मिलन हो, तब हो ठीक ठिकान ॥४६॥

छं०—जगकी रचना सब माया से, गंधर्व नगर सम पहिंचानौ ।
माया के भीतर ईश्वर है, मिलता है भाव से चित आनौ ।४७।
तिसही की शरण हौं हरिमिति से, तजि जगत सबी माया अज्ञान ।
हरिभाव से दिलमें प्रभु देखौं, दाया की मुझे मिलो भगवान ।४८।

दो०—ब्रह्म सूक्ष्म नहिं शून्य जो, शून्यहि तुल्य लखाय ।
बासुदेव विनवैं सुजन, हरि हिरदे बस आय ॥४९॥

भजन—जगत मेहरि सुमिरन है सार,
धन सुत राज बृथा लक्ष्मी है, झूंठा कुल परिवार ।
धुआं धौर हर महल अटारी, नकली जगत पसार ॥
नर तन पाय अमोल रतन सम, करौ यहै निरधार ।
छुटि है अवशि जियती में करिलो, पार होन हितकार ॥
अस बनि जाय उपाय अबहिं तो, पीछे होय न हार ।
सौदा कर लो पूंजी बय दै, उठने चहत बजार ॥
धर्म कमाय सत्य परमेश्वर, अन्त लगावै पार ।
माधवराम श्याम गुन गावै, हिय धरि नंदकुमार ॥

इतिश्री भा० भा० सरसकाव्यनिधौ नवम स्कंधे नवमोऽध्यायः

T

श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ नवम स्कंधे दशमोऽध्यायः ॥

श्लो०—दशमे प्राह खट्वाङ्गवंशे श्रीरामसम्भवम् ।
तच्चरित्रंच लंकेशं हत्वायोध्यागमावधि ॥१॥

दो०—कुल भूपति खट्वांग में, रामलीन अवतार ।
रावण बध रघुपति चरित, दशयें कहैं विचार ॥

छं० शुक उ०-खट्वांगसे दीर्घ बाहुरघु भे, जिनकी कीरति जगमें छाई ।
तिनके अज तिनके दशरथ भे, जिन महराज पदवी पाई ॥१॥
तिन दशरथ के भगवान ब्रह्ममय, हरि अंशांश से पुत्र भये ।
देवतों ने बिनती की प्रभु की, धरि चारिरूप अवतार लिये ॥२॥
श्रीराम लक्ष्मण भरत और, शत्रुघ्न चरित मुनिवर गावैं ।३
सीतापति के गुण कहैं सुनैं, ऋषि तत्व दर्शि आनंद पावैं ॥
पितुके हित राज त्यागि बनगे, पद कमलों से महिमें बिचरैं ।
सियपिय के पद नहिंमहिंके योग, लक्ष्मण सुग्रीव थकाह हरैं ॥

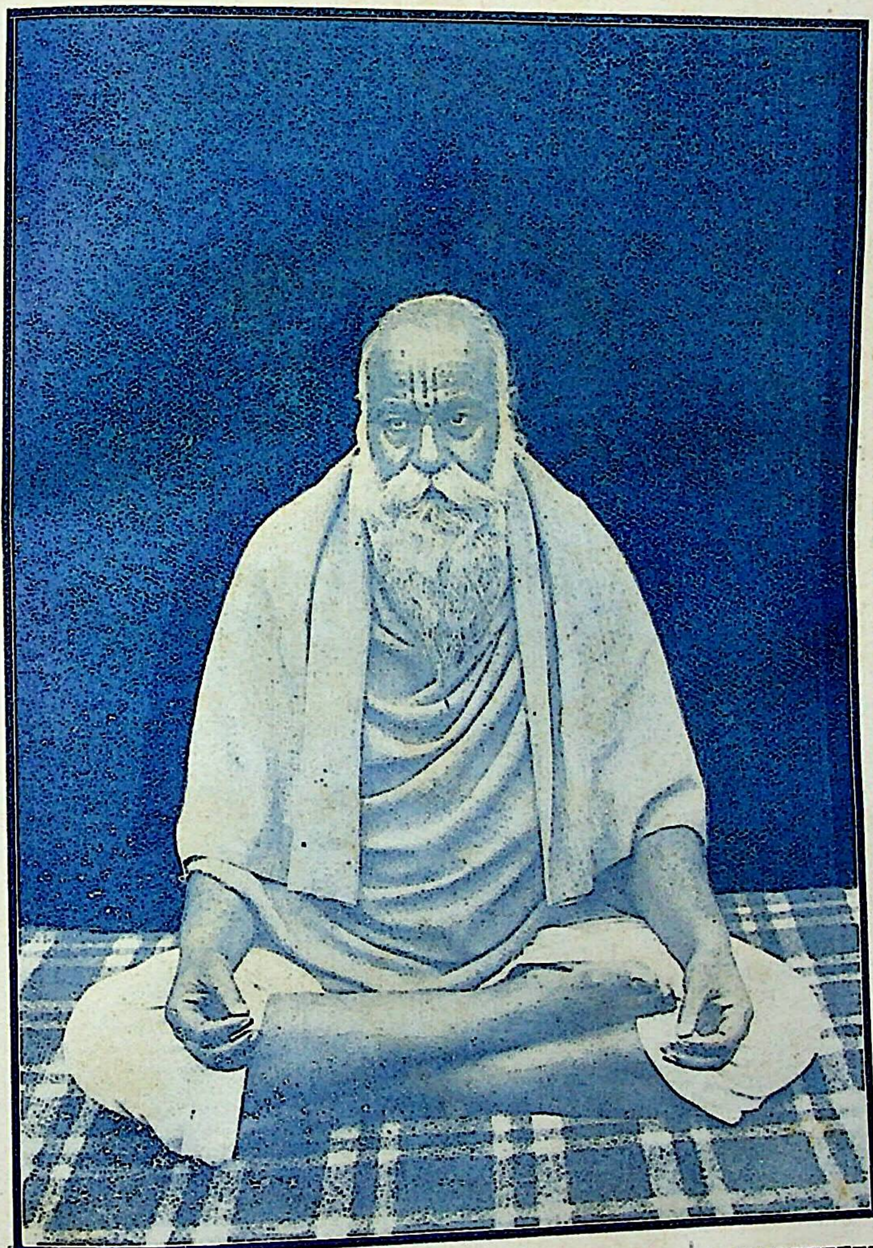
दो०—शूर्पनखा को रूप हरि, सिय वियोग चढि भौंह ।
बांधि सेतु खलदल दह्यो, कौशलेंद्र ह्वै सोह ॥४॥

छं—लै जन्म उछाह बाल शोभा, वालक्रीडा वहु भांति करी ।
मुण्डन छेदन बिद्या आरंभ, यज्ञोपवीत बिद्याहु धरी ॥
मुनि विश्वामित्र संग जाकर, मारीच सुबाहु शत्रु मारे ।
लक्ष्मण ने इक पलमें रण में, सब राक्षस वृन्दहु संहारे ॥५॥
शिवधनु सीताके ब्याह हेत, तहं बीर तीन सौ लाये हैं ।

श्रीसीतारामाभ्यां नमः

वाजपेयी श्री १०८ स्वामी सत्याशरणजी महात्मा

स्थान श्रीलक्ष्मणकोट, सद्गुरुसदन, श्रीअयोध्याधाम।



आप श्रीरामचन्द्रजी के अनन्यभक्त, गुरु-संत-द्विज-सेवी हैं।
ग्रंथकर्ता पर आपकी अपूर्व दया है और सब भांति से हार्दिक सहायक हैं।

मरचेंट प्रेस—कानपुर।

T

गज बाल ऊख सम राम तोड़ि, सियसे जयमाला पाये हैं ॥६॥
भूपों का मंत मथि जय लक्ष्मी, सीता श्री रघुपति ब्याही है।
मारग में भृगुपति मिलि मनाय, गे बन जो रण उत्साही है॥७॥
घर वारा बर्ष बसि राज हेत, बन लिया पिता आज्ञा धारी।
राज श्री महल मित्र सब कुछ, ज्यों मृतक तजैं बन तैयारी ॥८॥

दो०—निपटि सुरभि सबसे प्रभू, पंचवटी करि बास।
शूर्पनखा की नाक हरि, चौदह सहस बिनाश ॥६॥

छं०—सुनि सीता शोभा विकल हृदय, रावणने सीता हरण किया।
मारीचि राक्षस मृग स्वरूप, रघुनाथ बाण से मार दिया ॥१०॥
वृक समान राक्षस रावण हरि, सीता को लंका ले आया।
प्रिय वियोगमें भाई के संग, नारी वियोग दुख दिखलाया ॥११॥
करि क्रिया जटायू की सुत सम, हनिक कंध सुग्रीवहि दैराज।
वाली को मार गे समुद्र तट, कोपे प्रभु पदपरि साधे काज ॥१२॥
नहिं मानै सिंधु करि कोप राम, जलजीव मगर मछली जलते।
लै भेट सिंधु प्रभु चरण परो, विनती की राखहु हल चलते ॥१३॥

दो०—जड़मति हम जानै नहीं, आदि पुरुष भगवान।
सतसे सुर रज प्रजापति, तामस भूत महान ॥१४॥

छं०—हो जाव पार रावण मारो, लो सेतु बांधि सीता लीजै।
दिग विजयी भूप कीर्ति गावै, यश त्रिलोक में फैला दीजै ॥१५॥
पर्वतों से सेतु बंधाय राम, गिरि पादप बानर लावैंगे।
सुग्रीव नील हनुमान बली, सेना लै पार सिधावैंगे ॥१६॥
प्रथम ही विभीषण जला चुके, वानरी सेन गोपुर पुरको।

सब अंग भंग कर दई पुरी, गज झुण्ड ज्यों छोट सरोवर को ।१७।
लखि लंकापति बानर बलिष्ठ, अति काय प्रहस्त पठाये हैं।
धूम्राक्ष निकुंभ कुंभ आदिक, कुंभहू कर्ण रण आये हैं ॥१८॥

दो०—राक्षस सेना शस्त्र लै, शूल खर्ग धनुबान।
करैं सामना नीलनल, अंगदादि हनुमान ॥१९॥

छं०—रघुपति सेनापति द्वंद युद्ध, करि पर्वत वृक्ष प्रहार करैं।
सीता के हरण से शुभ विनाश, राक्षसों को हनि उत्साह धरैं।२०।
सबसेन मरी लखि असुर पती, रथ चढ़ि, प्रभु संमुख आया है।
अपना रथ सुरपति ने झटपट, मातली से वहां पठाया है ॥२१॥
रे राक्षस नीच पुरीष तुल्य, मम नारि श्वान सम हर लाया।
निर्लज्ज आज नहिं बचसकता, लख हमैं काल तव शर छाया ।२२।
यों कह कर होने लगी मार, शर वज्र तुल्य तजि हिय बेधा।
मर गिरा देव ज्यों सुरपुर से, जय जयसुर राक्षस रिपु खेदा ।२३।

दो०—रानी कई हज़ार सब, मंदोदरी प्रधान।
रुदन करैं अति दीन है, कहैं काल बलवान ॥२४॥

छं०-निज २ पतिबंधु परसिअंगमें, सब दीनरानियां रोती हैं।२५।
हमको पति किया अनाथ आज, आंसूसे कमलमुख धोती हैं ।२६।
बश काल भये हम जांय कहां, सीता के तेज से दशा भई ॥२७॥
लङ्का हम सब अनाथ ठाढी, नर्कहि आत्मा दुर्दशा लई ॥२८॥
शुक उ०-की क्रियाविभीषणने सबकी, रघुपतिकी आज्ञापाई है २९
शिंशपा वृक्ष तर विरह विकल, सीता हनुमान लखाई है ॥३०॥
प्रिय भार्या सीता लखि रामहिं, दुखदूर भये हियसुख पाया ॥३१॥

देराज विभीषण कपिलदल संग, चढि बिमान धनबहु बरसाया ३२

दो०—लै कपि फारै वसन सब, करै अभूषण चूर।
हम प्रेमी धन नहिं चहैं, हिय विराग भरपूर ॥

छं०—कल्पांत आयु दै चले राम, सुरपति सुर पुष्प वरषते हैं ।३३।
गाते यश जब खाते हैं भरत, दर्शन हित हिये तरसते हैं ।।३४।
धरि चीर बसन महिमें सोवै, शिर जटा भार भी धारे हैं।
दै खबर प्रथम मिलने की भरत, यहँ रामजी शीघ्र पधारे हैं ।३५।
सुनि भरत पादुका शिर धरके, गाजा बाजा से धाये हैं ।।३६।।
द्विज वेद पढैं उमड़ा अनंद, ध्वज पताक पुरी सजाये हैं ।।३७।।
हय गजरथ साजैं बीर सुभट, हो नाच गान विनतीं भारी ।।३८।।
लै छत्र चमर शिर पर धारे, करिपद प्रणाम बह दृग वारी ।।३९।।

दो०—वहैं प्रेम जल दृगन में, धरे पादु का शीश।
देखि राम हिय में लगे, पाये प्रभु जगदीश ।।४०।।

छं०:सियराम लखन सबको प्रणाम, करि उचित प्रजा शिर नावैं हैं।
हो पुष्प वृष्टि गावैं नाचैं आनंद थाह नहिं पावैं हैं ।।४२।।
सुग्रीव विभीषण चमर व्यजन, पादुका भरतजी शिर धारे।
शिर श्वेत छत्र हनुमान किये, श्रीराम सियाके अति प्यारे ।।४३।।
शत्रुघ्न धनुष शर बांधे हैं, सीता जी तीर्थ जलपात्र लिये।
अंगद के हाथ में खड्ग लसै, लखि जामवंत हर्षात हिये ।।४४।।
पुष्पक में चढ़े स्तुति होवैं, श्रीरामचंद्र शशि समसोहैं ।।४५।।
भाई सब सेवैं पुरी गये, पुरवासिन के नित मन मोहैं ।।४६।।
माता गुरु नारी प्रणाम करि. लक्ष्मण सीताहू पद परसैं ।।४७।।

गोदी उठाय माता पुत्रन, आशिष दें प्रेम सुजल वरषें ॥४८॥

दो०—भरत जटा रघुनाथ जी, छोरि आपने हाथ।
मज्जन करि सुरपति यथो, सोहिं रहे रघुनाथ ॥४९॥

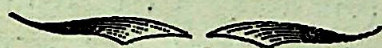
छं०-शुभदिन समुद्रजलसे मज्जन, शुभवसन सियायुत धारे हैं।५०
गद्दी पर तिलक किया गुरु ने, माता आरती उतारें हैं।
दंडवत भेट बहुत भांति भई, सुत सम रैयत पालन करते।
हमरे पितु मात हैं रामसिया, हित प्रजाचित्तमें हरि धरते ॥५१॥
त्रैता में सतयुग काल भया, जब रामराज महि पर आया ॥५२॥
बन गिरि पर्वत पृथ्वी समुद्र, बर्षहि कामना सुखहु छाया ॥५३॥
नहिंआधि व्याधि दुखशोक रोग, विनमांगे मृत्यु न आवै है।५४।
हैं राम एक पत्नी वृत अरु, सिय पति ब्रता सिखलावे हैं ॥५५॥

दो०—प्रेम शील अरु नम्रता, धी ह्री श्री हिय धार।
पति सेवा में निरत रह, मन हरती भरतार ॥

भजन—श्रीराम चरित सुखदाई, गाये मति गति बनिजाई।
लें जन्म वालपन खेले, मुनि संग पिता पुनिमेले ॥
गुरु यज्ञ पूर करवाई, श्रीराम चरित सुखदाई।
धनु तोरिकै सीय विवाहू, नित नव घर भयो उछाहू ॥
बन चले सीय संग भाई, श्रीराम चरित सुखदाई।
प्रिय वियोग कपि सेवकाई, शिव थापे कीन चढाई ॥
भयो युद्ध बिबिधि जयपाई, श्रीराम चरित सुखदाई।३।
वधि रावण रिपुदुखदाई, पुर आये गद्दी पाई।
माधव घर बजै बधाई, श्रीराम चरित सुखदाई ॥४॥

भजन—सुनै रघुबीर चरित नरनारि, लहै सुखमुक्ति संपदाचारि।
वालचरित सुनि-वालकेलि गृह नित नव आनंदकारि॥
ब्याह उछाह उछाह भरै घर, मिलै वहू सुकुमारि लहै।
सुनि बन गमन शत्रु संहारन, रिपुदल नाश प्रचारि॥
गद्दी राज सुनै गद्दी लहि, छूटै जगत विगारि लहै।
जीवन मुक्त तौन, प्राणी हैं लेहिं श्यामछबि धारि॥
माधवराम सिया छबि निरखैं, तनमन सुरति बिसारि।

इति श्री० भा० भा० नवम स्कंधे दशमोऽध्यायः समाप्तः।



श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ नवम स्कंधे एकादशोऽध्यायः॥

श्लो०—ततश्चैकादशेऽयोध्यामावसन्ननुजै सह।
यज्ञादियच्चकारेशो रामस्तदनुवर्ण्यते॥१॥

दो०—पुरी अयोध्या अनुज युत, रघुबर कीनो बास।
ग्यारह में यज्ञादि करि, कीनो धर्म विकास॥

छं० शुक उ०—भगवानराम निजआत्महिंको, मखसेपूजै सबदेवमयी।
आचार्य दक्षिणा विविधि दान, निज उत्सव रीती नई नई॥१॥
पूरब दिशि होता को दीनी, दक्षिणा ब्रह्मा को दान करी।
पश्चिम दिशि अध्वर्यू पाये, उत्तर सामग को देत हरी॥२॥
आचार्यहि मध्य भूमि सब दै, समझैं ब्राह्मण सबका मालिक।
इससे ब्राह्मणको सब चहिये, प्रभु आपतो है त्रिलोक पालक।३।

मंगल आभूषण छोड़ि सिया, आभूषण वस्त्र सबै दीने ॥४॥
ब्रह्मराय देवपन निरखि विप्र, सब प्रभुहि अर्पि बानी लीने ॥५॥

दो०—भुवनेश्वर क्या दीन नहिं, हरते हिय बसि ताप।
बदले में गौ दीजिये, हरनि सकल संताप ॥६॥

ब्रह्मराय देव उत्तम श्लोक, मतिशुद्ध श्रीराम प्रणाम तुम्हें।
मुनिजन पदमें चित देहि सदा, सुख धाम श्रीराम नमाम तुम्हें ।७
गौदान दिये पुनि करैं राज, छिपि खबर दूत पुरकी लावैं।
सीता कलङ्क दै पुरवासी, इक निज नारी को धमकावै ॥८॥
पर घर में बसी घर नहिं राखौं, स्त्री लोभी मैं राम नहीं।
सीता रावण घर वसी राखि, त्यों मैं न होउ बदनाम सही ॥९॥
इत उत चरचा फैली सुनि प्रभु, अपराध बिना सीता त्यागी।
बसि वाल्मीकि के आश्रम जा, भे रामचंद्र यशके भागी ॥१०॥

दो०—गर्भवती सीता प्रथम, कुशलव जाये पूत।
जन्म कर्म मुनिबर किया, हिय विराग अवधूत ॥११॥

छं०-लक्ष्मणके चित्र केतु अंगद, सुत पुष्कल तक्षभरत पाये।१२
शत्रुघ्न सुवाहु चित्रसेनहु, भरतहु गंधर्व बिजय लाये ॥१३॥
धन लाय दिया सब रघुपति को, शत्रुघ्न लवणासुर रण मारा।
मधुबन में मथुरा पुरी करी, बसि राज आपना निस्तारा ॥१४॥
कुशलव सुतसीता मुनिको दै, मखमें जा बिवर प्रवेश किया ।१५।
लखि राम अगार शोक धारा, ज्ञानी तबहूं है विकल हिया ॥१६॥
दिखलाया तिय नर संग ऐसे, ईश्वर का भी भय दायक है।
क्या कहिये जो गृह माहिं फंसे, नरनारि महा नालायक हैं ॥१७॥

T

दो०—ब्रह्मचर्य धरि रामजी, अग्निहोत्र नित धार।
सीता स्वर्णमयी करी, धर्म कर्म निरधार ॥१८॥

छं०—तेरह सहस्र करि बर्ष राज, भक्तों के हृदयमें पद धरि कै।
निजज्योतिमें जाय मिलेरघुपति, करिबिमलसुयश त्रिलोकभरि कै
सुर यांचा से लीला तनुधरि, निज धाम त्यागि महि पर आये।
कपि सहाय लै राक्षस मारे, हरिब्रह्म काह लघुयश गाये ॥२०॥
जिनका यश नारदादि गावैं, सुनकै सब पाप नशावैं हैं।
सेवहिं पद लोकपाल शिरसे, उस प्रभुकी शरण मनावै हैं ॥२१॥
प्रभु पर्सि चरित करि मुनि चरित्र, पुरवासी योगी गति पावैं ॥२२॥
श्रीराम चरित सुनि गाय सुजन, सब कर्म बंध से छुट जावैं ॥२३॥

दो० राजो बाच—कौन भांति प्रभु भाइ संग, कीनी राम सुराज।
कीन प्रजा पालन प्रभू, रामचंद्र महराज ॥२४॥

छं० शुक उ०-भाई सब दिशा जीति लाये, करिं यज्ञपुरी पालनकरते
छिड़काव राजपथ सुगन्ध जल. ऐश्वर्य नारि नर सब धरते ॥२६॥
सुरमन्दिर महलसभा गोपुर, सजि ध्वजपताक गृहकलश धरे।२७।
केला शुभ वंदन वार लगे, तोरण बितान सब हरे भरे ॥२८॥
जब कभी सवारी निकलै है, है प्रभु महीपालहैं जन कहते।२९॥
आशिष दै द्विज पुन देहि भेंट, वर्षहिं सुपष्पहू सुख लहते ॥३०॥
सब नृप सेवहिं बस महल राम, धन कोश खजाना अपार है।३१।
मणि हीरा मोती भवन सजैं, मरकतमणि सोहैं दिवार हैं ॥३२॥
पहिरैं सब चित्रविचित्र वसन, नरनारि सुखी कुछ चाह नहीं।३३।
धनमाल अभूषण वस्त्रपूर, हियराम बसैं शुभ भक्ति लही ॥३४॥

दो०—राम सिया सुख से बसैं, महा पुरुष धरि धीर ॥३५॥
धर्म अर्थ सुख सेवहीं, हरैं भक्त की पीर ॥३६॥

भजन—करी रामायण यह बिधि गान,
शोभा सिंधु राम सिय राजैं, महापुरुष भगवान।
थोरे महं सब चरित बखाने, गाय सुने कल्यान॥
रामचरण रत जो नर नारी, हैं वह परम सुजान॥
जगसुख भोगि अन्त मे तनु तजि, लहैं मुक्ति दृढ़ ज्ञान॥
जे जन राम चरण बिसराये, लगै न ठीक ठिकान।
माधवराम श्याम छवि हियधरि, गुन गावै सुखमान॥

इतिश्री भा० भा० सरसकाव्यनिधौ नवमस्कंधे एकादशोऽध्यायः



श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ नवम स्कंध द्वादशोऽध्यायः॥

श्लो०—द्वादशे रामपुत्रस्य, कुशस्यान्वय उच्यते।
एवमिक्ष्वाकु पुत्रस्य शशादस्येरितोऽन्वयः॥१॥

दो०—रामपुत्र कुश बंश अब, बर्णन करत बिचार।
सुत इक्ष्वाकु शशाद को, कुल बरहे निरधार॥

छं० शुक उ० श्रीरामपुत्रहै अतिथिं, तासुसुतनिषधतासु नभक्कहलाये।
तिनके सुत पुण्डरीक तिनके, सुत क्षेम धन्वहू कबि गायें॥१॥
तहं देवानीक अनीक तहां, तहं पारि यात्र पैदा सुत है।

तहं वत्सस्थलौके बज्रनाभ, तहं अर्क पुत्र अति अद्भुत है॥२॥
तिनके सुत खगण विधृति तिनके, सुत हिरण्य नाभहु उपजाये।
तिनके हैं योगाचार्य पुत्र, जैमिनि के शिष्य शिक्षा पाये॥३॥
सुत योगाचार्य के कौशल्य हैं, मुनि याज्ञवल्क्य सिखसिखलाये।
अध्यात्म योग हिय ग्रन्थि भेद, जो अद्भुत आनंद दिलवाये।४।
तिनके ध्रुवसिंधु सुदर्शन तहं, तहं अग्नि वर्ण तहं शीघ्र भये।५।
तिनके मरु वसैं कलाप ग्राम, हो क्षीणबंश रबि उदित किये।६।

दो०—प्रसु श्रुतहु तिनके सुअन, तिनके संधि बखान।
पुत्र अमर्षण तासु हैं, तासु पुत्र मह स्वान॥७॥

छं०—तिनके प्रसेन जित तक्षक तहं, तहं बृहद्बलहु तव पिताहने।
रण भारत मे अभिमन्युबीर, मारे बहुभट नहिं जांय गने॥८॥
ये गुजरे सूर्यबंशि राजा, जो होंगे उन्हें सुनाते हैं।
सुत बृहद बलहु के बृहदरणौ, तिसके उरु विक्रय लाते हैं॥९॥
तहं वत्स वृद्ध प्रति व्योम तहां, तहं भानु दिवा कहै सेनापति।१०।
तिनके सहदेव बृहदश्व तहां, तिनके हैं भान मान भूपति।
है भानुमान के प्रतीकाश्व, तिसके सुप्रतीक सुत जाये॥११॥
तिसके मरुदेव नक्षत्र तहां, तिसके सुत पुष्कर बतलाये।

दो०—अन्तरिक्ष है तासु सुत, तिसके सुतपा नाम।
अमित्र जित तिनके भये, सूरज बंश ललाम॥१२॥

छं०—तिसके सुत बृहद राज कहिये, तहं बर्हि कुंत जयतिसके हैं।
तिसके सुत सुघर रणंजय हैं, संजयनामी सुत जिसके हैं॥१३॥
तहं शाक्य तासु शुद्धोद भये, तिसके सुत लांगल आये हैं।

तिसके असेन जित भया पुत्र, सुतया सुत जिसने पाये है ॥१४॥
तिसके होवेंगे रणक पुत्र, तिसके सुत सुरथ कहावे हैं।
तिसके सुमित्र निष्ठांत अहैं, यह बंश वृहद बल गावे है ॥१५॥

दो०—अन्तिम अहै सुमित्र नृप, सूर्यवंश अवतंस।
इनही से कलिमें चलै, दिन कर बंश सुहंस ॥१६॥

भजन—भयो रविबंश विशाल प्रधान,
बड़े बड़े भूपति प्रतापयुत, वीर महा बलवान।
मुखिया मुखिया नाम गनाये, सबको नाहिं ठिकान ॥१॥
शिक्षा मिलत कथा से हमकों, सुनलो चतुर सुजान।
भयो नाश बलरूप राज सब, नाश भये तन प्रान ॥२॥
दुनियां में जो आवै प्यारे, चलना परै निदान।
यासों अंत सुधार ध्यान दो, गहो धर्म भगवान ॥३॥
ये दो गहे यहां भी सुख हो, मुक्ति मिलै दृढ ज्ञान।
माधवराम श्याम हिय धरि कै, गावो हरिगुन गान ॥४॥

इति श्री० भा० भा० नवम स्कंधे द्वादशोऽध्यायः



श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ नवम स्कंधे त्रयोदशोऽध्यायः

श्लो०—इक्ष्वाको रेव पुत्रस्य, निमेर्वंशस्त्रयोदशे ।
वर्ण्यते जज्ञिरे यत्र, ब्रह्मज्ञा जनकादयः ॥१॥

दो०—इक्ष्वाकू सुत बंशनिमि, वरणै तेरह माहिं ।
जनकादिक ज्ञानी नृपति, जन्मत भये तहांहि ॥

छं० शुक उ०-इक्ष्वाकुपुत्र निमिभूप, यज्ञहितबशिष्ठमुनिकोबरणकिया
प्रारम्भ कराय बशिष्ठ कहैं, पहले सुरपतिने न्यौत दिया ॥१॥
आवैंगे सुरपति मख कराय, नृप चुप मुनि सुरपुर जात भये ॥२॥
लखि नाशमान तन निमि राजा, ऋत्विक दूसर करि यज्ञकिये ।३।
गुरु आय देखि नृप का साहस, दे दिया शाप तन छुट जावै ॥४॥
लखि अधर्म गुरुको भूपशाप, दीन्हा तव तन न प्राण पावै ॥५॥
दोनों के देह छुट गये क्रोध लालच, यह दशा कराई है ।
उरबशी से मित्राबरुणहु से, निज देह बशिष्ठहु पाई है ॥

दो०—देखि उर्वशी रूपको, वीर्य गिरा महिमाहिं ।
धरो कुंभ में बारद्वय—दो बालक हो जाहिं ॥६॥

छं०-धरि सुगंध बस्तू में नृप तन, मुनिमख पूरण की सुर आये ।७।
मुनि कहैं नृपति जीवैं दो फल, नृपको तन बंधन नहिं भाये ॥८॥
नहिं वियोग भय से योग चहैं, हरि भक्त प्रभू पद भजते हैं ॥९॥
भयशोकदग्यितन हम न लेहिजिमि, जलके जीव तनतजते हैं ।१०
देवा ऊचुः हे विदेहनृप पलकों में बसो, पलकैखुलिबंद होन लाये।
बिन भूप राजमें बिपति बड़ी, मुनिमथै देह तहां सुत जाये ॥१२॥

भे जनक जन्म मृत से बिदेह, मथने से मिथिला नाम भया।
जबसे बिदेह मिथिला औ जनक, नृपबंश कहाया काम भया।१३

दो०—निमि के भये उदा बसू, नंदि वर्ध तहं जान।
सुकेतु तिनके तहां सुत, देवरात पहिंचान ॥१४॥

छं०—तिसके हैं बृहद्रथ तहां सुधृत, तहं धृष्टकेतु हर्यश्व तहां ।१५।
तहं मरु तहं प्रतीक तहं कृतिरथ, तहं देवमीढ नृप बिसृत वहां।१६
तहं महाधृतो कृतिरात तहां, महारोम, पुत्र तिस पाये हैं ॥१७॥
तहं स्वर्णरोम तहं ह्रस्वरोम, तहं सीरध्वज नृप आये हैं ॥१८॥
महियज्ञ हेत लै सुबूर्णहल, जोतन सीरध्वज भूप लगे।
सीता कन्या तहं प्रगट भई, सीता हलाग्र से नाम जगे ॥१९॥

दो०—कुशध्वज के हैं धर्मध्वज, कृतध्वज मितध्वज तासु।
कृतध्वजके केशी ध्वजौ, मितध्वज खांडिक जासु ॥२०॥

छं०-केशी ध्वज भये आत्म ज्ञानी, खांडिक नृप कर्मतत्व जानै।२१।
तहं भानुमान शतद्युम्न तहां, शुचि तिसके सनद्वाज मानै।
तहं ऊर्ध केतु तहं पुरजित हैं, तहं अरिष्ट नेमी प्रवलमहा ॥२२॥
तहं श्रुतायु तहां सुपार्श्वभूप, तहं चित्ररथौ क्षेमधी तहां ॥२३॥
तिसके समरथ तहं सत्य रथो, तहं उपगुरु उपगुप्तो तिनके।२४।
वसु अनंत तहं हैं युयुध पुत्र, तहं पुत्र सुभाषण श्रुत इनके।
तहं जयतहं विजयपुत्रजाये, तिसके ऋत तहां शुनक कहिये।२५।
तहं वीतहव्य तहं धृति तिसके, बहुलाश्व तहां कृतिसुत लहिये।२६

दो०—यह सब मिथिला भूप हैं, ज्ञानी सब निर्मोह।
द्वंद मुक्त घर में भये, आत्म बिशारदसोह ॥२७॥

भजन—जनक कुल में सब ज्ञानी भूप,
एक एक से योगी बढ़िकै, ध्यानी विशद अनूप।
घर ही में भवपार होत सब, परैं नहीं भव कूप॥
सुख दुख लाभ खर्चसम मानै, निशि दिन छाहीं धूप।
माधवराम मगन निजसुख में निरखैं आत्म सरूप॥

इतिश्री भा० भा० सरसकाव्यनिधौ नवम स्कंधे त्रयोदशोऽध्यायः



श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्य निधौ नवम स्कंधे चतुर्दशोऽध्यायः

श्लो०—चतुर्दशादिभिः सोम, बंशमाह समाप्तिः।
यस्मिन्नैलादयोभूपाः कीर्त्यन्ते पुरायकीर्तयः॥

दो०—चौंदह दश अध्याय में, चंद्रवंश कहि दीन।
शशि से बुध ऐलादि नृप, जन्मे जहां धुरीन।

छं० शुक उ०—नृप पवित्र चंद्रबंश सुनिये, जिसमें ऐलादिक भूप भये।
हरिनाभी से ब्रह्मा प्रगटे, विधिके सुत अत्री गिने गये॥२॥
अत्री सुत चंद्र अमृत मय भे, द्विज औषधि तारों के स्वामी।३।
जगजीति कीन मखराज सूय, गुरुनारि हरी तारा नामी॥४॥
बोलवाई गुरु नहिं दीन चंद्र, तब तो सुरदानव रारि भई॥५॥
शशि को सहायता शुक्र करी, गुरु की सहायता रुद्र लई॥६॥

संग भूत रुद्र के सुरपति संग, देवता वृहस्पति हित कारी।
रण तारक असुर नाम जाहिर, सुर असुर बिनाश भया भारी ॥७॥

दो०—बिनय करी बिधि से गुरू, शशिहि दिया बिधि डांट।
दिलवाइ तारा गुरुहिं, गर्भवती है आंट ॥

छं०-गुरु जानि कहा तज देहु गर्भ, नहिं तुझे भस्म कर देवेंगे ॥९॥
तारा ने सुतको त्याग किया, शशि गुरु कहैं हम हम लेवेंगे ।१०।
मेरा मेरा कहि झगड़ै दोउ, मुनि पूंछैं उतर न दे तारा ॥११॥
पुत्रही मात से कुपति पूंछि, किससे है जन्म कह दे म्हारा ॥१२
बिधि धीरज दे पूछै एकांत, चंद्रमासे सुत बतलाय दिया ॥१३॥
चन्द्रमा ले लिया प्रसन्न ह्वै, सब गुणसे युक्त बुध नाम किया ।१४।
हैं भोग योनि देवता पशु, पक्षी कीटादि योनि रासी।
इक कर्म योनि नर की श्रुति कहं, तिसमें ज्यादा भारतबासी।
जिस देवों का मखसे तालुक, उनको भी पाप लग जाते हैं।
जैसे द्विज हत्या सुरपति की, करि प्रयत्न उसे छुड़ाते हैं ॥

दो०—शशि तारा संबाद में, रूपक कथा बखान।
भूप पुरंजन की कथा, जिमि चतुर्थ में जान ॥

छं०—गुरू ज़ीव तासु नारी, तारा, बुद्धी जगमें कहलाती है।
मनचंद्र अहै वह कभी २ मनके अधीन हो जाती है ॥
बुध ज्ञान पुत्र तहं प्रगट होय, मन शशि गुरु जीव लड़ै दोऊ।
बिधि करतब जांच करी सबी, मनचंद्र ज्ञान बुध ले सोऊ ॥
इसको जन मूढ समझि उलटा, देवों में दोष लगाते हैं।
माया प्रपंच उलटा सीधा, कोई सच पता न पाते हैं ॥

बुध से पुरूखा इलामे भे, गुणवान उर्वशी इन्हें सुना ॥१५॥
उतशाप भया मोहित ह्वैके, नारद मुखसे पति यही गुना ॥१६॥

दो०—मित्रावरुण हृदय क्षुभित, पतित वीर्य तिनकेर।
घटमें धरि तेहि शाप दे, मृत्युलोक पति हेर ॥१७॥

छं०—इससे पुरूखा ढिग आई, उसको लखि भूप प्रसन्न भये।
मीठी बाणी से कहैं बचन, निधि पाई मानो दुःख गये ॥१८॥
राजो बाच-स्वागत है प्यारी आओआप, बैठो कहिये सेवाक्याकरैं।
है प्रीति हमारे संग रमै, बहु वर्ष संग हम तुम बिचरैं ॥१६॥
उर्वश्युवाच-किसकी मनदृष्टि न तुम्हंलगै, लखिकै रमनेको मन चाहै।
रखहु ये हमारे दो मेढ़े, हम रमण करैं मन उत्साहै ॥२१॥
घृत भोजन मेरा नग्न तुम्हैं, मैथुनसे पृथक नहिं कहीं लखौं ॥२२॥
राजा प्रसन्न क्या रूप भाव, आई हो आप हमें राखौं ॥२३॥

दो०—नृपति उर्वशी संग में, रमे बहुत स्थान।
चैत्ररथादिक देन बन, रचिकै काम विधान ॥२४॥

छं०-मुखसे आती है कमल गंध, रमते नृप का मन लोभा है।२५।
हां इन्द्र कहैं गंधर्वों से, उर्वशी बिना नहिं शोभा है ॥२६॥
आ गंधर्वों ने रात समय, दोनों मेढ़े हर लीने हैं ॥२७॥
चिल्लाये दूर जा सुन कहती, मैं मरूं न नृप सुधि कीने हैं।२८।
चोरों ने हर लिये पुत्र मेरे, यह डर कर निशि में सोता है।
जैसे दिन में नारी निर्भय, नहिं देखैं यह क्या होता है ॥२६॥
गज अंकुश से त्यों बचन बान, मारे असि लै नंगे भागें ॥३०॥
गंधर्व छोड़ भागे विजली, चमकी नृप नग्न लखे आगे ॥३१॥

दो०—नग्न देखि गै उर्वशी, भूप बहुत बिलखात।
पागल से महिमें फिरैं, नाहीं ठीक ठिकान ॥३२॥

छं०-लखि कुरुक्षेत्र में उर्वशिको, खुश हो यह राजा गाते हैं ॥३३॥
ठहरो प्यारी कुछ बात करो, हम तुम्हरे बिन घबड़ाते हैं ॥३४॥
यह देह नाश हो जावैगो, तुमने इसको भटकाया है।
खा जावै इसको गृद्ध काक, जो तुम्हें न इसने पाया है ॥३५॥
वर्वश्युवाच–मत मारोभूप खा जांय गृद्ध, नारी न किसी की प्यारी हैं।
निर्दयी साहसी क्रूर नारि, पति भाई मारन हारी हैं ॥३७॥
चाहती नवीन पुरुष हरदम, तजि पहिले को इच्छाचारी ॥३८॥
हम मिलैं साल में एक रात, हो पुत्र तुम्हारे यश धारी ॥३९॥

दो०—गर्भवती लखि नृप गये, अपने पुर के माहिं।
वर्ष गये मिलि उर्वशी, भूप हिये हर्षाहिं ॥४०॥

छं०—नृप कहैं उर्वशी से रह जा, वह कह गंधर्व मनावो तुम ॥४१॥
मुझको देंगे सब किया भूप, स्थाली दी ले जावो तुम ॥४२॥
स्थाली बनमें धर राजा, त्रेता में यज्ञ बिधान किया ॥४३॥
तहंशमी गर्भ पिप्पल देखा, करि मथन उर्वशी लोक लिया ॥४४॥
इक अरणी में उर्वशी ध्यान, इकमें अपने को ध्यान करैं ॥४५॥
मथने से अग्नी प्रगट भये, सुत समान राजा मन में धरैं ॥४६॥
उस यज्ञ में नारायण प्रगटे, उर्वशी लोक नृप मांग लिया ॥४७॥
है प्रणव वेद हरि बाणी मय, अग्नी सरूप मख सफल किया ॥४८॥

दो०—त्रेता युग में यज्ञ मुख, अग्नि पुत्र सम आप।
नृप गंधर्वहि लोक गे, छूटो हिय संताप ॥४९॥

T

भजन—काम जगमें सब से बलवान,
नारी जाको मूलमंत्र है, जीता सकल जहान।
सुरमुनि विकल करै इक पलमें, लगै न ठीक ठिकान॥
कर्म धर्म जपयोग भुलावै, हर लेवै सब ज्ञान।
माधवराम जीति सो पावै, कृपा करै भगवान॥

इतिश्री भा० भा० सरसकाव्यनिधौ नवमस्कंधे चतुदर्शोऽध्यायः

श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ नवम स्कंधे पंचदशोऽध्यायः॥

श्लो०—ततः पंचदशे गाधिरैलपुत्रान्वयोऽजनि।
यद्दौहित्रसुतो रामः कार्तवीर्यमहन् रुषा॥

दो०—ऐल पुत्र के बंश में, गाधि बंश बिस्तार।
परशुराम पंद्रहे में, अर्जुन दीनो मार॥

छं० शुक उ०-नृप पुरूरवा के ६ बेटा, उर्वशी गर्भ से जाये हैं।
आयु श्रुतायु सत्यायू रय, जय विजय ये षट कहलाये हैं॥१॥
सुत श्रुतायु के बसुमान श्रुतंजय, सत्यायू सुत पाये हैं।
रय के सुत एक अमित जयके, सुत बिजय के भीम कहाये हैं।२
सुत भीम के कांचन तहां होत्र, तहं जन्हु जो गंगापान किये।
जन्हू के पूरु वलाक तहां, सुत अजक तहां कुश जन्म लिये॥३॥
कुश के कुशांबु मूर्तय बसुसुत, चौथे कुशनाभ जन्म जिनके।
सुत भे कुशांबु के गाधि भूप, भै सत्यवती कन्या इनके॥४॥

दो०—कन्या मांगै ऋचीक मुनि, बर न योग पहिंचान।
ऋचीक मुनि से गाधि कह, व्याज बचन अनुमान ॥५॥

छं०—नहिं पूर करैंगे मुनी बचन, नहिं इस कन्या को पावैंगे।
दो श्याम कर्ण घोड़ा हज़ार, तब हम कन्या को व्याहेंगे ॥६॥
यह सुनि मुनि पहुंचे बरुण पास, घोड़े ला नृप को दीने हैं।
हारे हैं भूपति बचन मुनी, संग सुता व्याह शुभ कीने हैं ॥७॥
सुत चाहै मुनि से सत्यबती, बरदान पुत्र सासू भी चहै।
दो हवि बनाय पढि मंत्र मुनी, दीनी सुत होंगे बचन कहै ॥८॥
बेटी की खीर माता बदले, अच्छी गुनि बेटी की लीनी।
समझे मुनि बेटी से बोले, हो घोर पुत्र बदला कीनी।

दो०—ब्रह्म ज्ञानी भाय हो, बेटी मुनिहि मनाव।
पुत्र नहीं तौ पौत्र हो, मंत्र बृथा नहिं जाव ॥१०॥

छं०—क्षत्री के अंश की हवि खाई, यह बृथा नहीं हो सकता है।
जगदग्नि भये सप्तर्षि माहिं, बलमंत्र पौत्र पर रखता है ॥११॥
कौशिकी नदी भइ सत्यवती, जमदग्नि रेणुका व्याही है।१२।
वसुमदादि सुत जिसमें जन्मे, औ परशुराम उत्साही है ॥१३॥
चौबिस अवतार में गिनती है, है हय कुल सबी बिनाश किया।
इक्कीस बार निक्षत्र मही, करके विप्रों को दान दिया ॥१४॥
भे दुष्ट भूप महि बार रूप, तामसी विप्रद्रोही भारी।
इसही से परशुराम प्रगटे, महि भार उतारन अवतारी ॥१५॥

राजोवाच दो०—भूपों ने अपराध क्या, कीना देहु बताय।
भयो क्षत्रकुल नाश सब, बिप्र हाथ से धाय।१६।

छं० शुक उ०—है हय कुलमें नृप अर्जुन भे, दत्तात्रयी की सेवा की।१७।
दश हजार भुज का बल पाया, वहु आयु तेज श्री विद्याली।१८।
अणिमादिक योगेश्वर सिद्धी, सब ठौर गती बरसे पाई ॥१६॥
नर्मदा में रानी संग क्रीडहिं, जल रोके भुजबल अधिकाई।२०।
ऊपर की तरफ रावन शिवको, पूजै तहं पानी बढ आया।
पूजन समाप्त कर पूंछि हाल, इकदम आंखों में क्रोध छाया।२१।
जा भिड़ा सहस अर्जुन भी बीर, झटपट बानर सा बांध लिया।
दुर्दशा करी तब पुलस्त्य ने, नृप सुयश गानकर छुड़ा दिया।२२।

दो०—बन में गया शिकार को, जमदग्नी पहं जाय ॥२३॥
सेन सहित नृप को मुनी, आदर दै हरषाय ॥२४॥

छं०—थी होमधेनु सब पदार्थ दे, छप्पन प्रकार भोजन खाये।
मांगते गऊमुनि से राजा, मुनि गौ प्रताप लखि सकुचाये।२५।
मुनि देते नहिं भइ बात चीत, राजा ने ज़बरदस्ती छीनी।२६।
बछरा गौ चिल्लावैं लैगे, सुनि परशुराम गुस्सा कीनी ॥२७॥
ज्यों सर्प फफकि लै परशु हाथ, धनुबाण सिंह सम धाये हैं।२८।
मृग चर्म वस्त्र रवि तेज अंग, शिर जटा पुरी में आये हैं ॥२६॥
गौ मांगी नहिं दी ललकारा, चतुरंग सेन नृप सजवाई।
हाथी घोड़े रथ औ पैदर, सत्रह अक्षौहिनि रण आई ॥३०॥

दो०—परशुराम ने सब हनी, परसा लेकर हाथ।
बायु बेग रण घोर करि, काटे कर पद माथ ॥३१॥

छं०—वह रक्त नदी कछुआ हैं ढाल, कर सर्प मांस कीचड़ भारी।
हैं लहर धनुष हाथी है दीप, कायर के दिलमें भयकारी ॥३२॥

T

लै धनुष पांच सौ हाथों में, संमुख सहस्र अर्जुन आया।
मुनिसुत एकहि धनु से काटे, ब्राह्मण बल रण में दिखलायो ।३३।
फिर वृक्ष लगा फेंकने भूप, लै परशुराम फरसा धाये।
ज्यों छाटै कोई वृक्ष डाल, सब हाथ काटि महि पै नाये ॥३४॥
गिरि शृंग तुल्य शिरको काटा, पितुमरा सहस दशसुत भागे ।३५
जय पाकर परशुराम मुनिसुत, गौ बछरा लाये पितु आगे ॥३६॥

दो०—हाल पिता से सब कहा, सुनते माता भाय।
सुनि जमदग्नि प्रसन्न नहिं, बचन कहे बिलखाय ॥३७॥

छं०—हे परशुराम हो महाबाहु, तुमने यह पाप किया भारी।
सब देवमयी राजा मारा, यद्यपि अनीति द्विज दुखकारी ॥३८॥
हे बेटा हम तो ब्राह्मण हैं, गमखाने से शोभा पावैं।
जो क्षमा धारि ब्रह्म चित में, परमेष्ठी पद में पहुंचावैं ॥३९॥
दे क्षमा से शोभा द्विज लक्ष्मी, रवि प्रभा यथा सुखदाई है।
हों क्षमा शील पै हरि प्रसन्न, प्रभु क्षमा से शोभा पाई है ॥४०॥

दो०—द्विज हत्या से पाप बढि, तिलक धारि नृप मारि।
तीर्थ करौ हरि भजन करि, दीजै पाप उतारि ॥४१॥

भजन—विप्र अब आपन चरित भुलान,
तप जप विद्या तेज धारिकै प्रथमहि प्रगटि प्रधान।
शिक्षक चारि वर्ण के रक्षक, हिय से तेज निधान॥
मानै सबै वर्ण हैं आज्ञा, पूज्य मानि दे मान।
सो अब उल्टी रीति गहत हैं, छोड़ि सबै कुल कान॥
बेद बेद चिल्लात चहूं दिशि, करत न वेद विधान।

मनमानी मारग गहि लीनी, उलटी ही हठ ठान ॥
अबहूं समझ जाव सुनि प्यारे, सोचहु अंत निदान ।
माधवराम भजौ तजि लालच, मिलै तुम्हैं भगवान ॥

इति श्री० भा० भा० नवम स्कंधे पंचदशोऽध्यायः समाप्तः ।

श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ नवम स्कंधे षोडसोऽध्यायः ॥

श्लो०—षोड़शेऽथार्जुनसुतैर्जमदग्नौ हते मुहुः ।
रामात्क्षत्रबधः प्रोक्तो विश्वामित्रस्य चान्वयः ॥१॥

दो०—सहस्र अर्जुन पुत्र मिलि, जमदग्निहि दियो मार ।
परशुराम हनि क्षत्रिकुल, सोलह माहिं बिचार ॥

छं० शुक उ०-सुनि परशुराम पितु की बानी, करि तीर्थ यात्रा घर आये ।
इक साल में पूरी भई सबी, पितु की आज्ञा करि सुख पाये ॥१॥
इक बार रेणुका इनकी मा, जल भरने को गंगा में गईं ।
गंधर्व पद्म माली नहात, संग नारि वृन्द ये लखत भईं ॥२॥
नहिंहवन समयका ख्याल रहा, कुछ मन चंचल इनका भी भया ।
लखिकाल अधिक पतिसे डरकर, तहं लाई मुनिजी प्रश्न किया ॥
मन चंचल लखि मुनि कोप किया, लड़कों से कहा इसको मारो ।
नहिं मारैं परशुराम से कह, मारो सबको न देर धारो ॥

दो०—परशुराम पितु प्रताप को, जानैं भली प्रकार ।
माता भाई सब हने, आज्ञा पितु शिर धार ॥६॥

छं०—पितु प्रसन्न मांगो बर कहते, आज्ञाकारी सुतबर लायक।
सब जियैं न इनको याद रहै, किसने मारा दो मुनिनायक ॥७॥
सब जिये कुशल जिमि सोते से, पितुप्रताप लखि सब संहारे ॥८॥
सुत अर्जुन पितु बध सुमिरि दुखी, लखि परशुराम बल हैं हारे ।९।
भाई लै परशुराम बनगे, तबही अर्जुन सुत आये हैं ॥१०॥
बैठे देखा मुनि को मारा, अति घोर पाप हिय छाये हैं ॥११॥
रेणुका ने बिनय बहुत कीनी, माने न काटि शिर लिये गये ।१२।
कहि राम राम मा उर पीटैं, सुनि परशुरामजी प्रगट भये ॥१३॥

दो०—मृतक पिता लखि, रुदनकरि धारा कोप प्रचंड ॥१४॥
छोड़ि हमैं पितु स्वर्ग गे, भये चत्रि उद्दण्ड ॥१५॥

छं०—भाइयों को पिता देह सौंपी, चत्री कुल रहै न प्रण धारा ।१६।
लै परशु हाथ गे माहिष्मति, तहं बीन २ सबको मारा ॥१७॥
पर्वत लगाय दिये नृप शिर के, बह रक्त धार अति भयकारी ।१८
इकीस वार विन भूप मही, पितु वध अमर्ष दिल में धारी।
नव कुंड स्यमंतक पंचक में, चत्री वध कर भरदीने हैं ॥१९॥
करि यज्ञ पिताके तन शिर धरि, तर्पण करि पूजन कीने हैं ।२०।
होता को पूर्व दिशा दीनी, ब्रह्मा को दत्तिण दान किया।
अध्वर्यू पच्छिम दिशि पाई, उद्गाता उत्तर दान लिया ॥२१॥

दो०—विप्रों की है सव मही, परशुराम जी दीन।
विनय प्रार्थना नृपन करि, फिर उनसे लै लीन ॥

छं०—औरों को इधर उधर की महि, कश्यप को मध्य देश दीना।
उपद्रष्ट्रा को दै आर्या वर्त, सबको सब दै आदर कीना ॥२२॥

सरस्वुती में करि यज्ञांत न्हान, सब पाप धोय रवि समभ्राजैं ॥२३॥
सप्तर्षिवृन्द में जमदग्नी, सुत करनी से गति लहिराजै ॥२४॥
आगामी मन्वंतर में यह सप्तर्षी परशुराम होवैं ॥२५॥
बैठे हैं महेन्द्रा चल ऊपर, तजि दण्ड शांत ह्वै हरि जोवैं ॥२६॥
भृगुवंश में हरि ह्वै परशुराम, हनि क्षत्री भार उतारा है ॥२७॥
गाधी के विश्वामित्र भये, जो तप करि द्विजपन धारा है ॥२८॥

दो०—ब्राह्मण सुत हो खीर थी, खाई क्षत्री नारि ॥
तप करि अंत बिप्र भे, सब संदेह निवारि ॥

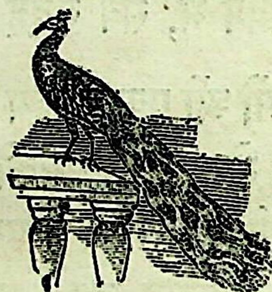
छं०-सुत विश्वामित्रके सौ औ एक, मध्यम मधुछंद कहाते हैं।२९।
भृगु वंश में जन्मा शुनः शेय, मुनि उसको जेठ बनाते हैं ॥३०॥
जो हरिश्चंद्र की यज्ञ माहिं, विकमोल से पशुबनि आया था।३१।
मुनि विश्वामित्र ने बचा लिया, तब देवरात कहलाया था।३२।
नहिं जेष्ठ बनावैं मधु छंदस, हो म्लेच्छ सबै मुनिशाप दिया।३३।
लघु पचास से कहैं जेष्ठ करो, ये ज्येष्ठ भये स्वीकार किया।३४।
हो वीर बड़े मुनि अशीश दें, मुनि प्रथम रहे सब म्लेच्छ भये।
बहु बैर शाप से भारत में, सब जगह म्लेच्छ गण बाढ गये ॥३५॥
भे देवरात औ कुशिक एक, अष्टक जयक्रतु है कुल भारी।
कोई शाप कोइ बरदान युक्त, भई प्रथा सबी न्यारी न्यारी।३६।

दो०—विश्वा मित्र वंश अस, प्रबरांतर में जाय।
कोइ क्षत्री कोइ विप्र भे, बहुत भांति समुदाय ॥३७॥

भजन—तपस्या बल है अधिक प्रधान।
विप्रखीर क्षत्राणी खाई, पुत्र भयो बलवान ॥

विश्वामित्र राज बहु कीनी, द्विजबल लखि घबरान ।
करी तपस्या राज त्यागि कै, चहुंदिशि दृढ प्रण ठान ॥
सहस वर्ष तक जल नहिं पीवत, इन्द्रादिक अकुलान ।
ब्रह्मा आय यही बर दीना, होवो बिप्र निदान ॥
प्रथम बिप्र थे अंत विप्र भे बीच में क्षत्री मान ।
माधवराम भजन तप बलसे, होवैं ठीक ठिकान ॥

इतिश्री भा० भा० सरसकाव्यनिधौ नवमस्कंधे षोडशोऽध्यायः



श्रीमद्भागवते भाषा सरसकाव्यनिधौ नवम स्कंध सप्तदशोऽध्यायः

श्लो०—आयोः सप्तदशे त्वैल ज्येष्ठ पुत्रस्य पंचसु ।
सुतेषु क्षत्रवृद्धादि चतुर्णां बंश वर्णनम् ॥

दो०—पुरोरवाके जैष्ठ सुत, आयु पंच तिनमाहिं ।
चार पुत्र का वंश सब, सत्राह माहिं कहाहिं ॥१॥

छं० शुक्र उ०-सुत पुरूरवाके आयु तासु, भे नहुष क्षत्र वृद्धादि अनूप ॥१॥
रजी रंभ अनेना पांच भाय, भे क्षत्र वृद्ध के सुहोत्र भूप ॥२॥
तहं काश्य गृत्समद कुशहु तीन, सुत गृत्समदहु के शुनक भये ।३।
तिसके शौनक मुनि काश्य पुत्र, भे काशि काशि के राष्ट्र नये ।

भये राष्ट्र पुत्र शुभ दीर्घतमहु, तिनके धन्वंतरि बैद प्रधान ॥४॥
लें यज्ञ भाग हरि अवतार ये, सुधि करते रोग विनाशमान्।
तिनके सुत केतुमान नामी, तहं दिवो दास तहं पुत्र द्युमान ॥५॥
वह शत्रु जीत सोइ ऋत ध्वजहु, सोई प्रतर्दनहु नाम बखान ।६।

दो०—द्युमान सुत कुबलाश्व हैं, अलर्कादि भूपाल ।
छै सठि सहस सुपालि महि, पार भये भव जाल ॥७॥

छं०—भे अलर्क सुत संतति है नाम, तहं सुनीथ तहां सुकेतन है।
तहं धर्मकेतु तहं सत्यु केतु, जिनमें बल प्रताप नूतन है ॥८॥
तहं धृष्ट केतु सुकुमार तहां, तहं बीतिहोत्र ने जन्म लिया।
तहं गर्भ गर्भ के भार्ग भूमि, यह काश्य वंश का नाम किया ॥६॥
है रभस रंभ के सुत गंभीर, तहं अक्रिय तहां ब्रह्म आये ॥१०॥
है शुद्ध अनेना के जाये, तहं शुचि तहं ककुद्धर्म गाये ॥११॥
सुत शांतरयहु ज्ञानी इनके, रजिके हैं पांचसौ सुत बलवान ॥१२॥
रजि से देवों ने सहाय ली, हनि दैत्य सबै राखे सुर प्रान।

दो०—करैं उपद्रव दैत्य पुनि, रजिहि इन्द्रपुर दीन ।
चरण गहे राखो शरण, यह औसर बलहीन ॥१३॥

छं०—रजि के मरने पर लड़कों से, सुर मांगै पुर वह नहिं देवैं ।१४।
आखिर सुरगुरु ने भस्म किया, तब इन्द्रदेव सुरपुर लेवैं ॥१५॥
चलते अनीति सब भ्रष्ट मार्ग, सुरगुरु वृहस्पति भस्म किया।
कुशके प्रति तिसके संजयसुत, तहं जय तहं कृतसुत जन्म लिया॥
कृत के हर्यवन पुत्र जाये, सहदेव पुत्र हीनहु इसके।
जयसेन हीनके पुत्र कहे, तहं संकृति तहं जयसुत जिसके ।१७।

T

दो०–क्षत्रधर्म जय से भये, महारथी बलवान ।
क्षत्रवृद्ध को वंश यह, नाहुष बंश वखान ॥१७॥

भजन–इस चंद वंश में भी राजा प्रताप पाये ।
इक एकसे ज़वर हैं, दुनियां में यश कमाये ॥
भूपति ययाति कातो, यश खूब छा रहा है ।
यदुवंश भया जिसमें, श्रीकृष्णचंद्र आये ॥१॥
उस चंद्र वंश में ही, जन्मे हैं बीर भीषम ।
जहं धर्म भूप पदवी, लै धर्मराज जाये ॥२॥
नृप विष्णुरात हरिजन, शुभ नाम है परीक्षित ।
शुक परमहंस जिनको, भगवत कथा सुनाये ॥३॥
जहं भक्त कृष्ण आवैं, कैसे प्रताप कम है ।
गुण माधवराम हरदम श्रीकृष्णजी के गाये ॥४॥

इति श्री० भा० भा० नवम स्कंधे सप्तदशोऽध्यायः

श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ नवम स्कंधे अष्ठादशोऽध्यायः

श्लो०–अष्टादशे ययातेस्तु नाहुषस्य कथोच्यते ।
यस्य पंचसु पुत्रेषु, कनीयानग्रहीज्जराम् ॥१॥

दो०–नहुषभूप सुत ययाति के, पांच पुत्र कहि दीन ।
अट्ठारह में कहत हैं, जरा छोट सुत लीन ॥

छं० शुक उ०–हैं नहुषके ६ सुत यतिययाति, संयातिआयतीवियतिकृती

हो नर्कराज से तजि बनगे, आत्म ज्ञानी सुत जेष्ठ यती ॥२॥
गे नहुष स्वर्ग सुरपुर पालैं, इन्द्राणी की इच्छा कीनी।
विप्रों के शाप से सर्प सर्प, कहि अजगर की देही लीनी ॥३॥
तब ययाति सब पर मालिक भे, चारों भाई दी चार दिशा।
बृषपर्वा शुक्राचार्य सुता, व्याही सुर[1] यानी भई गुसा ॥४॥
राजोवाच-हे मुनिययातितो छत्री है, किसतरह विप्रकन्या व्याही।
प्रति लोम विवाह किया कैसे, मर्याद बिगारा नहिं चाही ॥

दो॰ शुक उ॰—शर्मिष्ठा दानव सुता, वृषपर्वापितु नाम।
सहस सखी संग गुरु सुता, बिचरहिं उपबन ठाम ।६

छं॰-धूमती देवयानी सब मिलि, हिलि मिलिके गीतहु गाती हैं।७
जल निकट आय कपड़े तट धरि, क्रीड़ा करि खूब नहाती हैं ॥८॥
आते लखि गिरिजा शंकरको, झट जलसे निकल वस्त्र पहिरैं।९।
अपने गुनि गुरु कन्या के वस्त्र, शर्मिष्ठा अपने अंग धरै।
देखती देवयानी जब यें, गुस्सा हो उससे कहती है ॥१०॥
देखो पहने हैं मेरे बस्त्र, ज्यों कुतिया मख हवि चहती है ॥११॥
ममपितु ब्राह्मण हरि मुख सो भया, धरि बेद धर्म दिखलाते हैं।१२।
हरि लोकपाल सुरपति मानैं, सब जगह मान बहु पाते हैं ॥१३॥

दो॰—याको पिता असुर अहै, हम भृगु बंश उदार।
पहने मेरे वस्त्र यह, शूद्र बेद जिमि धार ॥१४॥

छं॰-गुरुसुता कथन सुनि शर्मिष्ठा, करिकोप सांपिनी सरिस जगी।
दांतों से होठ चाब तीजा, नृप कन्या वह भी बकन लगी ॥१५॥
नहिं जानैं मंगती अपन हाल, कुतिया सी मम टुकड़े खावै।

[1] देवयानी

नहिं अन्न मिलै मेरे घर से, तू बाप तेरा कुल मर जावै ॥१६॥
बहुबकि अपने कपड़ेभी छीन, घिसिलाय कुंवामें डाल दिया ।१७
घर गई ययाति भूप आये, बन शिकार में जल चाह किया ।१८।
बोली निकाल लो हमै आप, दो वस्त्र निकालें हाथ गहा ।१६।
गुरु सुता प्रेम भरि नृप से कहै, पकड़ा है हाथ मम भूप यहां ।२०।

दो०—और हाथ नहिं गहैं मम, हो मेरे भरतार ।
मनुष्यकृत संबंध नहिं, यह कीनो करतार ॥२१॥

छं०—मैं कुवां गिरी से आप मिले, ब्राह्मणपति मेरा होय नहीं ।
सुरुगुरु सुत को मैं शाप दिया, मुझको वह दीन्हा शाप सही ॥
सुनो भूप हाल सुरगुरुसुत कच, मम पितु समीप पढने आये ।
सब विद्या ले घर को जाते, उससे विवाह हित मन लाये ॥
गुरु कन्या लखि नाहीं कर दी, भूलै सब विद्या शाप दिया ।
नहिं मिलैं ब्राह्मणपति तुमको, उसनेभी कोपकरि बचनलिया ।२२
यह कारण नृप स्वीकार किया, घरगे वह कन्या घर आई ॥२३॥
शर्मिष्ठा की करतब सारी, रो रो के पितु से बतलाई ॥२४॥

दो०—शुक्राचार्य उदास भे, नीच पुरोहिति मानि ।
कन्या लै बाहर चले, शीला वृत्ती ठानि ॥२५॥

छं०-सुनि बृषपर्वा गुरु चरणगिरे, बिनतीकरि गुरुहि मनावैं हैं ।२६
द्विज छनिक कोप चट प्रसन्न भे, कन्या मनाव बतलावै हैं ॥२७॥
कह दो बेटी जो इच्छा हो, कहती पितु मुझे जहां व्याहै ।
सब सखी संग तेरी कन्या, दासी हो जावैं दो चाहैं ॥२८॥
संकट लखि दान वहां कीना, शर्मिष्ठा उसकी दासि भई ।

गुरु सुता बिवाही ययाति को, नृप कन्या दासी संग गई ॥२९॥
कह दिया शुक्र ने ययाति से, शर्मिष्ठा का न संग करना ॥३०॥
गुरु सुताके लड़का जन्म देखि, नृप कन्या नृप पद शिर धरना।
ऋतुदान मुझे दीजै राजा, मैं सखी हूं हक तब तनमें लिया ॥३१॥
नृप शुक्र बचनका ख्याल किया, गुनि धर्म मनोरथ पूर किया।३२

दो०—यदु तुर्वसु गुरु सुता के, शर्मिष्ठा के तीन।
द्रुह्यु पूरु अनु नृप सुता, जाये पुत्र प्रवीन ॥३३॥

छं०-सुनिययाति सुत गुरुसुता कुपित, निजपिताशुक्र गृहमें पहुंची
राजा भी मनाते संग गये, नहिं मानी एकहु बात जची ॥३५॥
पितु से रोई पितु कोप किया, हो वृद्ध भूप को शाप दिया।
देखो गुस्सा भी कहीं कहीं, अपना ही तो नुकसान किया ॥३६॥
ययाति उ०-नहिं तृप्ति भोगसे हे ब्रह्मन, कहशुक्र उमर बदला करलो।३७
नृप आय जेष्ठ सुत यदु से कहें, दो अपन उमर मेरी तुम लो।३८।
दे शुक्र शाप हम वृद्ध भये, भोगों से न तृप्ती मेरी हैं।
बदला कर लो ये बचन कहा, चाहता उमर मैं तेरी हैं ॥३९॥

दो० यदुरुवाच-धर्म समुझि कहते यदू, हम नहिं बदलैं वैस।
शिथिल होय तन तहां पर, पूर न होवै ऐश ॥४०॥

छं०—तुर्वसु औ द्रुह्यु अनु से मांगी, सबने नाहीं कर दीनी है।४१।
सब से छोटे पुरु से मांगै, पितु बचन सुनत हां कीनी है ॥४२॥
पूरुरुवाच-पितुका बदलाको दे सकता, जिससे सुतका तन बनताहै
बिन कहे करैं उत्तम सुत है, कहने पर मध्यम ठनता है ॥४४॥
है अधम अश्रद्धा से जो करै, आज्ञा न करै पितु कामल है।४५।

कह दीन उमर पितु सुख भोंगै, सुत वृद्धा ली नहिं हलचल है ।४६।
सातहू दीप पालैं ययाति, सुख भोगै दिन दिन यज्ञ करैं ॥४७॥
सब देवमयी हरि प्रसन्न हों, रानी संग लै बहु धर्म धरैं ॥४८॥
जिमिधन अकाश में ह्वै नाशैं, यों स्वप्न सरीखी माया है ।४६।
उसहरि को हियमें धारे नृप, फल चहैं न, प्रभुकी दाया है ॥५०॥

दो०—तृप्ति भोगि सुख नहिं भई, सहस वर्षगे बीति ।
प्रगटी हिये ययाति के, धर्म सहित दृढ़ नीति ॥५१॥

भजन—जगत में नारि मोहिनी रूप ।
हाड मांस मल मूत्र भरो है, सब जानै तमकूप ॥
तहूं विकल नारी बिन डोलैं, नरमुनि जन सुरभूप ।
नारी हेत दिवाने नर खर, गिने छांह नहिं धूप ॥
खोटी नारि कहैं समझावैं, तबहूं लखैं अनूप ।
माधवराम गुनै तिय माता, पितुहू श्याम सरूप ॥

इतिश्री भा० भा० सरसकाव्यनिधौ नवम स्कंधे अष्टादशोऽध्यायः



श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्य निधौ नवम स्कंधे एको न विंशोऽध्यायः

श्लो०—ऊनविंशे ययातिः स्वं चेष्टितं नन्वजोपमम् ।
देवयानीं समाश्राव्य बिरक्तो मुक्तिमाप्तवान् ॥१॥

दो०—ययाति नृप निज करतब, [1]अज के तुल्य बखानि ।
उनइश में बैराग लै, मुक्त मिले भगवान ॥

छं० शुक उ०-कामीसम अपनी करतबलखि, रानीसे गाथा गाते हैं।
सब कथा हमारी सुनों प्रिये, बनवासी मुनि पछलाते हैं ॥२॥
कोई बकरा प्रिय अपन लखैं, इक बकरी कुवां पड़ी देखी ॥३॥
सींगों से मट्टी खोद खोद, बाहर निकाल ली कर शेखी ॥४॥
उस बकरी से की प्रीति बहुत, औरहु बकरी गणका मालक ॥५॥
बकरा इक रुष्ट पुष्ट बलयुत, नहिं लखै आत्मा तन पालक ॥६॥
औरों में प्रीति अधिक उसकी लखि, कुवां से जिसे निकाली है ।७।
सह सकी न बकरे को छोड़ा, मालिक से चुगुली ढाली है ॥८॥

दो०—चला मनाते अज उसे, कामी बस है नारि ।
बिनती की मानी नहीं, नारी महा अनारि ॥९॥

छं० बकरीका स्वामी विप्र कोई, बकरेका अंग नरहीन किया ।१०।
बिनती करने से पुष्ट किया, अजभोगि भोग नहिं तृप्त हिया ।११।
तैसे हम तेरे प्रेम में फँसि, माया मोहित नहिं आत्म लिया ॥१२॥
धन धान्य पशू नारी जग की, कामी का काम नहिं पूर दिया ।१३।

१ बकरा

T

नहिं काम भोग से शांत होय, ज्यों घृत छोड़े से अग्नि बढ़े।१४।
नहिं कहीं अमंगल भाव करै, समदृष्ट होय सत रंग चढ़ै ॥१५॥
सब दिशा में सुख समको रहता, तृष्णा दुखदाई ताहि तजै ॥१६॥
तनजीर्ण होय तृष्णा न घटै, सुख चहै त्यागि श्रीकृष्ण भजै ॥१६॥

दो०—माता भगिनी सुता संग, बैठे नहिं एकात ।
इन्द्री गण बलवान हैं, तुरत लगावै घात ॥१७॥

छं०—विषयों को भोगा सहस बर्ष, तौ भी तृष्णा बढती जावै ॥१८॥
सब तजि ईश्वर में मन लगाय, निर्द्वंद फिरौं बन में भावै ॥१६॥
है झूठा देखा सुना सबी, बिद्वान आत्मा को परखै ।
लखि देह नाश हंकार छोड़, भव तरै न माया हेत झखै ॥२०॥
यों कह रानी से ययाति नृप, सुत पूरु को उम्रहु फेर दई ॥२१॥
दिशि पूर्व द्रुह्यु को दक्षिणयदु, तुर्वसु पच्छिम अनु उतर लई ।२२।
भू मंडल पालक पूरु किया, जिसने पितु आज्ञा मानी है ।
कर दिया तिलक उसको ययाति, अपना बन यात्रा ठानी है ॥२३॥

दो०—धनि जगमाहिं ययाति नृप, वर्ष सहस कर भोग ।
भये पंख पक्षी उड़े, त्यों गहि लीनों योग ॥२४॥

छं०:बनमें सब संग छोड़ राजा, गुण तजि आत्मा अनुभव कीना ।
उस परम ब्रह्म में लव लगाय, तन त्यागि परमपद नृप लीना ।२५।
यह कथा देवयानी सुनि कै, नर नारि हेत उपदेश गुना ॥२६॥
ज्यों राहगीर प्याऊ में मिलै, ईश्वर अधीन जग सकल सुना ।२७।
जग सुख लखि स्वप्न समान सबी, संसार से मनको हटा लिया ।
श्रीकृष्ण चरणमें लगाय मन, गति पाई तन को त्यागि दिया ।२८।

दो०—बासुदेव भगवान को, बारम्बार प्रणाम ।
शांत रूप सबमें बसैं, सब जीवों के धाम ॥२६॥

भजन—विषय सब कीना जगत बिहाल ।
बड़े २ मुनि करैं तपस्या छोड़ि जगत को जाल ।
माया फांस लेत फन्दे में, चलत न एकौ चाल ॥
जानैं सही एक दिन मरना, खाय जाइ है काल ।
धूंधि मूसि वहुछल प्रपंच करि, जोरत हैं जंजाल ॥
जानै संग चलै नहिं कौड़ी, जोरि धरैं धनमाल ।
माधवराम बिषय से बचि हैं, नित सुमिरौ नंदलाल ॥

इतिश्री भा० भा० सरसकाव्यनिधौ नवमस्कंधे एकोनविंशोऽध्यायः



श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ नवम स्कंधे विंशोऽध्यायः ॥

श्लो०—विंशे पितृप्रसादाप्तराजासनमहोन्नतेः ।
पूरोर्बंशेहिदौष्यन्तेर्भरतस्येर्यते यशः ॥१॥

दो०—पितु प्रसाद से राज लहि, पूरु भये प्रधान ।
बीस माहिं दुष्यन्त सुत, भरत प्रताप बखान ॥

छं० शुक उ०-अब कहते पूरुवंश राजन, जिसकुलमें तुमउत्पन्नभये
जहं राजऋषी औ ब्रह्म ऋषी, कुल करनी वाले जन्म लये ॥१॥
पूरु के जन्मे जय सुत भे, तहं प्रचिन्वान तहं प्रवीर हैं ॥२॥

तहं नमस्यु तिनके चारु पद्हु, तहं सुद्यु तहां बहुगव, धीर हैं।
तहं संयाती तहं हंयाती, रौदाश्व तासु सुत जाये हैं ॥३॥
तिसके ऋतेयु कुक्षेयु तहां, स्थंडिलेयु भाई पाये हैं।
सुत कृतेयु जलेयु संततेयू, धर्महु सत्यब्रतेयु दश हैं ॥४॥
अप्सरा घृताचीसे पैदा, ज्यों दश इन्द्री आत्मा बश हैं ॥५॥

दो०—रंति भार हैं ऋतेयु नृप, तिनके सुत हैं तीन।
अप्रतिरथ ध्रुव सुमति हैं, एक से एक प्रवीन ॥६॥

छं०-अप्रतिरथके सुत करण्व मुनी, तिनके मेधातिथि द्विज गाये।
प्रस्कण्वादिक सुत हैं तिसके, तपघोर ठानि द्विजपद पाये॥
सुमती के रैभ्य दुष्यंत तहां, दुष्यंत कण्व आश्रम में गये ॥७॥
तहं रूपवती लक्ष्मी के तुल्य, इक कन्या सुंदरि लखत भये ॥८॥
संग सेन देख कुछ मन क्षोभा, उस कन्या से नृप बात करैं ॥९॥
मन प्रसन्न लखके चित चंचल, मधुरी बाणी मुखसे निकरैं ॥१०॥
को आपहो किसकी कन्याहो, किसकारण बनमें रहती हो ॥११॥
नहिं अधर्म लाते पुरु बंशी, हो नृप कन्या पति चहती हो ॥१२॥

दो० शकुन्तलोवाच-पैदा विश्वामित्र से, अहै मेनका मात।
कण्वमुनी पालन किया, छोड़ि हमैं वह जात।१३

छं०—आवो बैठो पूजन लीजै, भौजन कीजै चह रात बसो।
मैं तो क्षत्री की कन्या हूं, रहती मुनि ढिग नहिं बृथा हंसो ॥१४॥
दुष्यंत उ०-तुम कुशिक वंशकी कन्याहो, उस कुलमें स्वयं कन्या बरले।
क्या इच्छा तुम्हरी हां कीनी, गंधर्व व्याह नृप कर धरले ॥१६॥
रानी की अमोध वीर्य धर के, बस रात सबेरे घर आये।

T

वह समय पायके शकुन्तला, है भरत नाम शुभ सुत जाये ॥१७॥
करि कर्म करराव पालन कीना, हो गया बड़ा सिंहहु बांधै ॥१८॥
लखि प्रताप माता सहित उसे, मुनि भेजी निजपति आराधै ।१९।

दो०–निंदा योग न मातु सुत, राजा ग्रहण न कीन ।
गगन गिरा सब सुन रहे, भै अति जोर नवीन ॥२०॥

छं०–माता है धौकनी सुत पितु का, जिससे जो पैदा उसका है ।
मत शकुन्तला को तजो भूप, सुत तुम्हार नहिं किसपिसका है ।२१
उत्पन्न वीर्य से पुत्र बचावै यमसे, श्रुति यों कहती है ।
तुम पितु शकुंतला सत्य कहै, पालो वह पालन चहती है ॥२२॥
दुष्यंत मान ली गगन गिरा, सुत माता का पालन कीना ।
इसमें भी कारण शाप अहै, संसार कर्म के आधीना ॥
थी शकुन्तला जब गर्भवती, दुर्वासा मुनि जी आये थे ।
यह राजा का स्मरण करै, लखि मुनिको शिर न झुकाये थे ॥

दो०–मुनी क्रोध से शाप दें, राजा लेहिं न तोहिं ।
सुनि मुनि से बिनती करै, मुनी उबारौ मोहिं ॥

छं०–मैं अबला उमर नवीन नाथ अपने पतिही के ध्यानमें थी ।
यह कारण शिर न झुकाने का, नहिं स्वामी और गुमान में थी ॥
बिनती करने से मुनि प्रसन्न, कह पहले भूप न ग्रहण करैं ।
दुख तेरा लखि हो गगन गिरा, पालन करि हैं सब दुःख हरैं ॥
पितु मरने पर भे भरत भूप, है चक्रवर्ति यश भारी है ॥२३॥
करमें है चक्र पावों में पद्म, सम्राट सुपद अधिकारी है ॥२४॥
शत पांच पांच मख गंगा तट, कोई यमुना तट में कीनी हैं ॥२५॥

सत्तर औ आठ करि अश्वमेध, सैकड़ों बद्ध गौ दीनी हैं ॥२६॥

दो०–तेरह सहस चौरासी, एक बद्ध परमान ।
बद्ध एक देते गऊ, विप्रन को नित दान ॥

छं०-शत तीन अश्व बांधे, मखहित राजों को विस्मय आया है ।
दुष्यंत पुत्र शुभ भरत भूप, करि यज्ञ तरे सुरमाया है ॥२७॥
सोने के कृष्ण मृग दान किये, मष्णार[1] कर्म में चौदहलाख ॥२८॥
नहिं भरततुल्य कोइ करै कर्म, नहिंकरि हैं जगमेंफैलीशाख ।२६
यवनांध्र किरात खशौशक को, दिग्विजय में म्लेच्छसंहारे हैं ।
नहिं धर्म ब्राह्मण मानै जे, बिन बिन के सबही मारे हैं ।३०।
देवों को जीत कै असुर वृन्द, देवियों को ले पाताल गये ।
भट भरत प्रतापी जीत उन्हें, देवी लाये आनन्द भये ॥३१॥

दो०–पूरै महि सब कामना, प्रजा सुखी सब काल ।
वर्ष सत्ताइश सहस लौं, कीनों राज भुवाल ॥३२॥

छं०-सुरपति समान श्रीचक्र फिरै, सब झूंठा लखिविराग लाये ।३३
थी रानी तीन सुत मार देहिं, नृप तजै हमैं मन समझाये ॥३४॥
था भरत भूप का वितथ वंश, सुतवितथ नाम सिद्धान्त लिया ।
नहिं वंश चला सुत यज्ञ करी, सुत भरद्वाज वायू ने दिया ॥३५॥
सुर गुरु से उत्पति है जिसकी, देवों की लीला न्यारी है ॥३६॥
हैं भोग भूमि सुरपुर में सुर, नर कर्मों का अधिकारी है ॥३७॥
भर भरद्वाज सुर नाम करैं, वह भरद्वाज कहलाये हैं ॥३६॥
सुत देवों के वायू लाये, दीना यह वंश चलाये हैं ॥३८॥

१ यज्ञांतस्नान

दो०–माया भगवत की कठिन, समुझ माहिं नहिं आव।
ईश्वर पद सुमिरन करो, जगत पार ह्वै जाव॥

भजन–करो नरनार हिये में ख्याल,
बड़े २ राजा पृथ्वी पर, भये अधिक विकराल।
यज्ञदान दिग्विजयकीन सब, अंत खागयो कोल॥
सुरनर कीट पतंग योनि हैं कर्म भोग बहु जाल।
नरकी योनिकर्म करने को, चलैं कुचाल सुचाल॥
फल भोगैं मरिकै चौरासी, नर्क स्वर्ग सुख हाल।
माधवराम प्रपंच त्याग कर, भजौ सदा नंदलाल॥

इति श्री० भा० भा० नवम स्कंधे विंशोऽध्यायः समाप्तः।

श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ नवम स्कंधे एक विंशोऽध्यायः॥



श्लो०–एक विंशे तु दौष्यन्तेः सुतस्यान्वय उच्यते।
रन्ति देवाजमीढादे यंत्र कीर्तिः प्रतन्यते॥१॥

दो०–भरत वंश दुष्यंत सुत, इकइश माहिं बखान।
रंतिदेव अजमीढ बहु, भूपति जहां प्रधान॥

छं०शुक उ०-नृप भरतके सुत है वितथ-तहांसुतमन्युतहांबृहत्त्रभये
तहं जय नर गर्ग तहां संकृत-तहं रंतिदेव यश बिमल किये॥२॥

भा अकाल कुछ नहिं पास रहा, आकाश [१] जीविका कुटुंबसंग॥३॥
अड़तालिश दिनयों बीतगये, नहिंलिया अन्न जलविगड़ाढंग ॥४॥
भूखे प्यासे हो कंपगात, कुछ अन्न धरा बिन द्विज आया ॥५॥
श्रद्धा से उसको अन्न दिया, जगमें हरि देखैं सुख पाया ॥६॥
फिर शूद्र मांगता मुझको दो, उसको भी श्रद्धा से दीना ॥७॥
वा गया श्वान ले आय और, कहता नृप तुम्हरे आधीना ॥८॥

दो०—दिया अन्न जल सबहि को, भूपति कीनो मान।
श्वा श्वा पति हरिमय नमो, समझि हियै भगवान ॥९॥

छं०-पानी पीने को ले बैठे, चंडाल तुरत आया तैसे।
हौं अशुभ मुझे जल ही दीजे, है दीन बचन बोला ऐसे ॥१०॥
सुनि दीन बचन उसके राजा, हियधारि दयामृदु बचन कहैं॥११॥
नहिं ईश्वर से सुख मुक्ति चहौं, दुखिया हों सुखी हम दुःखलहैं॥१२॥
श्रम भूख प्यास दीनता शोक, मोहादि से छूटै जीव सभी।
ममजल अर्पणसे यह फलहो, सब सुखी होंय नहिं दुःखकभी॥१३॥
यों कहिं प्यासों से मरै भूप, चंडाल को जल अर्पण कीना॥१४॥
यह सब परमेश्वर माया थी, फिर ब्रह्मादिक दर्शन दीना॥१५॥

दो०—सबहिं प्रणाम नृपतिकिया, मन में कुछ नहिं चाह।
वासुदेव भगवान में, ली भक्ती उत्साह ॥१६॥

छं०-हरि अर्पण मनकीना राजा, सब स्वप्न तुल्य माया छूटी।१७
भे रंतिदेव योगी तरिगे, कुलवालों की फांसी टूटी ॥१७॥

१ ईश्वर आधीन जीविका

तहं गर्ग शिनी तहं गार्ग्य भये, क्षत्री से ब्राह्मण तप करिके।
तहं कहा वीर्य से दुरित क्षय, त्र्य्यारुणि कविहरिचितधरिके।१६।
पुष्करारुणी ब्राह्मण गतिली, सुत वृहत्क्षत्र के हस्ती है।
नृप अधिक प्रताप बसाई है, हस्तिनापूर शुभ बस्ती है ॥२०॥
अजमीढ द्विमीढ औ पुरुमीढहु, हस्ती ने तीन सुत पाये हैं।
प्रियमेधादिक इनके कुलमें, वृहदिषु अजमीढ के जाये हैं ॥

दो०—वृहदिषु के हैं वृहद्धनु, वृहत्काय सुत तासु।
पुत्र जयद्रथ तहं बिशद अहैं, सेन जित जासु ॥२२॥

छं०-दृढ. हनु रुचिराश्व काश्य बत्सहु, सब सेन जितहुके हैं जाये।
रुचिराश्व के पार पृथूसेनहु, नृप नीप एक सौ सुत पाये ॥२४॥
वह शुक की कन्या कृत्वी में, सुत ब्रह्मदत्त जन्माये हैं।
शुक परमहंस कन्या कैसे, पैदा हो बनहिं सिधाये हैं ॥
कहि पुत्र २ है विकल व्यास, शुक छाया शुक दिखलाये हैं।
निज पुत्र समुझि शुक देव वही, तब व्यासदेव गृह लाये हैं ॥
छाया शुकका मुनि किया व्याह, तिसके कन्या कृत्वी जाई।
वह ब्रह्मदत्त की माता है, सम्पूर्ण कथा यह बतलाई ॥

दो०ब्रह्मदत्त योगी भये, व्याही है गवि नारि।
विष्वक सेन सुपुत्र भे, निजपितु के अनुहारि ॥२५॥

छं०—जैगी षव्यसे जाय योग सीखा, सुत उदक्स्वनहु पैदा कीना।
तिनसे भल्लाद पुत्र पैदा, वृहदिषू बंश सब कह दीना ॥२६॥
सुत द्विमीढ के हैं यवीनरहु, तिनके कृतिमान कहाये हैं।
तहं सत्य धृती दृढनेमि तहां, तिन सुपार्श्वकृत सुत पाये हैं ॥२७॥
सुत सुपार्श्व के है सुमति तहां है सन्नतिमानहु जन्म लिये।

तहं हिरण्य नाभ कृती तिनसे, छै साम संहिता गान किये ।२८।
तहं क्षेम सुवीर तहां सुपुत्र, रिपुजय धुनामहू जन्म लिया ।२९।
तहं बहुरथ तहं पुरुमीढ पुत्र, तहं नलिनी में सुतनील भया ।३०।

दो०—भया नील के शांति सुत, सो सुशांति सुत पाव ।
तहां पुरुज तहं अर्क है, तहं भर्म्याश्व गिनाव ॥३१॥

छं०—तिनके सुत पांच मुद्गलादिक, पंचाल देश कहलाये हैं ।
मुद्गल वृहदिषु औ यवीनरहु, संजय कांपिल्य गिनाये हैं ॥३२॥
मोद्गल संज्ञा भयो, विप्र गोत्र, मुद्गल कन्या सुत पाये हैं ॥३३॥
है सुता अहल्या दिवोदास, सुत ये दो नाम गिनाये हैं ।
रूपवती ज्यादा इससे, कहते ब्रह्मा ने रचन किया ॥
व्याही थी अहल्या गौतम को, तहं सतानंदजी जन्म लिया ।३४।
पुनि सत्यधृती तहं शरद्वान, उर्वशी देखि तृण बीर्यपरा ॥३५॥
कृप—कृपी पुत्र कन्या जन्मे, शंतनु शिकार मिस लाय धरा ।

दो०—बनसे शंतनु लाय दोउ, पालत हिये उछाह ।
बड़ी भई कन्या कृपिहि, द्रोणहिं कीन विवाह ॥

भजन—बहुत है चंद्रवंश विस्तार ।
थोड़े महं गिनती कर दीनी, मुख्य मुख्य निरधार ।
एक से एक प्रताप युक्त नृप, धनबल राज अपार ॥
करनी करी संग लै चलि भये, आखिर हाथ पसार ।
इनसे सीख मिलति है हमको, करलो हिये विचार ।
माधवराम श्यामभजि सतगहि, भव से बेड़ा पार ॥

इतिश्री भा० भा० सरसकाव्यनिधौ नवमस्कंधे एकविंशोऽध्यायः

श्रीमद्भागवते भाषा सरसकाव्यनिधौ नवम स्कंधे द्वाविंशोऽध्यायः

श्लो०—द्वाविंशे तु दिवादास वंशमुक्त्वाऽथवर्णिताः ।
ऋचवंशे जरासंधपार्थदुर्योधनादयः ॥ १ ॥

दो०—दिवोदास का वंश कहि, ऋचवंश विस्तार ।
जरासंध दुर्योधनहु, बाइस माहिं विचार ॥

छं० शुक उ०-हैं दिवोदासके मित्रेयू, तहं च्यवन सुदासभयेतिसके ।
तिसके सहदेव तहाँ सोमक, सौ पुत्र बृंद जन्मे इसके ॥१॥
तहं ज्येष्ठ पृषत तहं द्रुपद भये, द्रौपदी धृष्ट द्युम्नादि भये ॥२॥
सुत धृष्ट द्युम्न के धृष्ट केतु, पंचाल भूप ये कहे गये ॥
अजमीढ के हैं संवर्ण ऋच, इसको ही रवि कन्या ब्याही ॥३॥
तपती में कुरु भे कुरु क्षेत्र, रच दिया भूप बड़ उत्साही ।
सुत सुधनु जन्हु निषधाश्व लहे, सुत सुहोत्र सुधनु भूप पाये ।४।
सुत सुहोत्र के हैं च्यवन और, तहं कृती तहां वसु नृप आये ।

दो०—बसु सुत बृहद्रथहु के, उपरि चरहु बसु नाम ॥५॥
कुशांबमत्स्य प्रत्यग्र हैं, चेदिप पुत्र ललाम् ॥

छं०—सुत वृहद्रथहु के कुशाग्र इक, तहं ऋषभनामके सुत जाये ।६।
तहं सत्य हितौ तहं पुष्पवान, तहं जहु सुपुत्र नृप जन्माये ।
दूसरी रानी में दो टुकड़े, नृप वृहद्रथहु के जन्म लिये ॥७॥
माता फेकैं दिये जरा जोड़, तब जरासंध सुतनाम किये ॥८॥
सहदेव जरासंधहु के सुत, तह सोमापी तहं श्रुतश्रवा ।

सुत नहीं परीक्षित के जनमे, जन्हू के जान्हव सुरथ हुवा ॥६॥
तहं बिदूरथहु तहं सार्व भौम, तहं जयसेनहु तहं सुतराधिक ।
तहं प्रत्युत तहं क्रोधन सुत हैं, तहं देवातिथि सब सिधिसाधक १०

दो०—देवातिथि के ऋष्य तहं, दिलीप तहां प्रतीप ॥११॥
देवापी बाल्हीक अरु, शंतनु तहं कुल दीप ॥

छं०—देवापी बनगे राजि त्यागि, तब शंतनु गद्दी पाई है ।१२।
छूते हैं जीर्ण बस्तू कर से, झट से नवीन ह्वै जाई है ।१३।
शांती दिल में शंतनु है नाम, जब बारा बर्ष न जल बर्शा ।१४।
बिप्रों से पूंछे बिप्र कहैं, ली राज जेष्ठ की दुख पर्शा ॥१५॥
दी राज बड़े को वह नहिं ले, श्रुति निंदा की नालायक है ॥१६॥
बर्षाते तब सुरपति जल को, यह तो सत धर्म सहायक है ।
उत्तर में कलाप ग्राम तहां, देवापी बसि तप करते हैं ॥१७॥
कलि अंत में चंद्रवंश नाशै, शतयुग में सृष्टी धरते हैं ।

दो०—सोमदत्त वाल्हीक के, भूरिश्रवा शत जासु ॥१८॥
शंतनु के सुत भीष्मजी, गंगा माता तासु ।

छं०-सब धर्म ज्ञानियों में हैं श्रेष्ठ, हरि भक्त बीर कवि धनुधारी ।१६
जिन परशुराम को तोष किया, करि के पूरी बाणावारी ॥२०॥
शंतनु से सत्यवती में फिरि, चित्रांगद बिचित्र वीर्य भये ।
मुनि व्यास पराशर से जन्मे, उसही से प्रथम वतार लिये ।२१।
वेदों के रक्षक कृष्ण नाम, जिनसे ये भागवत हम पाये ।
पैलादि शिष्यको बेद दिये, हमैं भक्ति ग्रंथ यह सिखलाये ॥२२॥
यह गुप्त संहिता मुझे दई, उन दो भाई का हाल सुनो ।

काशी नरेश की दो कन्या, अम्बा अम्बालिका नाम गुनो ।२३।

दो०—भीष्म स्वयम्बर से हरी, विचित्र वीर्य बिवाह ।
करवायो अपना सदा, ब्रह्मचर्य निर्वाह ॥

छं०-इक मरा यक्ष्मा रोग ग्रसित, दूसरा युद्ध करि प्राण दिया ।२४।
माता आज्ञा धरि ब्यास मुनी, युक्ती से कुल निर्बाह किया ।
धृतराष्ट्र पांडु इक इकसे भये, दासी में बिदुर देह पाई ॥२५॥
सौ पुत्र ज्येष्ठ दुर्योधन जहँ, दुशला नाम कन्या जाई ॥२६॥
धृतराष्ट्र के ये सब, शाप भया, पांडु के पुत्र नहिं जन्म लिये ।
तब धर्मराज वायू औ इन्द्र, से भीम युधिष्ठर पार्थ भये ॥२७॥
कुंती सुर आवाहन का मंत्र, दुर्वासा मुनि से पाया था ।
नृपने आज्ञा दी पुत्र हेत, सुर बोलाय सुत जन्माया था ॥
नृप कहा मंत्र माद्री को दिया, अश्विनि कुमार आबाहित कर
सहदेव नकुल दो पुत्र भये, द्रौपदी पांच सुत लहे सुघर ॥२८॥

दो०—सुत प्रतिविंध युधिष्ठिर, भीम के भे श्रुत सेन ।
अर्जुन से श्रुत कीर्ति हैं, शतानीक नकुलैन ॥२९॥

छं०-श्रुत कर्मा है सहदेव पुत्र, सुत धर्म से पौरविदेव कहै ।
सुत भीमसेन से घटोत्कचहु, इक नारि हिडंबा पुत्र लहै ॥३०॥
थी भीम नारि दूसरि काली, तहं सर्व गतहु सुत जन्म लये ।
सहदेव के बिजया रानी में, सुत सुहोत्र ही उत्पन्न भये ॥३१॥
निर मित्र पुत्र नकुलहु के भये, दूसरि करेणमति रानी है ।
अर्जुन के उलूपी में जन्मे, सुत बभ्रु वाहनो ज्ञानी है ॥

पुत्रिका धर्म सेमा व्याही, नाना ने अपना राज दिया ।३२।
श्रीकृष्ण की बहिन सुभद्रा में, अभिमन्यु वीर सुत जन्म लिया ।

दो०—बीर अति रथी बिजय कर, रणमें सेना पाल ।
तासु उत्तरा नारि में, प्रगटे तुम भूपाल ॥३३॥

छं०-कुरु वंशि क्षीण लखि द्रोण पुत्र, तुम पर ब्रह्मास्त्र चलाया है ।
श्रीकृष्ण काल से बचाय कर, करि दाया तुम्हें जिलाया है ॥३४॥
जन्मेजय औ श्रुत सेन, भीम सेनहु औ उग्रसेन सुत चार ।३५।
तक्षक से मृत सुनि तुम्है भूप, जन्मेजय अहि मख करैं बिचार ३६
तुर विप्र आचार्य बनाय भूप, महि जीति अश्वमेधहू करैं ।३७।
जन्मेजय के सुत शतानीक, याज्ञवल्क से वेदत्रयी धरै ।
पुनि अस्त्र शास्त्र दें कृपा चार्य, शौनक से क्रिया ज्ञान पाये ।३८।
तहं सहसनीक तहंअशमेधज, तहंअसीम कृष्ण बिरथ आये ।३९।

दो०—नदी बहावै हस्तिपुर, बश कौशांबी मांहिं ।
तिनके होवै चित्र रथ, कबिरथ होय तहांहि ॥४०॥

छं०-तहं बृष्टिमान तहंसुषेणहैं, तहंसुनीथ तहंनृचक्षु सुखिनल ।४१।
परिप्लवतहं सुनयकेमेधावी, नृपजयतहं दूर्वस्थिमिहैं अचल ।४२।
तिमिके वृहद्रथमुदास तिसके, तहं शतानीक दुर्दमन तहां ।४३।
दुर्दमन के पुत्र वही नर है, तहं निमिं तहं क्षेमक बली महा ।४४।
यहब्रह्म क्षत्र का वंश कहा, अंतिम क्षेमक सुनौ मगधभूप ।४५।
सहदेव के मार्जारि श्रुत श्रव, तहं युतायु तहं निरमित्र अनूप ।४६।
तहं सुनक्षत्र के हैं बृहत्सेन, तहं कर्म जीत तहंसृतंजयहु ॥४७॥
तहं क्षेम के सुव्रत धर्म क्षेत्र, तहं सम के द्युमत्सेन जयहु ।४८।

दो०—तहाँ सुमति के सुवल है, तहं सुनीय सत जीत।
विश्वजीत तहं रिपुंजय, बंश वृहद्रथ गीत ॥४६॥

भजन—है चंद्र वंश नृप अति विशाल, छाये यशसुरपुरुहु पताल।
इक इकसे धन बल चंड तेज, जाहिर भे जगमें प्रजापाल॥
मित्रनकोशशिसम अमृतसींच, शत्रु नाशैंरणमनहुकाल।
लै जन्म किये बहु यज्ञदान, याचक धन दै कीने निहाल॥
नर नारि निहारौ चले गये, गलधारे अपने जगत जाल।
माधोराम पारजोचहौं मोह, दिनरातिभजौ हियनंदलाल॥

इतिश्री भा० भा० सरसकाव्यनिधौ नवम स्कंधे द्वाविंशोऽध्यायः

श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्य निधौ नवम स्कंधे त्रयो विंशोऽध्यायः

श्लो०—त्रयोविंशेत्वनो र्द्रुह्योस्तुर्वसोश्चान्वयः क्रमात।
यदोश्च बंशोऽनुक्रान्तो, यावज्यामघ सम्भवः ॥१॥

दो०—तेइस में अनु द्रुह्यु औ तुवसु यदु को वंश।
ज्यामघ नृप के जन्म लौ, बरणौ मुनि अवतंश॥

छं० श्री-शुक्र०-अनु नृपके सभा नर चक्षु पुत्र, अरुपरोक्ष तीनहु भूपभये
भेसभानरहुके काल नरौ, तिसके सृंजय सुत शील नये ॥१॥
तिसके जन्मेजय तिसके दो, उशिनरति तिक्षु सुतजाये हैं।
है महाशील औ उदार चित, भूमंडल में यश छाये हैं ॥२॥
शिवि वन शमि दक्षि चारि सुतये, सुंतउसीशी नरहु नृप पाये हैं।
वृषदर्भ सुवीरभद्र सबही, केकय नृप पुत्र कहाये हैं ॥३॥

शिविके सुत चार तितुच्च तहां, रुशद्रथहु हेमके सुतप बली ।४।
अंगहू बंग कालिंग सुह्म, पुंड्रीधू पुत्र बलिके असली ॥५॥
निज नाम के देश बसाये हैं, पूरब में अंग पुत्र खन पान ॥६॥
तहु दिविरथ पुत्र धर्मरथ हैं, सुत चित्ररथ रोम पाद सोइ जान ।७।

दो०—दशरथ सखा सुताहु निज, शांता गुण की खानि ।
भयो अवर्षण शृंगरिषि, व्याही वर्षा ठानि ॥८॥

छं०-हरणीसुत शृंगी ऋषि बन में, रहते नारी बश कर लाई।
ये महिमा नारी मायाकी, नृप दशरथ मख मुनि करवाई ॥९॥
रामादिकपुत्र पाये हैं चार, चतुरंग है रोमपाद के सुत ॥१०॥
तिसके पृथुलाच्च तहां वृहद्रथ, बृहद्भानु बृहत्कर्मा अद्भुत ।
वृहद्रथ के वृहन्मना जाये, इसके सुत जयद्रथहु कहते ॥११॥
तहं विजय के धृत के धृतब्रत भे, तहं सत्कर्मा अधिरत लहते॥१२॥
पाई मंजूषा गंगातट, तहं कर्ण बंश नहिं पुत्र किया ।
बृषसेन कर्ण के द्रह्यु बंश, कहने कों मुनी बिचार लिया ॥१३॥

दो०—पुत्र द्रह्यु का बभ्रु है, पुत्र सेतु है जासु ॥१४॥
गांधार आरब्ध के, धर्म पुत्र है तासु ।

छं०-तहं धृतके दुर्मन प्रचेत सुत, तहंप्राचेतससो सुत जाये ॥१५॥
उत्तर दिशि म्लेच्छों के राजा, यह द्रुह्यवंश लघु में गाये॥१६॥
तुर्वसु के बन्हि तहं भर्ग भये, तहं भानुमान के त्रिभानु है ।
तहं पुत्र करंधम तहंमरुत्त, सुतरहित पूरुबंशी मान है ।१७॥
दुष्यंत पुत्र भरतहिसे वंश, अब ज्येष्ठ पुत्र यदुवंश सुनो ॥१८॥

यदुवंश सुने छुट जाय पाप, सब पाप हरण हरि जन्म गुनो॥१९॥
जहं परमात्मा हरि प्रगट भये, यदु के सहस्त्रजित कोष्ट्र नल॥२०॥
रिपु चार पुत्र फिर प्रथमके सुत, शतजित तिनकेसुत तीनप्रबल॥२१

दो०—महाहयौ अरु बेणुहय, हैहय के सुत धर्म।
तहां नेत्र कुंती तहां, सुतसोहं जी शर्म॥२२॥

छं०-तहं महिष्मानके भद्रसेन, तहं दुर्मद के सुत धन क अहैं॥
कृत वीर्य कृताग्नी कृतवर्मा, कृत औजा घन के पुत्र कहैं॥२३॥
कृत वीर्य के अर्जुन दीपेश्वर, दत्तात्रेयी से सिद्धि लही॥२४॥
मख योग दान तप बल जप से, अर्जुनसे न भूपति कीर्तिगही॥२५
पचाशी सहस राजकीना, नहिं बल धन कम सब भोग लहे।
सुत सहस में केवल पांच बचे, सब परशुराम के कोप दहे॥२६॥
जयध्वज बल शूरसेन वृषमहु, मधुऊर्जित पांचयही गाये॥२७॥
जयध्वज के ताल जंघ तहं सौ, सब तेज और्व मुनि से पाये॥२८॥

दो०—वीति होत्र तहं जेष्ठ है मधु के वृष्णी जान।
तिस के सौ सुत जन्मले, वृष्णि जेष्ठ पहिचान॥२८॥

छं०-माधव बृष्णी यादव संज्ञा, यदु पुत्र क्रोष्ट के बृजिनिवान॥२९
तहं श्वाहिके पुत्र रुशेकु तहां, शशविंदु चित्ररथके सुत मान॥३०
तहं महा भोज योगी सुत भे, जो चक्रवर्ति अपराजित है।३१।
हैं चौदह रत्न पास जिसके, गज वाजि रथ स्त्री शरमित है।
निधिमाल्य वस्त्र तरुशक्तिपाश, मणिछत्र विमान ये चौदह रत्न३२
दश सहस नारि में लक्ष लक्ष, इक इकमें सुत भये बिना यत्न।

T

छ प्रधान तहं है पृथु श्रवस, के पुत्र धर्म हयं मेध करें ॥३३॥
करवाई शुक्राचार्य तासु सुत, रुचक तहां सुत पांच धरें ॥३४॥

दो०—पुरु जित रुक्म रुक्मइषु, पृथु औ ज्या मघ नाम ।
ज्यामघ के सुतमहिं भया, नृप कीन्हा यह काम ॥३५॥

छं० इक जगह स्वयंबर से कन्या, ज्यामघ राजा हर लाये हैं ।
पहली रानी निज सौत देखि, नृपको रिस बचन सुनाये हैं ॥३६॥
हे कामी रथमें लाया किसे, नृप डरके कहै सुत बधू तेरी ।
वह कहै मैं वंध्या सौत नहीं, सुत नहीं है कैसे वहू मेरी ॥३७॥
कहते राजा जो होय पुत्र, उसके संग इसका ब्याह करें ।
पितृ विश्वेदेव मनाये नृप, तब शैंव्या रानी गर्भ धरै ३८ ॥३८॥

दो०—समय पाय कै पुत्र भा, विदर्भ जाको नाम ।
बड़ा भया ब्याही गई, रानी सीझा काम ॥३९॥

भजन—जगत में बहुत वंश विस्तार ।
एक एक से पैदा होवैं, वढै बहुत परिवार ॥
औषधि वृक्ष समान पीछले वृद्ध होय पुनि छार ।
करनी संग बांधि सब चलिभे आखिर हाथ पसार ॥
पड़ा रहा सब यहीं साथ में, नहिं लैगे शिरधार ।
माधवराम श्याम पद भजिले, यही जगत में सार ॥

॥ इति श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ त्रयोविंशोऽध्यायः ॥





श्री कृष्णचन्द्रायनमः

कानपुर निवासी लाला देवकीनंदन जी के पुत्र
श्यामलाल जी खत्री (मेहरे ढाईघर)
की धर्म पत्नी, लाला जगतनारायण जी की कन्या

श्रीमती मुन्नी बाई जी

ने

नवम स्कंध की छपाई में यथा शक्ति धन व्यय से
सहायता की।

ईस्टर्न प्रेस, कानपुर।

T

श्रीमद्भागवते भाषा सरस काव्यनिधौ नवम स्कंधे चतुर्विंशोऽध्यायः ॥

श्लो०—चतुर्विंशे विदर्भस्य पुत्रत्रयसमुद्भवाः ।
वंशा नाना मुखाः प्रोक्ता रामकृष्णोद्भवावधि॥१॥

दो०—विदर्भ कुल चौवीस में, तीन पुत्र हैं जासु ।
रामकृष्ण के जन्मलौं, नाना बंश विकास ॥

छं० श्रीशुक उ०-कुश क्रथ विदर्भ के पुत्र भये-तीसरे रोमपादहुराजा ।
सुत रोमपाद के वभ्रु तहां कृति तहां उशिक भे महराजा ॥२॥
तहं चैद्यादिक सुत जन्म लिये, क्रथ के कुंती तहं धृष्टि भये ।
तहं निबृत्ति तहां दशार्ह व्योम, तिसके जीमूतहु पुत्र नये ॥३॥
तहं विकृति के भीमरथौ सुतये, तिसके नवरथ तहं दशरथ है ॥४॥
तहं करंभ शकुनी के है पुत्र, तहं देवरात सुंदर गथ है ।
तहं देवक्षत्र के मधु सुत हैं, कुरु बंशौ में अनु जाये हैं ॥५॥
अनु के पुर होत्र तहां आयू, तहं सात्वत पुत्र कहाये हैं ।

दो०—भजि भज मान दिव्य औ, बृष्णि देववृध नाम ।
अंधक सुत सात्वत अहैं, महाभोज परिणाम॥६॥

छं०-भजमान के निम्लोची सुत हैं, किंकिण धृष्टी भी पाये है ।
सात्वत के सात पुत्र सबमिलि जिनसे बहु बंश गिनाये है ॥७॥
इक में यह दूसरि में हैं तीन, शतजित सहस्रजित अयुताजित॥८॥
देवावृध पुत्र भये बभ्रू, कीरति छाई है जासु अमित ॥९॥
देवो के तुल्य बभ्रू है श्रेष्ठ, पैसठ हजार को मुक्त किया ॥१०॥

उपदेश पाय मुक्ती पाई, तहं महाभोज सुत जन्म लिया ॥११॥
वृष्णी के पुत्र सुमित्र युधाजित तहांशिनी दूसर अनमित्र ।१२।
अन मित्रके निम्न तहां दो सुत, सत्राजित और प्रसेन विचित्र ।

दो०—दूसर सुत अनमित्र के, शिनि है लीजै मान ।
तहं सत्यक के सात्य की, तहं जय तहं कुणि जान ॥१३॥

छं०-अनमित्रके वृष्णि और सुतहै, सुतकुणिकके नामयुगंधर है १४
तिसके श्वफल्क औ चित्ररथहु, गांदिनी नारि श्वफल्क घर है ।
अक्रूर सहित बारा लड़के, आसंग सारमेयहू मृदुर ॥१५॥
मृदुवितगिर धर्मवृद्ध चेत्रहु, सुत अहै सुकर्मा उपेक्षकुर ॥१६॥
अरिमर्दन औ शत्रुघ्न गंधमादहु, प्रतिबाहु गिनाये हैं ।
है वहिन सुचीरा इन सब की, अक्रूर के दो सुत जाये हैं ॥१७॥
हैं देव वान उपदेव चित्र रथ के, पृथु विदूरथहु जानौ ॥१८॥
है वृष्णि पुत्र कंवल वहीं, कुक्कुर भजमान शुची मानौ ।

दो०—कुक्कुर के सुत बन्हि है, पुत्र विलोमा तासु ।
कपोतरोमा तासु अनु, तुंबरु साथी जासु ॥१९॥

छं०-अनु के अंधक दुंदुभी तहां, दरिद्योत के पुनर्वसू सुत है॥२०॥
तिसके आहुक आहुकी सुता, देवक उग्र सेनहु अद्भुत है ॥२१॥
उपदेव सुदेव औ देववान, देवहु वर्धन औ भगनी सात ।
धृत देवा देवरक्षिता श्री, देवा उपदेवा है विख्यात ॥२२॥
सह देवा देवरक्षिता औ, देवकी सबै बसुदेव लहीं ॥२३॥
भे उग्रसेन के कंस कंक, न्यग्रोध सुनाम औ शंकु सही ।

सुहू राष्ट्रपाल औ तुष्टिमान, सुत सृष्टि शूरभू सुता भई ॥२४॥
कंसा कंका औ कंसवती, औ राष्ट्रपलिका नाम लई ॥२५॥

दो०--सब ब्याही बसुदेव के, भाई की है नारि।
शूर विदूरथ के भये, कुल भजमान बिचारि ॥२६॥

छं०--शिनि तहां पुत्र हैं स्वयंभोज, तहं हृदीक तीन पुत्र इसके।
शतधनु कृतवर्मा देव वाहु, नृप शूर मारिषा तिय जिसके ॥२७॥
तिसमें दश पुत्र पवित्र भये, बसुदेव देव भागहू गुनो ॥२८॥
देव श्रव आनक सृजय हैं, श्यामक शमीक बृक बत्ससुना॥
सुत कंक, दुंदुभी बजी स्वर्ग, आनक दुंदुभि बसुदेव कहे ॥२९॥
श्रुतदेवा पृथा औ श्रुतिकीर्ती, राजाधिदेवि श्रुतश्रवालहे ॥३०॥
ये पांच बहिन नृप शूर मित्र, नृप कुंत पुत्र नहिं शोक बड़ा।
नृप शूर को सुता पृथा दीनी, इससे कुंती भी नाम पड़ा ॥३१॥

दो०--दुर्वासा मुनि सेइ कै, प्रसन्न भे हरषाय।
विद्या सुर आवाहनी, दीनी ताहि बताय ॥३२॥

छं०-वह मंत्र परीक्षा लेने को, आवाहन सूरज का लीना।
आये लखि विस्मित जाहु देव, अपराध क्षमहु यह कह दीना ॥३३॥
नहिं निःफल दर्शन है मेरा, रवि कहैं पुत्रदें दोष न हो ॥३४॥
लै गर्भ शीघ्र ही पुत्र भया, तज दिया नदी में जात बहो ॥३५॥
पांडु ने बिवाहा कुंती को, श्रुत देवा कारूषहिं व्याही ॥३६॥
ऋषि शापसे विजय हिरण्याक्षहु, अब दंत वक्रभा उत्साही ॥३७॥
श्रुति कीर्ति धृष्टकेतू व्याही, संतर्दन आदि पुत्र पाये।
राजाधि देवि जय सेन लई, विंदानुविंद दो सुत जाये ॥३८॥

दो०—श्रुतीश्रवा दम घोषली, तहां भया शिशुपाल ॥३६॥
कंसा देव भागली, चित्र केतु (वृहत) बल बाल ॥४०॥

छं०-देव श्रव कंसवती व्याही, इषुमान सुबीर पुत्र इनके।
कंका आनक से पुरु जितभे, औ सत्य जितहु भाई तिनके ॥४१॥
भै राष्ट्रपालि सृंजय रानी, वृषदुर्मर्षण बहु सुत पाये।
हरि केश हिरण्याक्षहु सुत दो, श्यामकहु शूर भूमी जाये ।४२।
तिय मिश्रकेशि बत्सक पाई, वृक आदिक सुत उपजाये हैं।
दुर्वाक्षी में वृक भूपतक्ष, पुष्कर शालादिक पाये हैं ॥४३॥

दो०—शमीक भूप सुदामिनी, सुमित्र अर्जुनपाल।
कंक कर्णिका मांहि ऋत, धाम जयहु दो बाल ॥४४॥

छं०-आनक दुंदुभि बसुदेव नारि, पौरवी रोहिणी भद्रा हैं।
मदिरा रोचना इला सतवीं, देवकी है सुता सुभद्रा है ॥४५॥
वलगद सारण ध्रुव विपुल द्रुमद, बसुदेव रोहिणी उपजाये ।४६।
द्रुमंद सुभद्र औ भद्रबाह, सुत भद्र पौरवी कहलाये ॥४७॥
उप नंद नंद औ कृतक शूर, मदिरा रानी के सुत गाये।
भद्रा ने केशी एक पुत्र, वसुदेव प्राण पतिसे पाये ॥४८॥
रोचना में हस्तहेमांगदादि, अरु इला में यदु उर बल्कादि ।४६।
धृत देवा में बिपृष्ठ सुतहै, शांतीदेवा श्रम प्रतिश्रुतादि ॥५०॥

दो०—उपदेवा में पुत्र दश, कल्प बर्षादि प्रमान।
श्री देवा षट सुतलहे, बसु हंसादि कमान ॥५१॥

छं०-सुतदेव रक्षिता गदादि नव, सहदेवा में सुत आठ भये ।५२।

पुर विश्रुतादि जिमि धर्म वसू, देवकी में आठ पुत्र सुनिये।५३।
सुत कीर्तिमान सुषेण भद्रहु भद्रहूसेन ऋजु संमर्दन।
बलदेव शेष संकर्षण हैं, आठवें कृष्ण हरि कुलनंदन ॥५४॥
भै बहिन सुभद्रा तव दादी, रोहिणी में यह जन्माई है।
हरिवंश में कथा साफ गाई, इस कारण यहां जनाई है॥५५॥
जब अधर्म वृद्धी धर्म हानि, पापी महि पर बढ़ जाते हैं।
भगवान स्वयं अवतार धारि, भक्तों रक्षाहित आते हैं॥५६॥

दो०-जन्म कर्म का हेतु नहिं, ईश्वर रहित बिकार।
माया से लीला करैं, महिमा अपरंपार ॥५७॥

छं०-हरि माया से जग बनै पलै, नाशै हरि दया जो गति चाहै।५८।
क्षोहिनी पाल नृप रूप असुर, भूभार नाश हित उत्साहैं।५९।
नहिं कर्म गिन सकैं लोकपाल, बलदेव सहित हरि जो कीन्हे।६०।
कलि युगियों के हरैं पाप दोष, भक्तोंकी पुण्य बढ़ यश लीन्हे।६१।
यशविमल तीर्थजल श्रुतिअंजुलि, करिपियै कर्मबासनानशैं।६२।
मधुभोज वृष्णि अंधक दशार्ह, कुरुसृंजय गावहिंजासुयशैं।६३।
मोहिनी दृष्टि, बाणी उदार माधुरी मूर्ति, जग मोहन कर।६४।
शिरकीट मकरकुंडलकपोल, लखि पलकलगै विधिपैरिसभर।६५।
पितृगृह प्रगटे ब्रजमांहिं बढ़े, हनि शत्रु सबै लीला कारी।
निज बेद मार्ग से मख कराय, सब जनों में बेद प्रथा धारी।६६।

दो०-कराय भारत भार हरि, जग जय यश फैलाय।
उद्धव जीको ज्ञान दै, स्वधाम पहुंचे जाय ॥६७॥

भजन—कह्यो रवि शशि कुलको विस्तार ।
राम प्रगट भे सूर्य बंशमें, कीन्हे चरित अपार ॥
चंद्र वंशमें कृष्ण प्रगट भे, हरि लीना महिभार ।
एक से एक भूप दुइ कुलमें, बड़ा जासु परिवार ॥
काल कठिन बलवान जगत में, करि दीने सब छार ।
पढ़ि सुनिकै यश विमल सबहिंके, शिक्षा लीजै धार ॥
माधवराम स्वप्न सी दुनियां, हरिभजु बेड़ा पार ।

इतिश्री भा० भा० सरसकाव्यनिधौ नवमस्कंधेचतुर्विंशोऽध्यायः समाप्तोऽयं नवम स्कन्धः ।



T

T

